# सूचीपत्रम् ।

## अ


| | पृ० | श्लो० |
|---|---|---|
| अकार्यकारणद्रव्य | ११० | १४ |
| अखण्डार्थपरं वाक्यं | १०९ | १२ |
| अखण्डार्थं द्विधा तत्र | १०७ | ३ |
| अगृहीत्वैव सम्बन्ध- | १४३ | २९ |
| अङ्गं स्यात्तत्र निर्णीतो | २१८ | ६५ |
| अचिन्त्यं शब्दसामर्थ्यं | २७ | ८५ |
| अतत्त्वावेदकत्वेऽपि | ९३ | १६ |
| अतात्त्विकोनिषेधोऽपि | ६ | १० |
| अतो न तुच्छतापत्तिः | ६ | १२ |
| अतोऽनुमानशब्दाभ्यां | २६ | ८१ |
| अतोऽस्वबाधकत्वेन | २७ | ८७ |
| अतोवृत्तेः पुरा दृश्या- | ४२ | ३[illegible] |
| अतोऽन्तःकरणाध्यासात् | ८७ | ८९ |
| अतो वाच्यार्थवैशिष्ट्ये- | १११ | १[illegible] |
| अतो नैवोत्तरार्द्धे ऽपि | १७[illegible] | ४० |
| अतोऽन्यदार्तं नेतीतिं | १९१ | ७२ |
| अतस्तत्र श्रुतेरस्ति | ३५ | १७ |
| अतः सत्यामविद्यायां | ४६ | ५६ |
| अतः काल्पनिको भेदः | १६८ | ३ |
| अस्तु वाऽस्वप्रकाशत्वं | १२ | ३५ |
| अस्ति प्रतीयमानत्वं | १५ | ४[illegible] |
| अस्ति वेदान्ततात्पर्य- | २०७ | १९ |
| अत्यन्तासत्यपि ज्ञान- | २७ | ८६ |
| अत्राऽन्विताभिधानेऽपि | [illegible] | ८४ |
| अर्थावच्छिन्नमेवा ऽस्ति | ४[illegible] | ३३ |
| अथ योऽन्यामिति श्रुत्या | १३४ | २ |
| अर्थज्ञानार्थकत्वे ऽप्य | २११ | ३८ |
| अर्थक्रियासमर्थत्व- | २३२ | ४८ |
| अर्थोपलक्षितं भान | १३ | ३९ |
| अद्वैतसिद्धिसिद्धान्तान् | २ | २ |
| अद्वैतं श्रुतितात्पर्यं | ३ | ५ |
| अद्वैतसिद्धिपरिशीलनतो | २०० | २ |
| अद्वैतपरवेदान्ता | २७ | ८९ |
| अद्वैतैकपरत्वान्न | ६६ | २५ |
| अद्वैतसिद्धिसिद्धान्त- | २४० | ७३ |
| अधिष्ठानापरोक्षत्वं | ५० | ६९ |
| अध्यस्तग्राहि प्रत्यक्षं | २६ | ८४ |
| अध्यस्तत्वादविद्यायाः | ५० | ६८ |
| अध्यस्तेऽपीन्द्रजालादा- | ५३ | ७८ |
| अध्यस्तत्वेऽपि द्वैरूप्य- | १०० | ४४ |
| अध्यासे स्यादिदं रूप्यम् | ३६ | २० |
| अध्यासे वाऽथ बाधायां | ३६ | २१ |
| अनन्यशेषमिथ्यात्व- | ३८ | २७ |


DR.RUPNATHJI (DR.RUPAK NATH
www.astrology-tantra.com

| | | |
|---|---|---|
| अनन्तत्वादिरद्वैत- | १३८ | १३ |
| अनादित्वेन चाऽविद्या- | ४९ | ६७ |
| अनादिभावरूपैक- | ७० | ३४ |
| अनादिमायया सुप्तो | ६६ | २६ |
| अनाद्यभावभिन्नत्वं | ७४ | ५१ |
| अनाद्युपाधिनाऽनादि | १९७ | ९२ |
| अनिर्वाच्यतया भेदो | १६५ | ९५ |
| अनुसन्धातृनाऽपीष्टा | १७६ | २८ |
| अनेकाऽज्ञानपक्षे तु | ४७ | ५९ |
| अनेकशक्तिका ऽविद्या | २३२ | ४७ |
| अन्यशेषममुख्यार्थं | २२ | ६४ |
| अन्यथाऽनन्तनियम- | ५८ | ९९ |
| अन्वितं कारणत्वं स्यात् | ७१ | ३७ |
| अन्वयव्यतिरेकाभ्यां | १०० | ४२ |
| अन्यशेषतया तेषां | १२७ | ७[illegible] |
| अन्यशेषतया मिथ्या- | ३८ | [illegible] |
| अन्यशेषतया नास्ति | १३[illegible] | ९९ |
| अन्यदेवेति गी श्रौती | २३९ | [illegible] |
| अन्तरित्यादिसूत्रेषु | [illegible] | २२ |
| अन्तर्भावात्तदानन्दे | २[illegible] | ६७ |
| अन्तर्याम्यमृतोह्येष | १९२ | ७३ |
| अन्त्यज्ञानस्य नाशेऽपि | २२५ | २४ |
| अपवादाऽपवादा- | २४ | ७४ |
| अपरब्रह्मविषया | १२८ | ८२ |
| अपरोक्षेऽपि षड्जादौ | २०४ | १३ |
| अपरोक्षा [illegible] हेता- | २१४ | ४७ |
| अपरो[illegible]भ्रमाभास | २३२ | ४९ |
| अप्रमेये ऽनुमानस्य | १७३ | १७ |
| अप्रसिद्धाविशेषत्वा | १७२ | १४ |
| अप्रसिद्धविशेषत्वा | १७३ | १९ |
| अप्रत्यक्षतयेशस्य | २७० | १० |
| अप्रामाण्यप्रसङ्गे ऽपि | ३८ | २५ |

| | | |
|---|---|---|
| अबाधितास्पदत्त्वेन | ६७ | २८ |
| अबाधितत्वं सन्दिग्धं | ३५ | १५ |
| अबाध्यत्वं हि वा सत्त्वं | ९४ | [illegible]७ |
| अबाध्यत्वं स्वकालेऽस्त्य- | १[illegible]३ | ५७ |
| अभान्मिथ्यैव रजतं | [illegible] | ६ |
| अभ्रान्तत्वादयो धर्मा | १७२ | १५ |
| अभेदेऽपि धियांवृत्ति- | १११ | २० |
| अभेदे भेदमारोप्य | १६६ | ९७ |
| अमुख्यार्थं तथा ऽन्यार्थं- | २२ | ६६ |
| अल्पमप्यन्तरं कुर्वन् | १९३ | ७६ |
| अवस्थाभेदाभिन्नवा- | ४७ | ५८ |
| अवच्छेदांशमादाय | ७८ | ६७ |
| अव्याख्याशब्दमस्पर्शो | १६२ | ८५ |
| अविद्योपाधिको जीवः | ४६ | ५१ |
| अविद्यायोनयोभावाः | ६५ | १८ |
| अविद्योपाधिकं सुप्तौ | ८३ | ८० |
| अविद्यायां तदध्यस्ते | ८८ | ९३ |
| अविद्यातत्कृतं बन्ध- | १०५ | ३६० |
| अविशिष्टमपर्याया- | १०८ | ९ |
| अविद्यासिद्धसाक्षित्वा- | १३३ | ९८ |
| अविद्याविनिवृत्तिश्च | १६७ | ९९ |
| अविद्याध्वस्तिमोक्षस्य | १७५ | २४ |
| अविद्यात्मकबन्धस्य | १७६ | २७ |
| अविद्यादिनिवृत्त्यात्म- | २१७ | ६४ |
| अविद्यास्तमयोमोक्षो | २२८ | २७ |
| अविद्यायां विनष्टायां | २२९ | ३४ |
| अविद्याध्वस्तिरप्येका | २३७ | ६२ |
| अवेद्यत्वे ऽपरोक्षैक | १३ | ३७ |
| असद्विलक्षणं विश्व | २९ | ९५ |
| असम्भावितदोषस्या- | १९ | ५५ |
| असन्दिग्धाविपर्यस्त- | १४३ | २८ |
| असदेवमभाद्रूप्य- | ९७ | ३२ |


DR.RUPAK NATH JI
www.astrology-tantra.com

| | | |
|---|---|---|
| असत्त्वं निःस्वरूपत्वं | ९५ | २३ |
| असत्या अपि धीवृत्तेः | २२४ | १७ |
| अस्वव्याघातकैरेवं | १६९ | ७ |
| अस्य द्वैतेन्द्रजालस्य | १४९ | ४८ |
| अहमर्थगतस्यैव | २२८ | २८ |
| अहङ्कारोऽस्त्यविद्योत्थो | ८२ | ७८ |
| अज्ञानस्य स्वकार्येण | ८ | १८ |
| अज्ञातत्त्वादिभेदेन | ३५ | १२ |
| अज्ञातत्त्वं मतं माना- | ३५ | १४ |
| अज्ञानसाधकत्वात्त- | ४३ | ४१ |
| अज्ञानध्वंसिबोधस्य | ५९ | २०० |
| अज्ञानाच्छुद्धचिद्धातो. | ६८ | ३० |
| अज्ञानस्य जगद्धेतोः | ६४ | १७ |
| अज्ञानभ्रमयोर्भाव- | ७० | ३६ |
| अज्ञानानाश्रयत्वे ऽप्य | ७२ | ४[illegible] |
| अज्ञाने भावरूपे ऽस्मिन् | ७३ | ४[illegible] |
| अज्ञानानाश्रयत्वेपि | ७७ | ६३ |

## आ

| | | |
|---|---|---|
| आनन्दैकरसं ब्रह्म | १०[illegible] | १ |
| आनन्दाद्यात्मना तस्य- | ४९ | ६४ |
| आनन्दादेस्तु नित्यत्वात् | १२८ | ८० |
| आनन्दाद्या इति [illegible]यं | १३४ | ३ |
| आपातदर्शनं तस्मात् | ११७ | ३७ |
| आपातदर्शनं तत्र | २११ | ३९ |
| आभ[illegible] नाप्येषां | १७ | ४८ |
| आ[illegible]रोपिता बुद्धिः | १९९ | ९६ |
| आत्मैवेदमिति श्रौतं | १३३ | ९६ |
| आत्मैक्यज्ञानबाध्यं तत् | ५१ | ७४ |
| आत्मनः स्वप्रकाशत्वं | १५९ | ७४ |
| आत्मैवास्य यतोज्योतिः | १५९ | ७५ |
| आरोपितगुणादेस्तु | १६३ | ८९ |

## इ

| | | |
|---|---|---|
| इति सिद्धान्तसारे श्री- | १०[illegible] | १ |
| इति सिद्धान्तसारे श्री- | २१८ | ६[illegible] |
| इन्द्रियद्वारतश्चित्तं | ४[illegible] | ५० |
| इन्द्रो मायाभिरीयेत | २[illegible]२ | ४५ |
| इदं रूप्यमिति ज्ञानं | १०० | ४५ |
| इहत्वेकतरस्यास्ति | १३१ | ९२ |

## ई

| | | |
|---|---|---|
| ईश्वरस्तु सदावाप्त- | १२८ | ७८ |

## उ

| | | |
|---|---|---|
| उपक्रमोपसंहृत्यो | ३५ | १३ |
| उपपादनमेतेषां | ४६ | ५५ |
| उपलक्ष्यस्वरूपस्या | २२० | ७ |
| उपाधेः कल्पितत्वेन | १७५ | २५ |
| उपाधेः प्रतिबिम्बैक- | ७६ | ५९ |
| उपाधिभेदभिन्नोऽर्थो | १२६ | ७० |
| उपासनादिसंसिद्ध्यै | १४७ | ४० |
| उभयात्मत्विकत्वं ना | ८९ | ३०० |
| उभयावधिराहित्यं | १४८ | ४३ |
| उपास्यतत्त्वसिद्ध्यै वा | १४५ | ३५ |
| उपास्तिविषयत्वे ऽपि | १३५ | ४ |
| उभयोरप्यनादित्वा | ८१ | ७५ |

## ए

| | | |
|---|---|---|
| एकस्मिन्नपि चैतन्ये | ६६ | २४ |
| एकधैवेति वेदान्तः | ३७ | २३ |
| एकधैवानु द्रष्टव्य | ११४ | २८ |
| एकमेवाद्वितीयं स | ५४ | ८५ |
| एकजीवमते सर्वो- | १७६ | ३१ |


DR.RUPAK NATH
RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

| | | |
|---|---|---|
| एक एव हि भूतात्मा | १९३ | ७८ |
| एकत्वभेदाभावादेः | ११५ | ३१ |
| एकविज्ञानतःसर्वे- | १५२ | ५७ |
| एवमानन्दभिन्नत्व- | १३ | ४० |
| एवमन्येऽपि मिथ्यात्वे | ३३ | ७ |
| एवमेकैकशब्दस्या | १२३ | ५७ |
| एवमन्यत्र वेदान्ते | १९० | ६६ |
| एवं च तत्त्वमस्यादि- | १२५ | ६६ |
| एवं च सत्यनिर्वाच्य- | ९५ | २२ |
| एवं प्रत्यक्षतः प्राप्त- | १७० | ९ |
| एवं जडेशभेदेऽपि | १७७ | ३३ |
| एवं जडानामन्योन्य | १७८ | ३६ |
| एवं नक्तहान्याद्या | २०० | ९९ |
| एवं तत्त्वमसीत्यस्य | १२६ | ६९ |
| एवं व्यवस्थिते ब्रह्म- | २०१ | [illegible] |
| एवं समाहितं सम्यक्प- | १२३ | [illegible] |
| एतत्त्रयनिषेधेन | ५७ | ९५ |
| एषोऽणुरितिवेदान्ते | १९८ | [illegible] |

**ऐ**

| | | |
|---|---|---|
| ऐन्द्रजालिकवन्नेशे | [illegible] | ९७ |
| ऐक्यमात्मस्वरूपं [illegible] | १८३ | ५१ |
| ऐक्यस्य निरो[illegible]त्वे | १६८ | २ |

**औ**

| | | |
|---|---|---|
| औष्ण्यवह्नि[illegible]तोग्राह्यं | २५ | ७७ |
| औपा[illegible]कगुणोक्त्यापि | १३० | ८८ |

**क**

| | | |
|---|---|---|
| [illegible]टवद्वेष्टनाद्वाऽप | ४७ | ५७ |
| कल्पकोनिश्चिताद्वैतो | ६८ | २९ |
| कल्पितानां हि सामान्य- | ४८ | ६२ |
| कल्पितोधर्मभेदोस्ति | १६१ | ५ |
| कल्पितत्वेऽपि शास्त्रस्या | ६७ | २७ |
| कर्तृत्वमात्मनो नास्ति | ८५ | [illegible] |
| काण्डद्वये ततः कोऽपि | २११ | ३७ |
| किञ्च ज्ञानविरोधित्वं | [illegible] | ५० |
| किन्तु काल्पनिकं भे[illegible] | [illegible] | ४२ |
| केवलो निर्गुणश्चे[illegible] | ११४ | २९ |
| क्वचित्प्रतीत्यन[illegible]त्व | ६ | ११ |
| कृतिसाध्यत्व[illegible]स्य | २१२ | ४२ |

**ख**

| | | |
|---|---|---|
| ख्यातिबा[illegible]ान्यथापत्ति | ९२ | १२ |
| [illegible]तिबा[illegible]ान्यथासिद्ध्या | ९५ | १२ |
| ख्या[illegible]तबाधान्यथासिद्ध्या | ९२ | ११ |
| [illegible]ातिबाधान्यथासिद्धि | ९२ | १२ |

**ग**

| | | |
|---|---|---|
| गान्धर्वशास्त्रे षड्जादि | २०४ | १२ |

**घ**

| | | |
|---|---|---|
| घटाद्याःस्वानुगस्फूर्ति | १५ | ४४ |
| घटादीनां मिथोभेदो | १६४ | ९१ |
| घटादेः कल्पितस्यैव | १५१ | ५४ |

**च**

| | | |
|---|---|---|
| चन्द्रे प्रादेशप्रत्यक्षं | १९ | ५४ |
| चाक्षुषेदंमनोवृत्त्य- | १०१ | ४७ |
| चित्तस्यैकाग्रताद्वारा | २०२ | ५ |
| चितोऽपि वृत्त्यवच्छेदा- | ७७ | ६१ |
| चितोऽज्ञानाश्रयत्वेऽपि | ७७ | ६२ |
| चितोविवर्ताधिष्ठान- | १४९ | ४७ |
| चिदन्यस्तत्वमिथ्यात्वे | २९ | ९४ |


DR. RUPAK NATH JI (DR. RUPAK NATH)
www.astrology-tantra.com

चिद्‍व्यस्तया सर्वं ४४ ४८
चिदचिद्ग्रन्थिरूपत्वा ८६ ८७
चिदानन्दस्वरूपस्य १४६ ३७
चिन्मात्रं विषयोऽस्त्यस्या ८० ७२
चिन्मात्राज्जायते सर्वं ८४ ८२
चेतनश्चेतनानां य १७९ ४१
चैतन्यविषयत्वं वा ११ ३१
चैतन्याविषयत्वं वा १५६ ६८
चैतन्यं स्यादधिष्ठान १०२ ५२
चैतन्ये कल्पिताः सर्वे १६७ १

## ज

जनिकर्तुर्यतोवेति १५२ ५५
जडत्वाच्छुद्धधीवृत्तेः २२५ २२
जडत्वमपि हेतु. स्या १३ ३[illegible]
जडभेदो विजातीयः ५७ ९[illegible]
जडानां बाध्यरूपत्वा १८[illegible] ५४
जाग्रद्वत्रहिं सम्बन्धं १४३ २[illegible]
जाड्यदु खात्मतारूप- २२[illegible] २९
जिज्ञासासूत्रमूलं स्या २१[illegible] २९
जीवन्मुक्तिदशायां स्वा- २३१ ४१
जीवस्या ऽनावृतत्वे वा ४६ ५३
जीवब्रह्मविभागाद् ६२ १०
जीवस्य ब्रह्म[illegible] ७५ ५६
जीवस्याऽप्यनवच्छिन्न ७५ ५५
जीव[illegible]ऽविद्या स्वी ७९ ७०
जीव[illegible]भिदा सत्या १७३ २०

## त

[illegible]ऽनिर्वाच्यमेवेदं ९८ ३७
ततोऽनुमानमप्यत्र ९३ ११
तथादेहेन्द्रियाद्यैक्या ८७ ९०
तथा ब्रह्मात्मनोरैक्यं १९६ ८९
तथाऽपिब्रह्मतत्त्वैक्य २०७ २[illegible]
तथा चाद्वैतवाक्यस्य २२ ६७
तथा सद्वस्तुनोभेद ५६ ९१
तथाऽऽत्मा स्वप्रकाशोऽयं [illegible] ७८
तथा तत्त्वमसीत्येव २२६ ७१
तथैव मननध्याने २०८ २८
तदङ्गित्वं प्रमाणस्य २०२ ४
तदङ्गत्वेन मनन- २१४ ४८
तद्दृष्टान्तेन तत्त्वैक्यं १९७ ९१
तद्द्वितीय न तत्रास्त्य- ६४ १६
त्वदुक्तमर्थं नो वेद्मि ८१ ७६
तदेवं श्रवणं लिङ्गं २१० ३५
तदेव श्रवणस्याऽपि २१३ ४६
तदेव सर्वविश्वस्या- ५४ ८४
तदेवं प्रतिबिम्बस्य १९७ ९३
तदेवं दृश्यमिथ्यात्वं १०५ ५९
तत्त्वमस्यादिवाक्येऽपि ११० १७
तत्त्वमस्यादिगीर्जन्य- २१५ ५४
तत्त्वमस्यादिवाक्यं तु १०७ ६
तत्त्वमस्यादिजज्ञान- २८ ६५
तत्त्वमस्यादिमानं स्या १८३ ५२
तत्त्वमस्यादिवाक्योत्थ- ८ १९
तत्त्वतो नैवभिद्यन्ते १९४ ८२
तत्त्वज्ञाननिवर्त्यत्वं ७ १५
तत्त्वज्ञानं विनाऽविद्या ५२ ७६
तत्त्वज्ञानप्रवृत्त्यर्थं ६९ ३२
तत्त्वज्ञाननिवर्त्यत्व ५८ ९७
तत्त्वज्ञाननिवर्त्यत्वा ९८ ३८
तत्त्वम्पदार्थनिष्ठं तद् १०७ ४
तत्त्वसाक्षात्कृतौ बुद्ध्या १९९ ९७
तस्माद्दृष्टव्य इत्यत्र २०४ ८

DR. RUPAK NATHJI
www.astrology-tantra.com

| | | |
|---|---|---|
| तस्मात्त्वमसीत्यस्या- | २१७ | ६३ |
| तस्मादज्ञानहानि स्या | २२२ | १३ |
| तस्माच्चित्स्वप्रकाशात्मा | २२९ | ३२ |
| तस्मात्स्वरूपानन्दस्य | २४० | ७२ |
| तस्माद्वेति श्रुतिः प्राह | १४ | ४३ |
| तस्मादध्यक्षयोग्यस्य | १७ | ४९ |
| तस्मादद्वैतवाक्यं हि | २२ | ६९ |
| तस्मादाध्यासिकः सिद्धः | ४२ | ३६ |
| तस्मादैक्यश्रुतेः सर्व- | १८५ | ५७ |
| तस्माज्ज्ञाननिवर्त्यत्व- | ६० | ३ |
| तस्मात्प्रातीतिकं सत्त्वं | ६५ | १९ |
| तस्मात्साधकसद्भावा- | १३९ | १८ |
| तस्माद् बाधकसद्भावा | १४४ | ३३ |
| तस्मात्फले प्रवृत्तस्य | २३३ | ५४ |
| तन्मात्रस्योत्तरत्वाद्वा | १०९ | १[illegible] |
| तत्परत्वात्पुमर्थैक- | १३९ | १[illegible] |
| तत्परत्वात्परत्वाच्च | २३ | ७१ |
| तत्परत्वेन सत्त्वैक्य | १२७ | [illegible] |
| तत्परत्वेन चाद्वैत | [illegible] | २८ |
| तत्र तद्देशकालादि | १२[illegible] | ६७ |
| तत्राऽपर्यायशब्दानां | २०७ | ७ |
| तत्राद्ये विषयाभासे | ४६ | ५२ |
| तत्रोपलक्षण[illegible] | २२० | ३ |
| तत्राज्ञाने[illegible]ऽस्मि | ७१ | ४० |
| तथापि जीवन्मुक्तानां | २२९ | ३३ |
| त[illegible]मात्रेण | २३३ | ५० |
| त[illegible]न्धिपरं ब्रह्मा- | १२५ | ६२ |
| [illegible]साधननिरासाभ्यां | ३ | ६ |
| [illegible]स्याव्याप्तिर्न मोक्षेऽपि | १५४ | ६३ |
| त[illegible]त्त्वौपनिषदश्रुत्या | २१६ | ६० |
| तदैक्षतव्याकरोमी | १५२ | ५६ |
| तस्यैवप्रतिदेहं स्या | ६५ | २२ |
| त्रिमात्रालम्बनोपाधि | १३६ | ८ |
| त्रिकालाबाध्यताबोधि | १७९ | ४३ |
| त्रिकालाबाध्यताद्यैश्वा | ११९ | [illegible] |
| तात्पर्यविषये यस्मा | [illegible]४ | ७५ |
| तात्पर्या विषयत्वेन | [illegible] | [illegible]७ |
| तात्पर्यस्यापि सन्देह | [illegible] | २४ |
| तात्पर्यलिङ्गसंयुक्ता | ३४ | ११ |
| तात्पर्यविषयं यस्मा | २४ | ७५ |
| तात्पर्यलिङ्गव[illegible] | १८० | ४५ |
| तात्पर्येण तु सर्वासां | ३८ | २६ |
| तात्पर्ये[illegible]ना[illegible]नेह्यैक्ये | १८५ | ५८ |
| तावदेव [illegible]रह्यस्ये | २३४ | ५६ |
| ता[illegible]के निरपेक्षत्वे | १६० | १०० |
| [illegible]म्यविनिर्मुक्तं | १३५ | ९५ |
| [illegible]गाविरुद्धरूपस्या | १८३ | ५३ |
| तृ[illegible]ादेर्भासिकाऽप्येषा | २२४ | २१ |


## द


| | | |
|---|---|---|
| ददामिबुद्धियोगं तं | २४० | ७१ |
| दशमस्त्वमसीत्यादौ | २१५ | ५७ |
| दार्ष्टान्तिकेऽपि किं ब्रह्म | ११३ | २५ |
| दुर्विवेकतया ज्ञात्र- | १५९ | ७६ |
| दुःखाद्यननुसन्धान | १७४ | २२ |
| दुःखधीर्वृत्तिरूपत्वा | १४१ | २३ |
| दुःखस्य कल्पितत्वेन | २२९ | ३० |
| दुःखाभावस्य चिद्रूपा | २२९ | ३१ |
| दुःखाभावातिरेकेऽपि | २२८ | २९ |
| दुष्टोपलम्भसामग्री | ९६ | २५ |
| देहात्मैक्यभ्रमे यद्व | ३० | ९८ |
| देहेन्द्रियादितद्धर्मा | ८७ | ९२ |
| दोषाप्रयुक्तभानत्व | १२० | ४९ |
| दोषप्रयुक्तभानत्वा | ९१ | ८ |


DR. RUPNATHJI (DR. RUPAK NATH)
www.astrology-tantra.com

| | | |
|---|---|---|
| दृष्टं तत्राऽप्यपूर्वत्वा | २१२ | ४१ |
| दृश्यत्वं सदवृत्ति स्या- | ३२ | ५ |
| दृश्याधिष्ठानरूपेण | ४२ | ३७ |
| दृष्टा गुणक्रियाजाति | १६३ | ८८ |
| दृष्टान्ते साध्यवैकल्यं | ११२ | २३ |
| द्वयोरध्यसनीयत्वा | १०१ | ४६ |
| द्वासुपर्णेति वेदार्थो | १३३ | ९५ |
| द्वासुपर्णेति पूर्वार्धे | १७८ | ३८ |
| द्विचन्द्रादिभ्रमं यद्व | २३१ | ४२ |
| द्वितीयाद्वयमित्यत्र | १९२ | ७४ |
| द्वैतमिथ्यात्वसिद्धर्हि | ३ | ५ |
| द्वौचन्द्राविति तन्मिथ्या | १७९ | ३९ |

## ध

| | | |
|---|---|---|
| धीवृत्तिर्व्याप्तितोमाया | २२४ | २० |
| धीवृत्तिव्यतिरिक्तस्य | ४३ | ३५ |
| ध्रुवार्थौ. स्याद्ध्रुवा भूमि | ६४ | १४ |

## न

| | | |
|---|---|---|
| न ध्यायमानरूप्यादौ | ९१ | ६ |
| न च मत्वानुमानं स्या | २९ | ९२ |
| न च योग्यतया व्याप्त्या | ९६ | २३ |
| न च ज्ञाने विधिः शक्यो | १३४ | १ |
| न चावधारणयाऽपि | २०८ | २६ |
| न चाऽप्रयोजकं मिथ्या | ४१ | ३५ |
| न च... सच्छब्दौ | ९६ | २८ |
| न चानुमानबाध्यत्व | २८ | ९० |
| न चिन्मात्र विरोध्यस्यां | ७७ | ६० |
| न चेदनुभवव्याप्तिः | ७३ | ४७ |
| न चैक्यं देहदेहित्व | १८८ | ६३ |
| न जीवानांमिथोभेदे | १७३ | २१ |
| न तं विदाथ इत्याद्याः | ७५ | ५३ |
| न तत्कालेऽद्वितीयात्र | १३२ | ९४ |
| न निष्प्रकारकज्ञान | ११ | ३० |
| न निर्धर्मकतायां स्या | १२८ | ७९ |
| न प्रत्यक्षाऽविरोधाय | २१ | ६३ |
| न पदान्तरवैयर्थ्यं | १९२ | ४५ |
| न पूर्वतन्त्रवच्चाऽत्र | १३१ | ९१ |
| न बुभुत्साप्रयत्नाख्यां | २१३ | ४३ |
| न ब्रह्मण्यनुमानं वा | १२७ | ७७ |
| न ब्रह्मममसत्तार्कं | १५१ | ५२ |
| न भूते सदसच्छब्दौ | ९७ | १९ |
| न भूतकालस्पर्कप्रत्यक् | ७३ | ४६ |
| न मिथ्यात्वानुमानस्या- | २४ | ७६ |
| न मिथ्यात्वानुमानं वा | ४८ | ६० |
| न मुक्तिः कर्मणा साध्या | २३९ | ६८ |
| न मुक्तेस्तारतम्यं वा | २३५ | ५८ |
| न लौकिकं न सामान्य- | १८ | ५० |
| नवाऽन्यत्र क्षितस्यैव | ९८ | ३४ |
| न वा शब्दान्तरादीनां | १८१ | ४७ |
| न वा सत्प्रतिपक्षोऽत्र | ११२ | २२ |
| न वा सत्त्वपरागोऽत्र | ९८ | ३३ |
| न शुद्धतुच्छयो रेवं | ११ | २८ |
| न सत्यादिगिरा साक्षा | ९० | ४ |
| न समानविशेषादि | १७० | ८ |
| न साध्यं व्याहतं वा स्यात् | ९३ | ९ |
| न सुषुप्तिगविज्ञानं | ७२ | ४५ |
| न ह्यवच्छेदकान्यत्वं | १०२ | ५१ |
| नह्यर्थगतमौत्कृष्ट्यं | ४१ | ३४ |
| नह्यतात्त्विकरूपे द्वे | ८९ | ९९ |
| नहिमुख्यपरत्वे स्यु | १८६ | ५९ |
| न हि विश्वनिषेधात्मा | ३५ | १६ |
| न स्याद्भेदपरोक्षस्य | २१५ | ५६ |
| नानुमानाद्द्विदासिद्धि | १७१ | १३ |


DR. RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

नाणुर्नमध्यमो जीवो २०० १
नाधिष्ठानधियः प्राक्स्या- ५१ ७३
नात्रान्योन्याश्रयापातो २०९ ३०
नार्थातिरिक्तोज्ञानंऽस्ति ३१ १००
नार्थान्तर भवेद्बाधात् ९३ १०
नाद्य. संस्कारसत्व्याप्तो २३० ३७
नाभेदे दृष्टिसृष्टित्व ६३ १३
नासति प्रतियोगित्वं ९५ २४
नासदासीन्नो सदासी ९६ २७
नानुमानमसज्ज्ञाने ९७ ३२
नामरूपादिमुक्त. सन् ५७ ९४
नारायणादिशब्देन १४६ ३८
नामब्रह्मेत्युपासीत १३८ १५
नाज्ञाननाशिकाऽविद्या १०२ ५०
निरपेक्षस्वरूपस्य १६६ [illegible]
नियम.श्रवणेज्ञान २०४ ११
नियमाद्दृष्टसाध्यस्य २०७ २१
निरंशऽप्यंशतारोपो १९६ [illegible]
नित्यः सर्वगतोह्येष [illegible] ९४
निष्प्रकारकबोधस्य ११[illegible] २७
निष्प्रकारमपि ज्ञानं ११६ ३५
निश्चयो मुक्तिफलको ११७ ३९
निर्गुणस्तावदात्मास्ति १२७ ७४
निर्गुणज्ञा[illegible] मुक्ति १३७ १२
निर्दोष[illegible]भ[illegible]वेन ५४ ८६
निर्वि[illegible]पेण १४१ २४
निर्विशेषं परं ब्रह्म १४२ २६
निर्विशेषऽन्यतोऽप्राप्ता २०५ १५
निर्विशेषेऽपिसन्देह- २०८ २५
निवृत्तिरात्मामोहस्य २२० ५
निर्विशेषं परं ब्रह्म १२९ ८३
निवृत्तसर्पविभ्रान्ते २२९ ३६
निष्प्रकारमपि ज्ञानं १४४ ३२
निराकारं स्वयंज्योति १४५ ३४
निर्द्धर्मकतया ब्रह्मा १६० ४०
नि.स्वरूपतया तुच्छे १६७ ६९
नैकत्रोभयभिन्नत्वं [illegible] ९७
नीरूपस्याऽपि रूपस्य [illegible] ६४
नेह नानेति वेदान्ते ९९ ४१
नेतिनेतीतिवेदान्ते २२१ १०
नोपजीव्यविरोधोत्रा १८४ ५५
नोपजीव्यविरोधोऽपि २० ५७
नोभयथाऽपि नियतं ७१ ३८
नोवैयाधिकरण्यस्या १७५ २६


## प


परिच्छिन्नत्वमप्यस्ति १४ ४१
परीक्षितप्रमाणत्वं २१ ६१
परात्परमुपैतीति १९१ ७०
परमार्थसच्छिन्नत्व ३२ ६
परमुक्तौनभेदोऽस्ति १८० ४६
पक्षादीनांहिमिथ्यात्त्व ३९ २९
परिच्छिन्नत्वजन्यत्व १७७ ३४
पाके निवृत्ते नो दृष्टा २२० ४
पादोस्येऽति श्रुतौ तद्व १९५ ८७
पाश्चात्यवृत्तिपर्यन्त २२१ ९
पारमार्थिकभेदस्य १९४ ८४
पारमार्थिकमद्वैतं २६ ८२
पारमार्थिकदृष्ट्यातु ५३ ८०
पुमर्थत्वंसुखे साक्षा २२७ २६
पूर्णत्वमपरिच्छिन्न ७ १४
पूर्वस्मिन्नोत्तरज्ञान ७० ३५
पूर्णानन्दात्मनाभाने ८१ ७४
पौर्वापर्यापरिज्ञाना १८२ ५०


RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

पृथगात्मानमित्यादि १३७ ११

प्र

प्रत्यग्याथात्म्यधीरेव ५९ १
प्रतीतिमात्रसत्त्वेऽपि ६१ ६
प्रतीत्यभावेऽप्यसतो ९४ १८
प्रतिकर्मव्यवस्थाऽपि ६१ ८
प्रमाणान्यन्तरेणाऽपि ४४ ४५
प्रमाणं श्रुतयोऽप्यत्र ७४ ५२
प्रमाणवृत्त्युपारूढ- ८२ ७७
प्रमाणमिह तद्वास्य २१४ ४९
प्रवृत्तिविषयत्वस्या- ९४ २०
प्रश्नोत्तरउभे युक्त्या ११३ २४
प्रत्यभिज्ञापदार्थोत्त- १२५ ६८
प्रतिबन्धक्षये पुंसः १४४ २१
प्रवेष्टृत्वे च गम्यत्वे १४६ ३६
प्रतियोग्यादिसापेक्षं १६९ ६
प्रकाशकर्तृभावाच्चे- १६० ७९
प्रविनश्यद्वस्तुस्य २३० ३९
प्रत्यक्षसिद्धंसत्त्वं तु २१ ७८
प्रत्यक्षमनुमानंच- २० ५
प्रत्यक्षाद्वेदवाक्यस्या- २६ ८३
प्रत्यक्षादिप्रमाणस्य २७ ८८
प्रतिबिम्बस्य बिम्बैक- ३९ ३०
प्रतिबिम्बितचैतन्यं ४४ ४७
प्रमाणसम्भवादेवा २७ ३१
प्रतियोगित्वमपि तु ९९ ३९
प्रतियोगित्वमेवैत· ७ १६
प्रवृत्तिहेतुभेदं हि १०९ १०
प्रातिप्रातिकरूपत्वा २२२ १२
प्रातिभासिकवस्त्वेव २२४ १८
प्रामाण्यं रूपतोमिथ्या १० ५९

प्राबल्यमागमस्यैव २३ ७८
प्राणलोकादिसृष्टिं हि ६४ २८
प्रामाणिकत्वं सत्त्वं स्यात् ९४ १४
प्राज्ञेन संपरिष्वक्त १८९ ६५

फ

फलाद्युत्त्यनुसन्धानं २०३ १०
फलव्याप्यत्वमिष्टं १५५ ६५
फलाव्याप्यत्वमुख्याधि- १५५ ६६

ब

बद्धमुक्तव्यवस्थापि १७६ २९
बाध्यबाधकयोरैक्य ५६ ८९
बाध्यं प्रयोजकत्वे स्यात् ९३ १६
बुद्धेस्तु तद्विशिष्टाया ८६ ८८
बुद्ध्याद्युपाधिसम्बन्धा २०० ३००
बोद्धृभिन्नार्थकाच्छब्दा- २१६ ५९
बहुकालालपकालादि २३० ४०

ब्र

ब्रह्मत्त्वं ब्रह्मवृत्तित्वा- ३२ ३
ब्रह्मवित्परमाप्नोती- ११० १६
ब्रह्मवित्परमाप्नोती २३७ ६४
ब्रह्मात्मैक्यं प्रमेयं य- २ ३
ब्रह्मज्ञानप्रयुक्तेयं ७ १७
ब्रह्मणः स्फूर्तिरूपे स्वा- १२ ३४
ब्रह्मज्ञानेतराबाध्य. ३१ १
ब्रह्मरूपतया मुक्ते ६२ ११
ब्राह्मणोऽहं मनुष्योऽहं ८७ ९१
ब्रह्मणः स्वप्रकाशत्वे ९३ १५
ब्रह्मरूपाऽस्तुवाऽविद्या १०३ ५४
ब्रह्मभिन्नं मृषासर्वं १०३ ५५


RUPNATHJI (DR. RUPAK NATH)
www.astrology-tantra.com

| | | |
|---|---|---|
| ब्रह्माभिन्नतया माऽस्तु | २२१ | ५२ |
| ब्रह्मबोधोपयोगित्वं | १२२ | ५४ |
| ब्रह्मवा इदमित्याद्या | १९० | ६७ |
| ब्रह्मण्यवाच्येयोविद्वान् | १६३ | ९० |
| ब्रह्मणः स्वप्रकाशत्व- | १५४ | ६२ |
| ब्रह्माभिन्ननिमित्तोपा | १५४ | ६१ |
| ब्रह्मणोनिर्विकारत्व | १५१ | ५१ |
| ब्रह्मणो नित्ययुक्तत्वे | ६६ | २३ |
| ब्रह्ममाये जीवयोनी | १५० | ५० |

## भ

| | | |
|---|---|---|
| भक्तिजेशप्रसादस्य | २३४ | ५७ |
| भाट्टवार्तिकरीत्येत्थ | २३४ | ५५ |
| भास्यास्वावृतचिद्धाम्ना | ७६ | ५८ |
| भामत्यान्तु विचारैका | २१० | ३६ |
| भूभ्रान्ते विश्वमाया- | २३३ | ५१ |
| भेदोमिथ्याऽस्तिभेदत्वा- | १९५ | ८५ |
| भेदे षाड्विधतात्पर्यं | १८१ | [illegible] |
| भेदानुवादिनी श्रौती | [illegible] | ११ |
| भेदभ्रमाद्यधिष्ठान | १६५ | ९४ |
| भेदखण्डन युक्तीनां | १६४ | ९३ |
| भौतिकत्वाद्विनाशित्वा | ८५ | ८४ |
| भ्रमत्वं सगुणोपास्ते | १३५ | ६ |

## म

| | | |
|---|---|---|
| मननं तु श्रुतार्थस्य | २१० | १३२ |
| मननेनात्मद्रष्टव्य- | २१५ | ५३ |
| मयि ज्ञानं न चास्तीति | ७२ | ४३ |
| मानान्तरविरोधे स- | २२ | ६८ |
| मानान्तरा बाधितत्वा | २४ | ७३ |
| मानानपेक्षसिद्धेर्हि | २५८ | ७४ |
| मान परिच्छिन्नत्वेन | २५ | ८० |
| माया कल्पितहस्त्यादि | ४० | ३२ |
| मायाविन इवेशस्य | ५३ | ८१ |
| मायैव वा ऽस्त्युपादानं | १५१ | ५३ |
| मानं वेदान्त वाक्यानि | १२६ | ७३ |
| मायो पादानकस्यापि | [illegible] | १९ |
| मानुषानन्दमारभ्य | २३६ | ६१ |
| मिथ्यात्वाभावसत्त्वस्य | ५ | १३ |
| मिथ्यात्त्वं सविविक्तं वा | ९ | २३ |
| मिथ्यात्त्वस्यापि मिथ्यात्त्वे | ९ | २४ |
| मिथ्यात्वसाधने हेतु | १० | २७ |
| मिथ्यात्वसाधकाः सर्वे | १६ | ४७ |
| मिथ्यात्वसाधकानां हि | १७८ | ३५ |
| मिथ्या भूतेन सम्यग्धी | २० | ५८ |
| मिथ्या भूतस्य चोपाधे | १७६ | ३२ |
| मिथ्यात्त्वं ब्रह्मतुच्छाति- | ३२ | ४ |
| मिथ्यात्त्वेऽपि प्रपञ्चस्य | ५२ | ७७ |
| मिथ्या स्वाप्नरथादीनां | ५३ | ७९ |
| मिथ्यात्त्वेन निवर्त्यत्त्वं | ५८ | ९८ |
| मिथ्यात्वं ब्रह्मसत्वात्म | १३३ | ९७ |
| मिथ्यास्ति भेदधीर्भेद- | १९५ | ८६ |
| मिलित्वा जननाच्छद्वे | १२४ | ६३ |
| मिथोविरहरूपत्वे | १० | २५ |
| मीमांसकोऽप्यपूर्वत्त्वं | १८२ | ४८ |
| मुक्तस्य ब्रह्मरूपत्वा | २३६ | ६० |
| मुक्तेर्भक्तिगरीयस्त्वं | २३९ | ४० |
| मोक्षानुस्यूतरूपस्य | २२२ | ११ |

## य

| | | |
|---|---|---|
| यद्वा स्मृतिपुराणादि | २०६ | १९ |
| यद्वाऽविद्यानिवृत्तिः स्या | २२१ | ८ |
| यद्वाऽज्ञानस्य या सूक्ष्मा | २३३ | ५२ |
| यद्वा स्वाश्रयनिष्ठस्याऽ | ९ | २२ |


DR. RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

| | | |
|---|---|---|
| यद्वा स्वव्यवहारे स्वा- | ११ | ३२ |
| यद्वा ऽद्वितीयशब्देन | ५७ | ९३ |
| यद्वा ऽद्वितीयशब्देन | ५७ | १४ |
| यद्वा ऽस्त्वविद्यालेशानु | २३१ | ४४ |
| यद्वा स्वव्यवहारे स्व | १९४ | ८३ |
| यद्वा स्वव्यवहारे स्वा- | १५७ | ७० |
| यद्वा ऽत्रयोग्यतात्यन्ता- | १५५ | ६४ |
| यतो वाचोनिवर्तन्ते | २१७ | ६२ |
| यस्त्वेकाकी न रमत- | ३६ | २२ |
| यत्प्रसादाद्विद्यादि | ४९ | ६५ |
| यत्र हि द्वैतवद्यत्र | ५९ | २ |
| यद्यप्येकं परं लक्ष्यं | ११० | १८ |
| यद्यप्यखण्डवाक्यार्थं | ११६ | ३३ |
| यद्यपि ब्रह्मचैतन्यं | ५१ | ७२ |
| यन्मदन्यन्न-चाऽस्तीह | १९२ | ७१ |
| यन्मनसा न मनुते- | २१७ | ६१ |
| यत्स्वलक्षणकं वस्तं | १९६ | ९० |
| यथा सतोजानिनैंव- | ५४ | ८९ |
| यथा देहघटादीना | ८५ | ८५ |
| यथा घोषो गभीरायां | १२३ | ६० |
| यमाराध्यपरं तत्त्व- | ११९ | १ |
| य आत्माध्वस्तपाप्मेति | १३६ | ९ |
| याऽस्ति तज्जनकत्वं न | १०८ | ८ |
| यागे गतेऽपि कस्य | २३६ | ५३ |
| यावन्मोहं तु भेदः स्या | १९३ | ७९ |
| युक्तोऽनुभूत्या यत्राऽर्थे | १४० | २१ |
| येनात्मनाऽपियद्बुद्ध्व- | १९९ | ९८ |
| येनोपाधिनायस्य | १७६ | ३० |
| योऽतादिश्चमिथ्यात्वे | ५५ | ८७ |
| योऽयं प्राणेषु हृद्यन्त | १०७ | ५ |
| यं शाद्वं बोधमादाय | २१६ | ५८ |
| यः सर्वज्ञ इति श्रुत्वा | १३४ | १०० |


## र


| | | |
|---|---|---|
| रज्जुसर्पादिवद्विश्वं | ६२ | १२ |
| रज्जु सर्पादिवद्विश्वं | ६५ | २० |
| रूपादिहीनकालादे | १८ | ५२ |
| रूप्योपादानमज्ञानं | ८ | २० |
| रूप्यं सत्त्वेन बाध्येत | ९२ | १३ |


## ल


| | | |
|---|---|---|
| लक्षणा शक्यसम्बन्ध | ११८ | ४२ |
| लक्षणा सम्प्रदायं स्या | १२४ | ६४ |
| लक्षणा द्वयासिद्ध्या | १२४ | ६५ |
| लक्षणास्वीकृतः शक्ति | १६२ | ८६ |
| लक्ष्यत्वव्यवहारो ऽपि | १६० | ८१ |
| लोके वा तात्त्विकत्वेन | ९९ | ४० |
| लक्ष्यार्थभेदाभावेपि | १२३ | ५८ |


## व


| | | |
|---|---|---|
| वल्मीकादौ यतो दृष्टं | ८९ | १ |
| वशीकृते मनस्येषां | १२९ | ८४ |
| वस्तुनः पदलक्ष्यत्वे | १६१ | ८३ |
| वस्तुत्वऽपि निषेधस्य | ५ | ९ |
| वस्तुतस्तु श्रुतेरेव | ७८ | ६५ |
| विचारः शब्दशक्त्यैक | २०२ | ६ |
| विचारस्याऽपि करणे | २०३ | ७ |
| वाक्यजा चरमा वृत्ति | २१९ | २ |
| वाक्यं वेदान्तविज्ञान | २१४ | ५१ |
| वाक्यं लाक्षणिकत्वे ऽपि | १२५ | ६५ |
| विधि स्यान्निर्गुणैकात्म्य | २१२ | ४० |
| विनिः सारितपुष्पेऽपि | २३० | ३६ |
| विपक्षबाधकापेतं | २१ | ६० |
| विना वृत्तिमविद्याया | ११६ | ३४ |


DR.RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

| | | |
|---|---|---|
| विचारस्याऽपि वेदान्त | ११७ | ३६ |
| वाच्यार्थभेदात्सत्याऽपि | ११९ | ४३ |
| वादिनां कुमतप्राप्ता | १२२ | ५५ |
| वाग्धेनुत्वादिवन्नाऽत्र | १३८ | १४ |
| विमतं सत्त्वशून्यत्वे | ९१ | ७ |
| विश्वं सत्यमिति श्रौतं | ३४ | १० |
| विश्वसत्यत्ववाक्यस्य | ३६ | १९ |
| विश्वसत्यत्वगीस्तस्मा | ३७ | २४ |
| विश्वस्याध्यासिकत्वेऽपि | ४५ | ४९ |
| विश्वोपादानविषया | ४९ | ६६ |
| विश्वमायानिवृत्तिःस्याद् | ७५ | ५४ |
| विशिष्टार्थैकसम्बन्धि | १२४ | ६१ |
| विशिष्टविषयोपास्ति | १३५ | ५ |
| विकारशब्दान्नेत्यादि | १३२ | ९३ |
| विशेष्यांशस्य सत्त्वेऽपि | १३६ | [illegible] |
| विचारसमयेऽध्यस्त | १४२ | २[illegible] |
| विभेदजनकेऽज्ञाने | १९६ | ८० |
| विशेषणांशत्यागेऽपि | १८७ | [illegible] |
| व्रीहीनित्यत्र शास्त्रैक | २[illegible] | १६ |
| व्रीहिमात्रसमाकार | २०[illegible] | १७ |
| विशिष्टशक्तेस्तद्बोधो | २०८ | २३ |
| वेदानुकूलतर्कोऽपि | १९ | ५६ |
| वेदान्तवाक्यजं ज्ञानं | ५० | ७१ |
| वेदान्तश्रवणादिभ्यो | ५२ | ७५ |
| वेदान्ता निर्विशेषे स्युः | १४२ | २७ |
| वेदे [illegible]ष्ठान्ते | १८९ | ६४ |
| वेदान्तवाक्यजज्ञान | १६३ | ८७ |
| व्यावहारिकमिथ्यात्त्वं | १० | २६ |
| व्यावहारिकमानत्त्व | २१ | ६२ |
| व्यावहारिकप्रामाण्यं | २३ | ७२ |
| व्यावहारिकसत्त्वैक | २५ | ७९ |
| व्यावहारिकमेवास्ति | ३६ | १८ |
| व्यावहारिकसत्वेन | ६२ | ९ |
| व्यावृत्तिसमसत्ताकं | १२१ | ५० |
| व्यावृत्ताकारतोब्रह्मा | ११७ | [illegible] |
| व्यावृत्तिबुद्धिहेतुत्वं | १२१ | ५१ |
| व्यावहारिकसत्वंस्या | [illegible] | १० |
| व्यावहारिकभेदे वा | [illegible] | ४४ |
| व्यवहारव्यवस्थाऽपि | १६५ | ९६ |
| व्युत्पत्त्यै मन्दबुद्धीनां | २२३ | १४ |
| वृत्त्युपारूढचैतन्यं | २२३ | १६ |
| वृत्तित्वान्मा[illegible]विध्वस्ते | २२६ | २५ |
| वृत्तिरूपं न तज्ज्ञानं | ४३ | ४० |
| वृत्तिः स्यात्सर्वगत्वेऽस्य | ४६ | ५४ |
| वृक्षस्य स्वगतोभेदः | ५६ | ९० |

## श

| | | |
|---|---|---|
| शब्दातिशयहेतुत्वा- | २०३ | ९ |
| शब्दादेवापरोक्षत्वे | २१४ | ५२ |
| शक्यार्थमात्रबोधित्वं | २२ | ६५ |
| शब्दबाध्यं न मिथ्यात्त्वं | ३४ | ९ |
| शब्दज्ञानानुपाती स्या | ९४ | १९ |
| शब्दादेवापरोक्षत्वे | २१४ | ५२ |
| शाब्दिकन्यायवैषम्या- | ५५ | ८८ |
| शाखेन्दुन्यायतो ब्रह्म | १३८ | १६ |
| शुद्धस्याऽविषयत्वेऽप्यु- | २२५ | २३ |
| शुद्धं वा वृत्त्याभिव्यक्तं | १२ | ३३ |
| शुक्तिरूप्यत्ववद्ब्रह्मा | ३२ | २ |
| शुभादिसूचकत्वंहि | ३९ | ३१ |
| शुद्धेतात्विकसम्बन्धा | २०९ | ११ |
| शुद्धब्रह्मैकताकारा | १११ | २१ |
| शुद्धे शब्दैकगम्येना | १७३ | १८ |
| शुद्धयोस्तत्त्वमोर्नैव | १७२ | १६ |
| शुद्धब्रह्मातिरिक्तोयो | १४८ | ४४ |


RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

| | | |
|---|---|---|
| शून्यत्वस्यापुमर्थत्वा | १२९ | ८६ |
| श्रवणादिपरानित्यं | २०१ | १ |
| श्रवणं मननं ध्यानं | २०२ | ३ |
| श्रवणं शक्तितात्पर्यो | २०७ | २२ |
| श्रवणादिक्रिया ताव | २०८ | २७ |
| श्रवणाक्षिप्ततात्पर्यं | २०९ | ३१ |
| श्रुत्यनुग्राहकत्वाच्च | २९ | ९१ |
| श्रोत्रियस्येति वाक्येषु | २३८ | ६६ |

## स

| | | |
|---|---|---|
| संस्कारःकार्यरूपोपि | २३० | ३० |
| संसारस्योपलम्भेन | ६८ | ३१ |
| सन्घटश्चेत्यधिष्ठान- | १८ | ५१ |
| सच द्रष्टैक एवास्ति | ६५ | २१ |
| सतः साति विभिन्नत्वे | ८८ | ९[illegible] |
| सदसत्त्वे विरुद्धत्वा | २९ | ९६ |
| सदसत्कार्यवादादि | ५४ | ८३ |
| सदानन्दविदाकृष्ण- | २४० | ७[illegible] |
| सद्धर्मकानुमानेते- | [illegible] | ८१ |
| सफलंतत्त्वविज्ञान- | २१[illegible] | ५० |
| समन्वयाविरोधोक्त- | २१० | ३३ |
| समन्वयविचारस्या- | २१० | ३४ |
| सर्वत्राऽपि विचा[illegible]व | २०५ | १४ |
| सप्रकारक[illegible] | ११ | २९ |
| सर्वाधि[illegible]विकं | १९ | ५३ |
| सर्व[illegible] सिद्धिः | ४३ | ४२ |
| स[illegible]र्थ[illegible]शां तावत् | ४४ | ४३ |
| स[illegible]नन्दत्वमुख्याना | ४८ | ६३ |
| स[illegible]सत्ताकताऽविद्या | ५० | ७० |
| [illegible]त्राऽनुभवेभाव | ७२ | ४४ |
| सर्वतः प्रसृतत्वेन | ७८ | ६६ |
| सर्वज्ञत्वं विशिष्टेस्या | ७९ | ६८ |
| सत्वासत्त्वाख्यधर्माभ्यां | ८८ | ९५ |
| सत्त्वावच्छिन्नभेदस्य | ८८ | ९[illegible] |
| सत्त्वादिना विचारैका- | ९० | २ |
| सद्रूपत्वाद्यभावोऽन्यो | ९० | ३ |
| सर्वं ब्रह्मेदमित्येवं | [illegible] | ५८ |
| सदुपादानकं विश्वं | १५२ | ५९ |
| सत्यज्ञानादिशब्दास्ते | १६१ | ८२ |
| स आत्मा तत्त्वमसीत्ये- | १८७ | ६१ |
| सयश्चायं नरे [illegible] | १९० | ६८ |
| सयोह परमं ब्रह्म | १९० | ६९ |
| सुप्तौ [illegible]मायांति | ८५ | ८३ |
| सुविवे[illegible]या स्वप्ने | १९ | ७७ |
| सु[illegible]दिवत्प्रेक्षा | १५३ | ६० |
| सु[illegible]प्रलीनमुक्ताना- | १७४ | २३ |
| [illegible]यमित्यादिवत्त्वित्थं | ११० | १५ |
| स्[illegible]ज्योतिषाप्यबाध्यत्वे | २२३ | १५ |
| स्वप्नवद्दृष्टिसृष्टिश्चा- | ६० | ४ |
| स्वप्नप्रपञ्चवन्माया | ३० | ९९ |
| स्वप्नजागरयोस्तुल्या | १०२ | ५३ |
| स्वप्नवत्सर्वभेदस्य | ६९ | ३३ |
| स्वस्ति श्रीकृष्णतत्त्वं | १ | १ |
| स्वतः सिद्धार्थताऽसिद्धो | ४४ | ४४ |
| स्वतोऽसिद्धे प्रमेयेतु | ४४ | ४६ |
| स्वप्रकाशतया ज्ञाते | ४८ | ६१ |
| स्वरूपतः प्रमाणैर्वा | ७९ | ६९ |
| स्वयम्भानाहमावृत्त्या | ८० | ७३ |
| स्वरूपादुर्निरूप्यस्य | ८९ | ९८ |
| स्वस्मिन् कार्यजनेरेव | १५० | ४९ |
| स्वस्मिन्स्वाविषयत्वेऽपि | १५६ | ६७ |
| स्वप्रकाशत्वधर्मस्य | १५७ | ७१ |
| स्वप्रकाशानुभूतिः स्या- | १५७ | ७२ |
| स्वप्रकाशतया सर्वे- | १७७ | ३५ |


www.astrology-tantra.com
RUPNATHJI (DR. RUPAK NATH)

| | | |
|---|---|---|
| स्वरूपस्य प्रमेयत्त्वा- | ११८ | ४१ |
| स्वत एवास्त्युपाधित्त्व- | १०१ | ४८ |
| स्यादाकारनिवृत्ताव- | २३२ | ४६ |
| स्थूल. स्यामितिवत्सुप्त्यै | ८४ | ८१ |
| स्वाधिष्ठाने परे तत्त्वे | ५ | ८ |
| संस्कारस्मृतिदोषाणां | ९८ | ३६ |
| संशयोऽप्यस्तसामान्य | ११८ | ४० |
| संसर्गाविषयेऽप्यस्या | ११५ | ३२ |
| सत्तर्क.श्रुतिभि स्मृत्या | १६४ | ९२ |
| सत्तादीनां तु जातीनां | ११९ | ४६ |
| सर्वंपक्षीभवन्तीत्ये- | १९१ | ७१ |
| सर्वभूतेषु गूढोऽयं | १९३ | ७७ |
| सगुणश्रुतिबाहुल्यं | १४० | २० |
| सत्य तत्त्वमसीत्यादी | १३१ | ९० |
| सदेवासीद सद्वेति | १२९ | ८५ |
| सत्यज्ञानादिगीरेन | १२६ | ७[illegible] |
| सत्वेनानृतव्यावृत्त | १२३ | ५[illegible] |
| सत्ये ब्रह्मणि सत्वादि | १२[illegible] | ५३ |
| सत्वमिथ्यात्त्वभेदोऽपि | १२० | ४८ |
| सत्यज्ञानादिवाक्येऽत्र | [illegible]०४ | २६ |
| सदासीत्तत्र चासीद्वा | [illegible]७ | ३० |
| सर्वतोऽप्यनवच्छिन्न | [illegible] | ३० |
| सर्वधीप्रत्ययानां [illegible] | १०० | ४३ |
| सत्त्वत्रैविध्य[illegible]त्र | १०३ | ५६ |
| सप्रकारकज्ञानादि | १०४ | ५८ |
| सायुज्यस्य [illegible]त्वा- | २३८ | ६५ |
| सापेक्ष[illegible]वधेश्चे- | १६८ | ४ |
| सा[illegible]रण्यं त | १८८ | ६२ |
| [illegible]ना[illegible]तिरिक्तेर्थे | ६० | ५ |
| [illegible]ज्ञादिविशिष्टं य- | १८५ | ५६ |
| [illegible]क्षाज्ज्ञाननिवर्त्यत्वं | ७१ | ३९ |
| [illegible]क्षिवेद्यतया वृत्तौ | १०१ | ४९ |
| साविद्या साक्षिचिद्वेद्या | ७६ | ५७ |
| साक्षिणः सर्वजीवेषु | १४९ | ४५ |
| साक्ष्यज्ञानसुखाकारा | ७३ | ४[illegible] |
| सामान्यतोापतत्सिद्ध | ९१ | ९ |
| सुखेवैषयिकेयद्धि | २[illegible]७ | ३६ |
| सौषुप्तिकानुभूतिस्तु | [illegible] | [illegible]१ |
| सुप्तिकालानुभूतात्मै- | ८[illegible] | ७९ |
| सुखादौशुक्तिरूप्यादौ | ७२ | ४२ |
| स्वापरोक्ष्येऽनपेक्षत्त्वे | १२ | ३६ |
| स्वान्यूनसमस[illegible] | १४ | ४२ |
| स्वाभाविकीति वा[illegible]यं तु | १३० | ८९ |
| स्वाप्रवाक्याद्धि[illegible]भ्यां | ६१ | ७ |
| स्वेनैव कल्पि[illegible] देशे | ८० | ७१ |
| स्वोपादान[illegible]निष्ठस्या | १६ | ४६ |


## ह


| | | |
|---|---|---|
| हेत[illegible]ऽभीष्टसिद्ध्यर्थं | ३३ | ८ |
| हे[illegible] निरूप्य बन्धाख्यं | १०६ | २ |


## क्ष


| | | |
|---|---|---|
| क्षेत्रज्ञं चाऽपि मांविद्धि | १९४ | ८१ |


## ज्ञ


| | | |
|---|---|---|
| ज्ञानसाधनमात्रे | २१३ | ४४ |
| ज्ञानवस्तुप्रमायत्तं | २१३ | ४५ |
| ज्ञानत्वबादिति प्रोक्तं | २१५ | ५५ |
| ज्ञानमर्थप्रकाशात्म | १४७ | ४१ |
| ज्ञानात्पूर्वमसिद्धस्या | २२० | ६ |
| ज्ञानानिवर्त्यदोषस्य | २३१ | ४३ |
| ज्ञानादेव भवेन्मुक्ति- | २३९ | ३९ |
| ज्ञानत्वव्याप्यधर्मेण | ८ | २१ |
| ज्ञानादीनां स्वरूपत्वा- | १३० | ८७ |
| ज्ञानानन्दैकरूपंय | १४९ | ४६ |
| ज्ञानानन्दापृथक्त्वेऽपि | १४८ | ४२ |
| ज्ञानानन्दैकरूपत्व- | १४७ | ३८ |


श्लोकसूचीपत्रम् समाप्तं ।

DR. RUPAK NATH JI (DR. RUPAK NATH)
www.astrology-tantra.com

# अद्वैतसिद्धिसिद्धान्तसारसङ्ग्रहस्थप्रधानविषयाणां

## सूचीपत्रम् ।


| | पृष्ठाङ्काः |
|---|---|
| मङ्गलाचरणम् | १ |
| अद्वैतसिद्धेर्द्वैतमिथ्यात्त्वसिद्धिपूर्वकत्वोपपादनम् ... ... | ३ |
| जगन्मिथ्यात्त्वे प्राचां प्रयोगाः ... ... ... ... | ४ |
| प्रथमद्वितीयमिथ्यात्त्वलक्षणकथनम् ... ... ... | ५ |
| तृतीयमिथ्यात्त्वलक्षणकथनम् ... ... ... ... | ६ |
| विवरणाचार्योक्तश्लोकोत्कीर्तनम् ... ... ... | ८ |
| चतुर्थपञ्चमलक्षणमिथ्यात्त्वमिथ्यात्त्वोपपत्तिः ... ... | ९ |
| दृश्यत्त्वहेतूपपत्तिः ... ... ... ... ... | ११ |
| जडत्वहेतूपपत्तिः ... ... ... ... ... | १३ |
| परिच्छिन्नत्वहेतूपपत्तिः ... ... ... ... | १४ |
| ब्रह्मसिद्धिकारानन्दबोधोक्तानुमाननिरूपणम् ... ... | १५ |
| चित्सुखाचार्यानुमाननिरूपणम् ... ... ... | १६ |
| मिथ्यात्वानुमाने सोपाधिकत्वभङ्गः । ... ... ... | १६ |
| मिथ्यात्वानुमान आभाससाम्यप्रत्यक्षबाधयोरुद्धारः । ... | १७ |
| प्रत्यक्षयोग्यसत्वाऽनिरुक्त्या प्रत्यक्षबाधोद्धारः । ... ... | १८ |
| प्रत्यक्षापेक्षयाऽऽगमप्राबल्यम् ... ... ... ... | १९ |
| प्रत्यक्षस्योपजीव्यत्वभङ्गः ... ... ... ... | २० |
| प्रत्यक्षस्यानुमानागमबाध्यत्वसिद्धिः ... ... ... | २१ |
| अपच्छेदन्यायेन प्रत्यक्षस्याऽऽगमबाध्यत्वम् । ... ... | २३ |
| आनन्दबोधाचार्यवचनसम्मतिः ... ... ... | २३ |
| अपच्छेदन्यायवैषम्यभङ्गः ... ... ... ... | २४ |
| मिथ्यात्त्वानुमितेर्वह्निशैत्यानुमितिसाम्यभङ्गः ... ... | २६ |
| परीक्षिततत्त्वस्यैव प्राबल्यप्रयोजकत्वोपपत्तिः ... ... | २६ |
| श्रुतस्याऽचिन्त्यशक्तित्वोपपादनम् ... ... ... | २७ |
| [illegible]विबाधोपपत्तिः ... ... ... ... ... | २८ |
| मिथ्यात्वाऽनुमानस्याऽनुमानाबाध्यत्वोपपत्तिः ... ... | २८ |


DR.RUPAK NATH ( DR.RUPNATHJI ) www.astrology-tantra.com

| | पृष्ठाङ्काः |
|---|---|
| मिथ्यात्वसत्त्वानुमानयोः सम्यक्त्वदुष्टत्वोपसंहारः ... | २९ |
| ईश्वरस्य भ्रान्तत्वनिरासः ... ... ... ... | ३० |
| असत्यस्याऽर्थक्रियाकारित्वोपपत्तिः .. ... ... | ३१ |
| मिथ्यात्वे विशेषानुमाननिरूपणम् ... ... ... | ३२ |
| मिथ्यात्वे विशेषानुमानोपसंहारः ... ... ... | ३३ |
| मिथ्यात्वाऽनुमाने शब्दबाध्यत्वनिरासः ... | ३४ |
| अद्वैतश्रुतेस्तात्पर्यलिङ्गोपेतत्वोपपत्तिः ... ... ... | ३५ |
| विश्वसत्यत्वप्रतिपादकश्रुतीनामर्थान्तरपरत्वोपवर्णनम् ... | ३६ |
| सप्रपञ्चतायाः पुरुषार्थत्वनिरासः ... ... ... | ३७ |
| मिथ्यात्वश्रुतेस्सत्त्वश्रुतिबाध्यत्वाभावनिरूपणम् ... ... | ३७ |
| विश्वमिथ्यात्वाऽनुमानस्याऽऽगमादिबाधोद्धारः ... ... | ३८ |
| असतो हेतुसाध्यपक्षादीनां साधकत्वोपपत्तिः ... | ३९ |
| स्वप्ने विषयविशिष्टस्य ज्ञानस्यासत्त्वनिरूपणम् ... ... | ४० |
| मिथ्यात्वानुमानस्याप्रयोजकत्वनिरासः ... ... ... | ४१ |
| विश्वसत्यत्वे दृग्दृश्यसम्बन्धानुपपत्तिनिरूपणम् .. ... | ४२ |
| वृत्त्यतिरिक्तस्य ज्ञानस्याऽऽवश्यकत्वनिरूपणम् ... ... | ४३ |
| वृत्त्युपरक्तस्य ज्ञानस्याज्ञाननिवर्तकत्वे वार्तिकवचनप्रदर्शनम् । | ४४ |
| मतभेदेन वृत्तेरुपयोगनिरूपणम् ... ... ... ... | ४५ |
| प्रतिकर्मव्यवस्थोपपत्तिः ... ... ... ... | ४६ |
| वृत्तीनामज्ञाननिवर्तकत्वनिरूपणम् ... ... ... | ४७ |
| मिथ्यात्वानुमाने प्रतिकूलतर्कनिरासः ... ... ... | ४८ |
| अप्रामाण्यस्वतस्त्वनिरासः ... ... .. ... | ४९ |
| देहेन्द्रियादिकमनपेक्ष्यान्तःकरणाध्यासोपवर्णनम् ... | ५० |
| बन्धस्याऽध्यस्तत्वेऽपि तन्निवृत्त्युद्देशेन श्रवणादौ प्रवृत्तिनिरूपणम् | ५१ |
| बन्धस्याऽध्यस्तत्वेन ज्ञाननिवर्त्यत्वोपपत्तिः ... ... | ५२ |
| जगन्मिथ्यात्वे श्रुतिस्मृतिसूत्रविरोधपरिहारः ... ... | ५३ |
| ब्रह्मणि कृत्स्नकल्पनोपपादनेन प्रतिकूलतर्कभङ्गः ... ... | ५४ |
| महाभाष्योक्तन्यायविरोधपरिहारः ... ... ... | ५५ |
| एकमेवाद्वितीयमिति श्रुतेर्व्याख्यानम् ... ... ... | ५६ |
| सर्वाद्वैतश्रुतेः प्रत्यक्षादिविरोधोद्धारः ... ... ... | ५७ |
| श्रुतिबोधितज्ञाननिवर्त्यत्वाऽन्यथानुपपत्त्याऽपि ब- ... | |


DR. RUPNATHJI (DR. RUPAK NATH)
www.astrology-tantra.com

पृष्ठाङ्काः

न्धमिथ्यात्वनिरूणम् ... ... ... ... ... ५८
सत्यत्वे ज्ञाननिवर्त्यत्वाऽनुपपत्तिनिरूपणम् ... ... ५९
दृष्टिसृष्ट्यन्यथाऽनुपपत्त्याऽपि बन्धमिथ्यात्त्वम् ... ... ६०
दृष्टिसृष्ट्युपपत्तिः ... ... ... .. ... ६१
दृष्टिसृष्टौ प्रतिकर्मव्यवस्थादिनिरूपणम् ... ... ... ६२
दृष्टिसृष्टौ प्रत्यभिज्ञाविरोधनिरासः ... .. ... ६३
ध्रुवाद्यौरित्यादि श्रुतीनामर्थान्तरपरत्वोपपत्तिः ... ... ६४
एकजीववादनिरूपणम् ... ... ... ... ६५
एकजीववादे श्रुतीनां सामञ्जस्योपपादनम् ... ... ६६
शास्त्रगुर्वादीनां कल्पितत्वेऽपि ततो ज्ञानोदयनिरूपणम् ... ६७
अनिश्चिताद्वैतस्य गुर्वादिकल्पकत्वोपपत्तिः ... ... ६८
शुकवामदेवादिमुक्तत्वप्रतिपादकागमोपपत्तिः ... ... ६९
एकजीववादे सर्वकल्पनोपपत्तिः ... ... ... ७०
अविद्यालक्षणतत्पदकृत्यनिरूपणम् ... ... ... ७०
उपादानोपादेयभावे भावत्वस्याप्रयोजकत्वनिरूपणम् ... ७१
अज्ञाने त्रिविधानुभवप्रमाणनिरूपणम् ... ... ... ७२
भावरूपाज्ञाने वार्तिकवचनोदाहरणम् ... ... ... ७३
भावरूपाज्ञाने विवरणाद्युक्ताऽनुमाननिरूपणम् ... ... ७४
भावरूपाज्ञाने श्रुत्युपन्यासः ... ... ... ... ७५
अविद्यायाः साक्षिप्रत्यक्षत्वम् .. ... ... ... ७६
चिन्मात्रस्याज्ञानाश्रयविषयत्वोपपत्तिः ... ... ... ७७
नीरूपस्याऽपि प्रतिबिम्बनिरूपणम् ... ... ... ७८
सर्वज्ञस्याऽपि अज्ञानाश्रयत्वोपपत्तिः ... .. ... ७९
अज्ञानस्य जीवाश्रयत्वोपपत्तिः ... ... ... ... ८०
चिन्मात्रस्याविद्याविषयत्वोपपादनम् ... ... ... ८०
स्वयम्प्रकाशस्याप्यावृतत्वोपपादनम् ... ... ... ८१
वृत्त्यारूढचैतन्यस्यैवाज्ञानविरोधित्वोपपत्तिः ... ... ८२
अहमर्थस्याऽनात्मत्वोपपादनम् ... ... ... ८३
सुषुप्तावहमर्थाभावेऽपि सुषुप्त्यर्थप्रवृत्तिनिरूपणम् ... ८४
कर्तृत्वादिविशिष्टान्तःकरणैक्याध्यासादात्मनि कर्तृत्वादेरुपपत्तिः ८५
कर्तृत्वविशिष्टाया बुद्धेश्चित्यैक्याध्यासं विनाऽहङ्कर्तेति-

RUPNATHJI (DR.RUPAK NATH)
www.astrology-tantra.com

| | पृष्ठाङ्काः |
|---|---|
| प्रतीत्यनुपपत्तिनिरूपणम् ... ... ... | ८६ |
| आत्मन्यध्यासोपपादनम् ... ... ... ... | ८७ |
| अनिर्वाच्यत्वलक्षणनिरूपणम् ... ... .. ... | ८८ |
| अनिर्वाच्यत्वे प्रत्यक्षानुमानोपन्यासः ... ... ... | ९१ |
| अनिर्वाच्यत्वानुमानस्य निर्दुष्टत्वनिरूपणम् ... ... | ९२ |
| अनिर्वाच्यत्वेऽर्थापत्तिप्रदर्शनम् ... ... ... | ९३ |
| ख्यातिबाधाऽन्यथानुपपत्त्युपपन्यासः ... ... ... | ९४ |
| व्यावहारिकसत्त्वस्यैव प्रतियोगित्वादौ प्रयोजकत्वम् ... | ९५ |
| अनिर्वाच्यत्वे नासदासीदित्यादिश्रुत्युपन्यासः ... ... | ९६ |
| असत्ख्यात्यादिनिरासः ... ... ... ... | ९७ |
| अन्यथाख्यातिनिरासः ... ... ... ... | ९८ |
| आविद्यकरजतादेर्निषेधोपपत्तिः ... ... ... | ९९ |
| आविद्यकरजतोत्पत्त्युपपत्तिः ... ... ... ... | १०० |
| रजतभ्रमस्य चाक्षुषत्वानुभवविरोधपरिहारः ... ... | १०१ |
| भ्रमस्य वृत्तिद्वयत्वोपपत्तिः ... ... ... ... | १०२ |
| सत्त्वत्रैविध्योपपत्तिः ... ... ... ... ... | १०३ |
| व्यावहारिकप्रातिभासिकसत्वयोर्भेदनिरूपणम् ... ... | १०४ |
| पूर्वोक्तार्थोपसंहारः ... ... ... ... ... | १०५ |
| मङ्गलाचरणपूर्वकं वृत्तानुकीर्तनम् ... ... ... | १०६ |
| अखण्डार्थभेदतल्लक्षणनिरूपणम् ... ... ... | १०७ |
| अखण्डार्थलक्षणे पदकृत्यप्रदर्शनम् ... ... ... | १०८ |

इति प्रथमपरिच्छेदः ।

| | |
|---|---|
| अखण्डार्थेऽनुमानोपन्यासः ... ... ... ... | १०९ |
| अखण्डार्थे हेत्वसिद्धिनिरासः ... ... ... ... | ११० |
| अभेदेऽपि लक्ष्यलक्षणभावोपपादनम् ... ... ... | १११ |
| अखण्डार्थानुमाने सत्प्रतिपक्षनिरासः ... ... ... | ११२ |
| दृष्टान्ते साध्यवैकल्यादीनां निरासः ... ... ... | ११३ |
| सप्रकारकज्ञानस्य मोक्षहेतुत्वनिरासः ... ... ... | ११४ |
| प्रतिकूलतर्कनिराकरणम् ... ... ... ... | ११५ |
| अखण्डार्थत्वे वेदान्तानां निर्विषयत्वापत्तिनिरासः ... | ११६ |

DR. RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )

पृष्ठाङ्काः

निर्विशेषे विचाराद्युपयोगप्रदर्शनम् ... ... ... ११७
कल्पितोद्देश्यविधेयभावेन वाक्यस्य नाखण्डार्थत्वव्याहतिः ११८
सत्यादिपदानां पर्यायत्वनिरासः ... ... ... ११९
सत्यादिपदानां लक्षणयाऽखण्डार्थत्वेऽनुपपत्तिनिरासः ... १२०
व्यावृत्तेः सत्यत्वे मिथ्यात्वे वा दोषराहित्यप्रदर्शनम् ... १२१
निर्गुणब्रह्मप्रमितौ शाखान्तरीयगुणोपसंहारः ... ... १२२
व्यावृत्तेरार्थिकत्वोपपादनम् ... ... ... ... १२३
वाक्ये लक्षणोपपत्तिः ... ... ... ... १२४
वाक्यस्य लाक्षणिकत्वेऽपि अनुभावकत्वप्रदर्शनम् ... ... १२५
सत्याद्यवान्तरवाक्यमखण्डार्थतोपपत्तिः ... ... ... १२५
महावाक्यपक्षकाऽनुमानस्य निर्दोषत्वोपपत्तिः ... ... १२६
आत्मनो निर्गुणत्व उपपत्तिप्रदर्शनम् ... ... ... १२७
ब्रह्मणि तात्त्विकधर्मसाधकानुमानानामाभासत्वप्रदर्शनम् ... १२८
सगुणनिर्गुणश्रुत्योर्व्यवस्थोपदर्शनम् ... ... ... १२९
ज्ञानादीनां स्वरूपतया गुणत्वासिद्धिः ... ... ... १३०
पूर्वोत्तरतन्त्रयोर्वैषम्यकथनम् ... ... ... ... १३१
श्रुतीनां तात्त्विकार्थान्तरपरत्वनिरासः ... ... ... १३२
भेदश्रुतीनामन्यपरत्वम् ... ... ... ... १३३
यः सर्वज्ञ इत्यादिश्रुतीनां ब्रह्मपरत्वेन विशेषणे ... ...
तात्पर्याभावनिरूपणम् ... ... ... ... १३४
आनन्दसत्यकामत्वादीनां तात्त्विकत्वातात्त्विकत्वव्यवस्थाप्रदर्शनम् २३५
सगुणवाक्यस्य न गुणतात्त्विकत्वपरत्वम् ... ... १३६
सविशेषज्ञानस्य मोक्षाहेतुत्वम् ... ... ... ... १३७
ब्रह्मणः सगुणत्वे बाधकप्रदर्शनम् ... ... ... १३९
निर्गुणवाक्यस्य तात्पर्यवत्त्वेन प्राबल्यम् ... ... ... १४०
निर्गुणश्रुत्यनुगृहीततर्कस्य प्राबल्यम् ... ... ... १४१
ब्रह्मणो निर्गुणत्वोपसंहार ... ... ... ... १४२
लक्षणया वेदान्तानां ब्रह्मप्रमाणत्वोपपत्तिः ... ... १४३
ब्रह्मणो निर्गुणत्वे प्रमाणोपपत्तिः ... ... ... १४४
ब्रह्मणो निराकारत्वोपपत्तिः ... ... ... ... १४५
सर्वगतस्य ब्रह्मणः प्रवेष्टृत्वादेर्विग्रहं विनोपपत्तिः ... ... १४६

DR. RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

पृष्ठाङ्काः

ब्रह्मणो ज्ञानानन्दात्मकत्वोपपत्तिः ... ... ... १४७
साक्षिनिरूपणम् ... ... ... ... ... १४८
ब्रह्मणोऽद्वितीयनित्यसाक्षित्वोपपत्तिः ... ... ... १४९
ब्रह्मणो विवर्ताधिष्ठानतयोपादानत्वोपपत्तिः ... ... १५०
एकस्यैवोपादानत्वनिमित्तत्वयोरुपपत्तिः ... ... १५१
कार्यस्य कल्पितत्वेऽपि ब्रह्मणि कर्तृत्वोपपत्तिः ... ... १५२
जगदुपादानत्वेऽनुमानोपन्यासः ... ... ... १५३
स्वप्रकाशत्वनिरुक्ति ... ... ... ... ... १५५
फलव्याप्यत्वनिरुक्ति ... ... ... ... ... १५६
स्वप्रकाशत्वस्य ब्रह्मस्वरूपत्वम्... ... ... ... १५७
अनुभूतेः स्वप्रकाशत्वोपपत्तिः ... ... ... ... १५८
आत्मनः स्वप्रकाशत्वोपपत्तिः ... ... ... ... १५९
आत्मनः स्वप्रकाशत्वेऽनुमानोपन्यासः ... ... ... १६०
ब्रह्मणः शब्दावाच्यत्वोपपत्तिः ... ... ... ... १६१
अवाच्यत्वेऽपि लक्ष्यत्वोपपत्तिः ... ... ... १६३
सामान्यतो भेदखण्डनम् ... ... ... ... १६५
व्यावहारिकभेदेन कार्योपपत्तिः ... . . ... १६६
कल्पितवस्तुसापेक्षत्वस्यापि काल्पनिकत्त्वम ... ... १६७
ऐक्यस्य निरपेक्षस्वरूपत्वोपपत्तिः ... ... ... १६८
विशेषतो भेदखण्डनम् ... ... ... ... २६९
जीवेश्वरयोर्भेदानिराकरणम् ... ... ... ... १७०
भेदपञ्चके प्रत्यक्षस्याप्रमाणत्वोपपत्तिः ... ... ... १७१
जीवब्रह्मभेदानुमानभङ्गः ... ... ... ... १७३
जीवपरस्परभेदानुमानभङ्गः ... ... ... ... १७४
औपाधिकभेदेन व्यवस्थोपपादनम् ... ... ... १७५
जीवभेदानुकूलतर्कभङ्गः ... ... ... ... १७६
भेदपञ्चकेऽनुमानप्रामाण्यनिरासः ... ... ... १७७
भेदश्रुतेरनुवादकत्वोपपत्तिः ... ... ... ... १७९
भेदश्रुतेर्व्यावहारिकभेदपरत्वोपपत्तिः ... ... ... १८०
शब्दान्तरादेरात्मभेदकत्वाभावोपपत्ति.... ... ... १८१
भेदश्रुतेः षड्विधतात्पर्यलिङ्गभङ्ग. ... ... ... १८२

RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

| | पृष्ठाङ्काः |
|---|---|
| ऐक्यस्वरूपोपपत्तिः ... ... ... ... ... | १८३ |
| जीवब्रह्माभेदे प्रमाणम् ... ... ... ... | १८४ |
| ऐक्यश्रुतेरुपजीव्यबाधाभावः ... ... ... ... | १८५ |
| अभेदनिर्वाहकलक्षणाबाहुल्यस्यादोषत्वम् ... ... | १८६ |
| तत्त्वमसीति वाक्यार्थनिरूपणम् ... ... ... ... | १८७ |
| शरीरशरीरिभावनिबन्धनसामानाधिकरण्यानुपपत्तिः ... | १८८ |
| शकुनिसूत्रदृष्टान्तादेरन्यथोपपत्तिः ... ... ... | १८९ |
| ब्रह्म वा इदमित्यादिश्रुतीनामभेदप्रमापकत्वम् ... ... | १९० |
| एकीभावस्य गौणत्वनिरासः ... ... ... ... | १९१ |
| ऐक्ये श्रुतिप्रमाणोपन्यासः ... ... ... ... | १९३ |
| अहं ब्रह्मास्मीत्याद्यनेकश्रुतिस्मृत्यर्थकथनम् ... ... | १९४ |
| जीवब्रह्माभेदानुमानोपपत्तिः ... ... ... ... | १९५ |
| अंशत्वेनैक्यसिद्धिः ... ... ... ... ... | १९६ |
| बिम्बप्रतिबिम्बन्यायेनैक्यसिद्धिः ... ... ... | १९७ |
| आत्मनोऽणुत्वनिरासः ... ... ... ... | १९८ |
| आत्मनोविभुत्वोपपादनम् ... ... ... ... | १९९ |
| कृतहान्याद्यापत्तिनिरासः ... ... ... ... | २०० |

इति द्वितीयः परिच्छेदः ।

| | |
|---|---|
| मङ्गलाचरणम् ... ... ... ... ... | २०१ |
| मनननिदिध्यासनयोः श्रवणाङ्गतोपपत्तिः ... ... | २०२ |
| श्रवणविधेर्नियमविधित्वोपपत्तिः ... ... ... | २०३ |
| पक्षान्तरेण नियमकथनम् ... ... ... ... | २०६ |
| क्रियात्वेन श्रवणादेर्विधेयत्वोपपत्तिः ... ... ... | २०७ |
| श्रवणविधिजिज्ञासासूत्रयोर्मूलमूलिभावोपपत्तिः ... | २०९ |
| वाचस्पत्युक्तस्वाध्यायविधिविचाराक्षेपकत्वोपपत्तिः ... | २११ |
| ज्ञानस्यापुंतन्त्रत्वेनाविधेयत्वोपपत्तिः ... ... ... | २१३ |
| शब्दस्यापरोक्षज्ञानजनकतोपपत्तिः ... ... ... | २१५ |
| श्रवणविधेः प्राधान्याद्युपसंहारनिरूपणम् ... ... | २१७ |
| प्रकरणान्ते मङ्गलाचरणम् ... ... ... ... | २१८ |

इति तृतीयः परिच्छेदः ।

RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

| | पृष्ठाङ्काः |
|---|---|
| मङ्गलाचरणम् ... ... ... ... ... | २१९ |
| आत्मस्वरूपस्य नित्यत्वेऽपि मुक्तेः साध्यत्वनिरूपणम् ... | २२० |
| अविद्यानिवृत्तिनिरूपणम् ... ... ... ... | २२१ |
| आत्मैवाविद्यानिवृत्तिरिति निरूपणम् ... ... ... | २२२ |
| अविद्यानिवर्तकनिरूपणम् ... ... ... ... | २२३ |
| अविद्योपादानकस्यापि अविद्यानिवर्तकत्वोपपत्तिः ... | २२४ |
| मुक्तेरानन्दरूपत्वेन पुरुषार्थत्वोपपत्तिः ... ... ... | १२५ |
| चिन्मात्रस्य मोक्षभागित्वोपपत्तिः ... ... ... | २२९ |
| अविद्यालेशानुवृत्त्या बाधितानुवृत्तिनिरूपणम् ... ... | २३१ |
| जीवन्मुक्त्युपपत्तिः ... ... ... ... ... | २३३ |
| मुक्तौ तारतम्यभङ्गः ... ... ... ... ... | २३५ |
| ब्रह्मस्वरूपानन्दस्य निरतिशयत्वोपपत्तिः ... ... | २३७ |
| मुक्तौ कर्मतत्समुच्चित ज्ञानसाध्यत्वनिराकरणम् ... | २३९ |
| स्वकृतकर्मणो भगवत्पदारविन्दे समर्पणम् ... ... | २४० |

इति चतुर्थः परिच्छेदः ।

समाप्तं विषयसूचीपत्रम् ।

RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH
www.astrology-tantra.com

# शुद्धिपत्रम् ।

| अशुद्धम् | शुद्धम् | पृष्ठ | पङ्क्ति |
| --- | --- | --- | --- |
| त्सोबोर्ध- | त्सोबोध- | १ | १२ |
| मिद्धे | सिद्धे | १ | २० |
| ब्रह्मात्मै- | ब्रह्मात्मै | २ | [illegible] |
| द्वैतसिद्धद्वैं | द्वैतसिद्धेद्वैं | [illegible] | २१ |
| सिध्य- | सिद्ध | [illegible] | ७ |
| सत्वेना | सत्त्वेना | १२ | १२ |
| सुष्ठक्त- | सुष्टूक्त- | [illegible] | २३ |
| सद्रपक- | सद्रूपक- | १५ | १६ |
| लक्षणश्र- | लक्षणाश्र- | २२ | ७ |
| विरोधद्बि- | विरोधाद्बि | २६ | १२ |
| ज्ञानमर्थैः | ज्ञानमर्थै | २७ | ३ |
| मण्येत्त | मण्येतद्धा | २९ | १० |
| व्रह्मेत्यादि | ब्रह्मेत्यादि | ३२ | २३ |
| रैक्यरूप्यं | रैकरूप्यं | ३४ | १९ |
| रैक्यरूप्य | रैकरूप्य | ३५ | ४ |
| पृथङ्कम- | पृथङ्‌म | ४५ | १ |
| मस्त्यव | मस्त्येव | ४८ | ४ |
| वृतिरूपस्य | वृत्तिरूपस्य | ४९ | १६ |
| श्चिकसम | श्चित्तसम | ५१ | २३ |
| निवृतिर | निवृत्तिर | ५१ | २४ |
| साक्षाज्ज्ञा- | साक्षाज्ज्ञा- | ५२ | ८ |
| विश्व | विश्वं | ५२ | १२ |
| जीवनन | जीवनेन | ५४ | २१ |
| सम्भदा- | सम्भेदा | ६२ | ७ |
| वृत्युपा- | वृत्त्युपा- | ६३ | १ |
| त्त्व | त्तत्त्व | ६४ | ४ |
| बुद्वरा | बुद्बुदा | ६५ | १ |
| चैतन्यश्रि | चैतन्याश्रि | ७० | १० |
| मवति | भवति | ७० | २१ |
| समति | सम्मति | ७९ | १४ |
| [illegible] | स्वयम्भा | ८० | ६ |
| [illegible] | मनुष्योऽहं | ८७ | ५ |
| [illegible] | मेवेति | ९९ | १२ |
| [illegible] | तात्पर्य | १११ | १८ |
| [illegible] | संसृष्टरूपः | १११ | १९ |
| [illegible] | दभिधया | ११२ | २६ |
| शयत्यादौ | शयेत्यादौ | १३३ | ७ |
| निवृत्या | निवृत्त्या | ११४ | १५ |
| [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] |
| [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] |

www.astrology-tantra.c

| | | पृष्ठ | पङ्क्ति |
|---|---|---|---|
| मिंकनायां | मंकतायां | १२८ | १६ |
| ऽदिति | दिति | १२९ | २० |
| सप्लवं | संप्लवं | १३० | १२ |
| शेनः | श्यन· | १३९ | १६ |
| ऽयोसोसोऽह | ऽयोसौसोऽह | १३५ | [illegible] |
| आत्सर्गिकं | औत्सर्गिकं | १३६ | १० |
| दित्याश- | दित्या | १४० | १२ |
| द्विग्रहत्वो | द्विग्रहवत्त्वो | १४७ | ११ |
| प्रवृतिकतया | प्रवृत्तिकतया | १५० | २१ |
| द्रपृत्व | द्रष्टृत्व | १४८ | ११ |
| साक्षिरुपं | साक्षिरूपं | १४८ | २० |
| ज्वातिषोऽ | ज्योतिषोऽ | १५९ | ९ |
| मेदाद् | भेदादे | १७० | ८ |
| प्रवृति | प्रवृत्ति | १७३ | १ |
| पातारि | पत्तिरि | १७३ | ११ |
| विरुद्धांश | विरुद्धांश | १८३ | ४ |
| तात्पर्यनि | तात्पर्याणि | १८५ | ६ |
| दितिन | दिवादितिन | १९७ | १३ |
| तथाऽस्त्वाति | तथाऽस्त्वेति | २०६ | ९ |
| वाचस्वत्ये | वाचस्पत्य | २०८ | २१ |
| तत्प्रस्थान्त | तत्प्रस्थानान्त | २०८ | २१ |
| वृत्योप | वृत्त्योप | २१९ | ३ |
| पने | पत्नेः | २१९ | १३ |
| सिद्धान्त | सिद्धान्त | २२० | ५ |
| वृत्यारुढं | वृत्त्यारूढं | २२३ | ५ |
| पारुढ | पारूढ | २२३ | १४ |
| विम्व | बिम्ब | २२६ | १४ |
| निवर्तकतया | निवर्तकता | २२४ | ७ |
| अत्राह | तत्राह | २२५ | १० |
| शक्त्यादिरुपो | शक्त्यादिरूपो | २३२ | १३ |
| दोषानीति | दोषान्ति | २३६ | १९ |
| शनशब्द | शतशब्द | ३३८ | १३ |

भूमिकायाः शुद्धिपत्रम् ।

| | | | |
|---|---|---|---|
| अतिमानुषानि | अतिमानुषाणि | १ | १२ |
| महदङ्कार | महदहङ्कार | ७ | १६ |
| स्वानभेदं | स्वगतभेद- | ८ | ४ |
| परधीन | पराधीन | ८ | १५ |
| सावताण्य | सोवताराय | ८ | ५ |
| समूलघातं | समूलं | १४ | १२ |
| मान्दर- | मन्दिर | १४ | २१ |
| ब्रह्मभुः | ब्रह्मब्रुभुः | १५ | १६ |

शुद्धिपत्रं समाप्तं ।

DR.RUPAK NATH
www.astrology-tantra.com

॥ श्री ॥

# अद्वैतसिद्धिसिद्धान्तसारः ।

श्रीगणेशाय नमः ।

स्वस्ति श्रीकृष्णतत्त्वं श्रुतिविदितमनाद्यविद्यातीतं विशुद्धं
मिथ्यादृश्यातिरिक्तं परसुखमकलं प्रत्यगात्मैक्यरूपं ।
श्रुत्वा मत्वाऽनुचिन्त्याऽनुभवदृढतया स्वप्रकाशं निधाय
स्वान्ते कर्त्तुं प्रवृत्तो हरिभजनमयं सारमद्वैतसिद्धेः ॥१॥

---

ॐयस्याङ्घ्रिद्वन्द्वमन्तर्हृदि विमलगुणाः शान्तिदान्त्यादिहेतुं
ध्यात्वा धीराः प्रविष्टाः श्रुतिशिखरगिरोत्थात्मतत्वावबोधात् ॥
नित्यानन्दप्रकाशाद्वयपरमपदं बाध्यमेवापबाध्याऽ
ज्ञानं सर्वं सकार्यं तमविरतमहं श्रीमुकुन्दं प्रपद्ये ॥ १ ॥
अद्वैतसिद्धिसिद्धान्तान्बुभुत्सोर्बोधसिद्धये ।
स्वयं प्रदर्शितान्पूर्वैः समासात्तान्विवृणोम्यहं ॥ २ ॥
वासुदेवाश्रमः स्वामी ब्रह्मतत्त्वपरायणः ।
तत्प्रेमप्रेरितोहं तत्सारं कर्त्तुं समुद्यतः ॥ ३ ॥

तत्रादौ निष्प्रत्यूहग्रन्थसमाप्त्यादिसिद्धये मङ्गलाचरणव्याजेनाद्वैतसिद्धिपरिच्छेदचतुष्टये विस्तरेण निरूपितमर्थं श्रोतृबुद्धिसौकर्यार्थमतिसङ्ग्रहेण प्रदिदर्शयिषुर्वेदान्तैकवेद्यं दृश्यात्यन्ताभावोपलक्षितस्वरूपं सच्चिदानन्दघनं प्रत्यगभिन्नमखण्डमनाद्यनन्तं स्वेष्टदैवतं श्रीकृष्णमनुसन्धत्ते—" स्वस्ति श्रीकृष्णतत्त्वमिति।" परममङ्गलमूर्ति श्रीकृष्णतत्त्वं स्वान्ते निधाय हरिभजनमयमद्वैतसिद्धेः सारं कर्त्तुं प्रवृत्तोस्मीत्यन्वयः। किं भूतं तत्–श्रुतिविदितं वेदान्तैकमानसिद्धं, मिथ्यादृश्यातिरिक्तं–अनिर्वाच्याविद्याकार्यं दृश्यं सप्रकारकवृत्तिगोचरत्वेन दर्शनकर्माहं

DR. RUPNATHJI( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

अद्वैतसिद्धिसिद्धान्तान्साधितानेव युक्तिभिः ।
बुभुत्सोः सुखबोधाय दर्शयामि यथाक्रमं ॥ २ ॥
ब्रह्मात्मैक्यं प्रमेयं यद्वेदान्तानामशेषतः ।
दु(१)र्ज्ञेयं तद्विना दृश्यमार्जनं तत्त्वबोधतः ॥ ३ ॥

---

ततो व्यतिरिक्तं तदत्यन्ताभावोपलक्षितस्वरूपं अतएवाद्वितीयं विजातीयादिभेदत्रयविनिर्मुक्तं । अनादिसिद्धमित्यनेन सपरिकरद्वैतमिथ्यात्वनिरूपणं प्रथमपरिच्छेदार्थो दर्शितः ॥ विशुद्धं-तत्पदलक्ष्यम् । अकलं-षोडशकलात्मकलिङ्गशरीरविनिर्मुक्तं त्वंपदलक्ष्यं प्रत्यगात्मनोस्तत्त्वंपदार्थयोरैक्यरूपमखण्डं ब्रह्मतत्वं स्वप्रकाशं-स्वयंज्योतीरूपं, अनेन तत्त्वम्पदार्थतत्वतदैक्यवाक्यार्थतत्वनिरूपणं द्वितीयपरिच्छेदार्थो दर्शितः । श्रुत्वा सर्वेषांवेदान्तानामद्वितीये ब्रह्मणि तात्पर्यमवधार्य मत्वा श्रुतार्थं श्रुत्यनुकूलतर्कैरसम्भावनादिदोषनिरासेन विनिश्चित्यानुचिन्त्य तमेवार्थं विजातीयप्रत्ययतिरस्कारपूर्वकसजातीयप्रत्ययप्रवाहीकरणेन ध्यात्वा ऽनुभवदृढतया तदुत्थस्वानुभवदार्ढ्येन साक्षात्कृतं स्वान्ते निधायेति सम्बन्धः, अनेन श्रवणादिनिरूपणं तृतीयपरिच्छेदार्थो दर्शितः । परसुखमकलमिति पदद्वयेन मुक्तिनिरूपणं चतुर्थपरिच्छेदार्थो दर्शित इति विवेकः ॥ १ ॥ एवं मङ्गलमिषेण ग्रन्थप्रमेयं प्रदर्श्य स्वचिकीर्षितमुपक्रमते-"अद्वेतेति" ॥ २ ॥ मोक्षहेतुवाक्यार्थज्ञानमद्वैतगोचरं दृश्यमार्जनं विना न बुद्ध्यारूढं भवेत् तदर्थं तदावश्यकतामाह-"ब्रह्मात्मैक्यमिति" ॥ ३ ॥ तत्रा(२)द्वैतसिद्धर्द्वैतमि-

---

(१) दुर्ज्ञानमि त वक्तवेत्र दुर्गत ज्ञेयं दुर्ज्ञेयमिति कथञ्चिद्योज्यम् ।

(२) द्वैताभावोपलक्षित यद्ब्रह्मस्वरूप तन्मात्रविषयकोऽतएव निर्विकल्पकोयोनिश्चयस्तस्येत्यर्थं । द्वैतमिथ्यात्वसिद्धिपूर्वकत्वादिति । द्वैतमिथ्यात्वनिश्चयपूर्वकत्वादित्यर्थं । न्यायमात्र एकमेवाद्वितीयमित्यादिश्रुतेर्हि न चैतन्यमात्रप्रतिपत्तिमात्रं तात्पर्यं तस्य स्वप्रकाशतया नित्यसिद्धत्वात् तस्य द्वैतभ्रमरूपानर्थनिवृत्त्यहेतुत्वाच्च किन्तु द्वैताभावविशिष्टब्रह्मप्रतिपत्तिपूर्वकचैतन्यमात्रप्रतिपत्तौ तादृशप्रतीते प्रायसिद्धत्वात् अनर्थनिवृत्तिहेतुत्वाच्च एवञ्च तादृशश्रुतेः सकाशात् प्रथमतोब्रह्मणि द्वैताभावप्रकारकोबोधोजायते त-

www.astrology-tantra.com
RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )

अद्वैतं श्रुतितात्पर्यं ब्रह्मतत्वं निरंजनं ।
विनिश्चित्य विदां तत्र युक्तं युक्तिप्रदर्शनं ॥ ४ ॥
द्वैतमिथ्यात्वसिद्धेर्हि ब्रह्मात्मैक्यं प्रसिद्ध्यति ।
ततोऽद्वैतस्य मिथ्यात्वमुपपाद्यं तदादितः ॥ ५ ॥
तत्साधननिरासाभ्यां स्वपक्षपरक्षयोः ।
स्वपक्षसाधनं तस्मात्कर्तव्यं युक्तिभिर्दृढं ॥ ६ ॥

---

थ्यात्वसिद्धिपूर्वकत्वाद्द्वैतमिथ्यात्वमेव प्रथममुपपादनीयं, उपपादनं च स्वपक्षसाधनपरपक्षनिराकरणाभ्यां भवतीति तत्रापि मुमुक्षोरपेक्षितं स्वसिद्धान्तपरिज्ञानमेवाभ्यर्हितत्वात् तत्सिद्धये प्रथमं स्वसिद्धान्तमवलम्बते—"अद्वैतेति" त्रिभिः ॥४॥५॥६॥

---

तत्ताद्दशाभावोपलक्षितब्रह्मरूपधर्मिमात्रधी... तदलक्ष्यधर्मिबुद्धौ च उपलक्षणीभूतधर्मविशिष्टबुद्धेर्हेतुत्वात् तथा च ताद्दशविशिष्टबुद्धेरभावबुद्धित्वं न प्रतियोगिविशिष्टज्ञानात्मकमप्रसक्तिपूर्वकत्वात् द्वैताभावविशिष्टब्रह्मबोधात्पूर्वं विद्यमाना ब्रह्मोपस्थितिरेव द्वैतविशिष्टविषयिणी वाच्या तथा चास्ति बाधके विधेये उद्देश्यतावच्छेदककालावच्छिन्नत्वभानस्य व्युत्पत्तिसिद्धतयोत्तरकालीनद्वैताभावबोधे धर्मितावच्छेदकतया द्वैतभानसम्भवात् ताद्दशबुद्धेः मुख्यविशेष्यतया द्वैतत्वावच्छेदककालावच्छिन्नस्वाश्रयवृत्तिमत्स्वाभावकत्वावगाहितया द्वैतमिथ्यात्वनिश्चयरूपतया तदुत्तराद्वैतसिद्धेस्तन्मिथ्यात्वनिश्चयपूर्वकत्वनिर्वाहः । अत्र च सदेव सोम्येदमग्र आसीदेकमेवाद्वितीयमिति वाक्याभ्यां तुल्यतयाभाससमानद्वितीयाभावेदपदार्थद्वैतत्वाद्यात्म्योभयावच्छिन्नसदुद्देश्यकाग्रकालसत्त्वविधेयकबोधाङ्गीकारे तस्य द्वैतमिथ्यात्वविषयकत्वं न सेत्स्यति द्वैतस्य द्वैताभावोद्देश्यतानवच्छेदकत्वात् किन्तु पूर्ववाक्येन द्वैतविशिष्टसदविशेष्यकोऽग्रकालसत्त्वविधेयक उत्तरवाक्येन च द्वैतविशिष्टसद्विशेष्यको द्वितीयाभावविधेयको बोधो जायते न च वाक्यभेदापत्तिरिष्टत्वात् । ननु द्वैतस्य द्वैताभावोद्देश्यतावच्छेदकत्वेऽपि विधेये उद्देश्यतावच्छेदककालावच्छिन्नत्वभानस्यासार्वत्रिकतया प्रकृतवाक्यस्य ताद्दशकालावच्छिन्नत्वबोधे तात्पर्ये मानाभावात् एतद्वाक्यजन्यबोधस्य मिथ्यात्वविषयकत्वं न सिद्ध्यतीति चेन्न अद्वितीयवाक्यस्य ताद्दशबोधे तात्पर्यानभ्युपगमे कालान्तरावच्छेदेनाद्वैताभाववस्तुविषयकधियस्तरति शोकमात्मवित् विद्वान्नामरूपाद्विमुक्तः ज्ञात्वा देवं मुच्यते सर्वपाशैरित्यादि श्रुतिभिर्ज्ञाननाश्यत्वानुनापकदृश्यत्वादिरूपमानान्तरसिद्धत्वेन च तज्जनने वैयर्थ्यापत्तेरन्यवाक्याजनितबोधस्य मिथ्यात्वनिश्चयरूपतयाऽद्वैतसिद्धेर्द्वैतमिथ्यात्वसिद्धिपूर्वकत्वमिति ।

RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

## जगन्मिथ्याऽस्ति दृश्यत्वाज्जडत्वादविभुत्वतः ।

---

तत्रादौ जगन्मिथ्यात्वे प्राचां प्रयोगान्दर्शयति—"जगदिति।" ब्र(१)ह्मणः सद्रूपत्वेन तदभावानधिकरणत्वात् निर्धर्मकत्वेनैवाभावरूपधर्मानधिकरणत्वाच्च न तत्रातिव्याप्तिरित्युक्तं—" सत्वास-

---

(१) यद्यपि सत्वादिधर्माणां तदुपहित एव ब्रह्मणि सम्बन्धित्व तु शुद्धे धर्मधर्मिणोस्तादात्म्यस्वीकारेण तत्त्वज्ञानेन धर्माणां नाशे धर्मिणोऽपि नाशापत्तेः । अथ धर्मिसमानसत्ताकधर्मनाशे सत्येव धर्मिणो नाशः आरोपितस्य वास्तवधर्मत्वाभावात् तन्नाशेऽपि न धर्मिनाशस्तर्हि शुद्धसत्वेऽपि कैवल्ये तत्र धर्माप्रतययात् शुद्धे धर्मो न स्वीक्रियते तदुक्तम् रागेच्छासुखदुःखादि बुद्धौ सत्यां प्रवर्तते । सुषुप्तौ नास्ति तन्नाशे तस्माद्बुद्धेस्तु नात्मन इति तस्माद्यथा शुद्धस्य स्वप्रकाशत्वेन न वृत्तिज्ञानाश्रयत्वादिकं किन्तु तदुपहितएव ब्रह्मणीति वाचस्पतिसम्मतं तथोक्तयुक्तेः सत्वादिधर्मसम्बन्धस्तदुपहित एव ब्रह्मणीति सत्वादिधर्माभावघटितमिथ्यात्वलक्षणं शुद्धब्रह्मण्यतिव्याप्तम् तथापि ब्रह्मणः सद्रूपत्वेन—बाध्यत्वाभाववत्त्वेन भावरूपधर्मानाश्रयत्वेऽपि बाध्यत्वादिशून्यत्वरूपाभावरूपधर्माश्रयत्वान्नातिव्याप्तिः ननु बाध्यत्वाभावादिरूपोधर्मोऽपि न शुद्धे ब्रह्मणि केवलो निर्गुणइत्यादिश्रुतेः भाववदभावेऽपि युक्तेस्तुल्यत्वाच्च न च निर्गुणइत्यत्र गुणमात्रोपादानाद्गुणानात्मकबाध्यत्वाभावरूपधर्मस्वीकारे किं बाधकमिति वाच्यम् । ब्रह्मणि बाध्यत्वाभावस्याबाधितस्य स्वीकारेऽद्वैतश्रुतिविरोधापत्तेः न च बाध्यत्वात्यन्ताभावस्य ब्रह्मस्वरूपत्वे तत्प्रतियोगिबाध्यत्वमेव धर्मं स्यात् प्रतियोग्यभावयोरेकतरस्यावश्यकत्वात् इति वाच्यम् । श्रुतिप्रमितत्वेन साक्षित्वादिना न तस्य बाध्यत्वासम्भवात् ब्रह्मैव हि स्वावच्छेदकाविद्यादीनां प्रकाशरूपतया भासकं यथा चन्द्रबिम्बादि स्वावच्छेदकराहुभासकं एवञ्च ब्रह्मणो यदि कालत्रयेऽभावएव पारमार्थिकः स्यात् बाध्यत्वस्य त्रैकालिकपारमार्थिकनिषेधप्रतियोगित्वरूपत्वात् तदाऽविद्यादीनां भानं कथं स्यात् किञ्च ब्रह्मणउक्तबाध्यत्वावगाहिज्ञानप्रामाण्यनिश्चयं विना नार्थनिश्चयः तादृशप्रामाण्यं च चिद्रूपब्रह्मणैव भास्यं एवञ्च ब्रह्मण एवोक्तनिषेधप्रतियोगित्वे उक्तप्रामाण्यग्राहकस्वरूपा निषेधसाक्षितापि नोपपद्येत न च प्रपञ्चनिषेधसाक्षि ब्रह्म तन्निषेधसाक्षीत्वन्य एवेति स्वीकुर्मइति वाच्यम् अन्योऽपि स्वीक्रियमाणः किं ब्रह्मवद्बाध्यत्वाभाववान्स्वित्पारमार्थिकः आद्ये तद्बाधसाक्षिणान्येन भवितव्यं तस्यापि बाध्यत्वे तद्बाधसाक्षिणाऽप्यन्येनेत्यनवस्था अन्त्ये तदेव ब्रह्मेति स्वीकुर्मः किञ्चैवं सति प्रपञ्चनिषेधसाक्ष्येव लाघवादबाध्यं स्वीकार्यमिति "साक्षी चेता केवलो निर्गुणः" इत्यादिश्रुतिप्रमितस्य बाध्यता न सम्भवतीत्यतआह निर्धर्मकत्वेनैवेति । अभावरूपधर्मानधिकरणत्वात् सत्वाभावरूपधर्माधिकरणत्वस्याऽप्यसम्भवात् तथा च सत्वाभावब्रह्मणि स्वीकृत्यातिव्याप्तिदानमसङ्गतं तस्मादभावरूपधर्मस्य न भावरूपधर्मतुल्ययुक्तिकत्वम्

RUPNATHJI ( DR RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

सत्वासत्वगिरा वक्तुमशक्यं तत्खवर्णवत् ॥ ७ ॥
स्वाधिष्ठाने परे तत्त्वेऽध्यस्तस्य जगतोऽथवा ।
त्रैकालिकनिषेधस्य प्रतियोगितयाऽस्तु तत् ॥ ८ ॥
वस्तुत्वेऽपि निषेधस्य ब्रह्माभिन्नत्वहेतुना ।

---

त्वगिरेति"। ते(१)नेदं प्रथमं जगतोमिथ्यात्वलक्षणं भवतीति प्रदर्शितं ॥ ७ ॥ प्रतिप(२)न्नोपाधौ त्रैकालिकनिषेधप्रतियोगित्वं मिथ्यात्वमिति लक्षणान्तरं दर्शयति—" स्वाधिष्ठाने ति " । अस्तु तत् मिथ्यात्वमित्यर्थः ॥ ८ ॥ ननु त्रैकालिकनिषेधस्य तात्विकत्वेऽद्वैतहानि. प्रातिभासिकत्वे सिद्धसाधनं व्यावहारिकत्वेऽपि तस्य बाध्यत्वेन तात्विकसत्वाविरोधितया श्रुत्यन्तरमद्वैतश्रुतेरतत्वावेदकत्वं च तत्प्रतियोगिनोऽप्रातिभासिकस्य प्रपञ्चस्य पारमार्थिकत्वं च स्यादित्याशङ्क्य समाधत्ते—" वस्तुत्वेऽपीति ।" प्रपञ्चनिषेधाधिकरणीभूतब्रह्माभिन्नत्वान्निषेधस्य तात्विकत्वेपि नाद्वैतहानिकरत्वं ।

---

प्रपञ्चे कल्पितस्य व्यावहारिकधर्मत्वादेरभावस्याधिष्ठानब्रह्मस्वरूपत्वादन्यथा तस्यापि व्यावहारिकत्वे उक्तबाधप्रतिपक्षत्वाऽसम्भवात् ततन्मत्वस्वीकारपक्षेऽपि सत्वब्रह्मस्वरूपादतिरिक्तस्य तदुभयाभावस्वरूपस्य कल्पने गौरवादतिरिक्ततादृशस्वरूपस्वीकारपक्षेऽपि तस्य ब्रह्मणि स्वया सम्बन्धास्वीकारे सत्वाभावस्यापरातिरिक्तस्य युक्त्युक्तसम्बन्धासम्भवान्न कोऽपि दोष इति भाव' ।

( १ ) सत्वात्यन्ताभावासत्वात्यन्ताभावोभयवत्त्व सत्वात्यन्ताभाववत्त्वे सति असत्वात्यन्ताभाववत्त्वं वा मिथ्यात्वलक्षणं पर्यवसितम् सत्त्वञ्च त्रिकालाबाध्यत्वं क्वचिदप्युपाधौ सत्त्वेन प्रतीयमानत्वमसत्त्वमेतदुभयाभाव साध्य इति नार्थान्तर व्याघातोवा शुक्तिरूप्ये प्रसिद्धत्वान्नाप्रसिद्धविशेषणत्वमतोमिलितस्य विशिष्टस्य वाऽप्रसिद्ध्या प्रत्येकप्रसिद्धयोश्च साध्यस्य साधनीयतया प्रत्येकद्वयो प्रत्येक प्रसिद्ध्या प्रत्येकयुक्तसाधनमपि स्यादिति परास्तम् ।

( २ ) प्रतिपन्न स्वप्रकारकधीविशेष्यो य उपाधिरधिकरण तन्निष्ठो यस्त्रैकालिकनिषेधोऽत्यन्ताभावस्तत् प्रतियोगित्वमित्यर्थ । कपालादिनिष्ठभेदध्वंसादिप्रतियोगित्वमादाय सिद्धसाधनवारणाय त्रैकालिकेति ।

RUPNATHJI (DR. RUPAK NATH)
www.astrology-tantra.com

नाद्वैतहानिर्नो वास्ति प्रपञ्चस्यापि वस्तुता ॥ ९ ॥
अतात्त्विकोनिषेधोऽपि व्यावहारिक इष्यते ।
विरोधस्तुल्यसत्वेन विश्वतत्प्रतिषेधयोः ॥ १० ॥
क्वचित्प्रतीत्यनर्हत्वमत्यन्तासत्वमुच्यते ।
न तथात्त्वं प्रपञ्चस्य स्वाधिष्ठाने प्रतीतितः ॥ ११ ॥
अतो न तुच्छतापत्तिः शुक्तिरूप्यवदस्य तु ।
अनिर्वाच्यस्य मिथ्यात्वं सिध्यमारोपितत्वतः ॥ १२ ॥
मिथ्यात्वाभावसत्वस्य ब्रह्मरूपत्वमिष्यते ।

---

ननु तात्त्विकाभावप्रतियोगिनः प्रपञ्चस्य तात्त्विकत्वापत्तिः स्यादित्यत आह—" नो वेति । " तात्त्विकाभावप्रतियोगिनि शुक्तिरजतादौ कल्पिते व्यभिचारादिति भावः ॥ ९ ॥ अतात्त्विकत्वेपि न प्रातिभासिक. किन्तु व्यावहारिक इत्याह—"अतात्त्विक इति" ननु तर्हि निषेधस्य बाध्यत्वेन तात्त्विकसत्त्वाविरोधित्वादर्थान्तरं नेत्याह—" विरोध इति । " निषेधस्य बाध्यत्वं पारमार्थिकसत्वाविरोधित्वे न तन्त्रं किन्तु निषेध्यापेक्षया न्यूनसत्ताकत्त्वं प्रकृते तुल्यसत्ताकत्वात्तथं न विरोधित्वमित्यर्थ. ॥ १० ॥ नन्वेवमत्यन्तासत्त्वापातः प्रतिपन्नोपाधौ त्रैकालिकनिषेधप्रतियोगित्त्वं हि अन्यत्रासत्वेन संप्रतिपन्नस्य घटादेः सर्वत्र त्रैकालिकनिषेधप्रतियोगित्वपर्यन्तं अन्यथा तेषामन्यत्र सत्त्वापातात् न हि तेषामन्यत्र सत्ता सम्भवतीति तव सिद्धान्तस्तथा च कथमसद्वैलक्षण्यमित्याशङ्क्याह—" क्वचिदित्यादि " द्वाभ्यां । अयमर्थः सर्वत्र त्रैकालिकनिषेधप्रतियोगित्वं यद्यपि तुच्छानिर्वचनीययोः साधारणं तथापि क्वचिदप्युपाधौ सत्वेन प्रतीत्यनर्हत्वमत्यन्तासत्वं तच्च शुक्तिरूप्ये प्रपञ्चे च बाधात्पूर्वं नास्त्येवेति न तुच्छतापत्तिरिति ॥ ११ ॥ १२ ॥

अधिकरणातिरिक्ताभावानभ्युपगमेनोक्तमिथ्यात्वाभावरूपसत्व-

www.astrology-tantra.com
RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )

नित्यत्वं स्वप्रकाशत्त्वं विभुत्वं ब्रह्मणस्तथा ॥ १३ ॥
पूर्णत्वमपरिच्छिन्नतया दिक्कालवस्तुभिः ।
निर्द्धर्मकतया सर्वधर्माभावस्य सम्भवात् ॥ १४ ॥
तत्वज्ञाननिवर्त्यत्वं मिथ्यात्वं जगतोऽस्तु वा ।
ज्ञानप्रयुक्तावस्थानसामान्यविरहस्य यत् ॥ १५ ॥
प्रतियोगित्वमेवैतन्निवर्त्यत्वं मतं यतः ।
हेत्वात्मना स्वरूपेण चावस्थानं द्विधा मतं ॥ १६ ॥
ब्रह्मज्ञानप्रयुक्तेयं विरहप्रतियोगिता ।
न घटे मुद्गरापातात्सा भवेद्धेत्ववस्थितौ ॥ १७ ॥

---

त्वस्य ब्रह्मस्वरूपत्वमेवेत्यभिप्रेत्याह—"मिथ्यात्वेत्यर्द्धेन।" जगतोमिथ्यात्वव्याख्यानेन तदधिष्ठानस्य ब्रह्मणो नित्यत्वस्वप्रकाशत्वादिकमपि व्याख्यातमित्याह—"नित्यत्वमिति।" कालपरिच्छेदाभावोनित्यत्वं, परप्रकाश्यत्वाभावो हि स्वप्रकाशत्वं, देशपरिच्छेदाभावो विभुत्वं वस्तुपरिच्छेदाभावः परिपूर्णत्वमित्यर्थः ॥ १३ ॥ भावरूपधर्माश्रयत्वेपि ब्रह्मण. सर्वधर्माभावरूपत्वेन न काप्यनुपपत्तिरित्याह—"निर्द्धर्मकतयेति" ॥ १४ ॥ ज्ञाननिवर्त्यत्वं मिथ्यात्वमिति लक्षणान्तरमाह—"तत्त्वज्ञानेति।" ननूत्तरज्ञाननिवर्त्ये पूर्वज्ञानेऽतिव्याप्तिर्मुद्गरपातादिनिवर्त्ये च घटादावव्याप्तिरित्याशङ्क्याह—"ज्ञानप्रयुक्तेति।" ज्ञानप्रयुक्तावस्थितिसामान्यविरहप्रतियोगित्वं हि ज्ञाननिवर्त्यत्वं, अवस्थितिर्द्वेधा स्वरूपेण कारणात्मना च सत्कार्यवादाभ्युपगमात् तथा च मुद्गरपातेन घटस्य स्वरूपेणावस्थितिविरहेपि कारणात्मनाऽवस्थितिविरहाभावाद्ब्रह्मज्ञानप्रयुक्त एव स इति नातीतघटादावव्याप्तिरिति त्रयाणां समुदितार्थः ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥

DR.RUPAK NATH
www.astrology-tantra.com

अज्ञानस्य स्वकार्येण प्रविलीनेन वा सह।
वर्त्तमानेन वा ज्ञानान्निवृत्तिर्बाध इष्यते ॥ १८ ॥
तत्वमस्यादिवाक्योत्थसम्यग्धीजन्ममात्रतः।
अविद्या सह कार्येण नासीदस्ति भविष्यति ॥ १९ ॥
रूप्योपादानमज्ञानं स्वकार्येण सहैव तत्।
स्वाधिष्ठानस्य विज्ञानात्साक्षात्कारान्निवर्त्तते ॥ २० ॥
ज्ञानत्वव्याप्यधर्मेण तत्वज्ञाननिवर्त्तता।
यद्वा ज्ञाननिवर्त्यत्वं साक्षात्कारतयेष्यते ॥ २१ ॥

---

तत्र विवरणाचार्योक्तमर्थं श्लोकेन सङ्गृह्णाति—"अज्ञानस्येति" उत्तरज्ञानेन लीनस्य पूर्वज्ञानस्य स्वकारणात्मनाऽवस्थानाद्वस्थिति-सामान्यविरहानुपपत्तेः नृशृङ्गादौ तत्त्वेऽपि तस्य ज्ञानप्रयुक्तत्वाभावान्नातिव्याप्तिरित्यर्थः ॥ १८ ॥ तत्रैव वार्त्तिककृत्संमतिमाह—" तत्त्वमसीति।[1]" सह कार्येण नासीदिति लीनेन कार्येण सह निवृत्त्यभिप्रायं सह कार्येण न भविष्यतीति तु भाविकार्येनिवृत्त्यभिप्रायमितरन्यदेतदिति भावः ॥ १९ ॥ शुक्तिरजतादेश्चापरोक्षप्रतीत्यन्यथानुपपत्त्या प्रतिभासकालेऽवस्थित्यङ्गीकाराच्च बाधकज्ञानं विना तद्विरह इति न साध्यविकलतेत्यभिप्रेत्याह—" रूप्योपादानमिति " ॥ २० ॥ ज्ञानत्वव्याप्यधर्मेण ज्ञाननिवर्त्त्यत्वमित्यपि साध्यत्वयाह—" ज्ञानत्वेति। " तथाचोत्तरज्ञानस्य पूर्वज्ञाननिवर्त्तकत्वं च न ज्ञानत्वव्याप्यधर्मेण किं त्विच्छादिसाधारणेनोक्तव्यात्मविशेषगुणत्वेनोदीच्यत्वेन वेति न सिद्धसाधनादीत्यभिप्रायः वस्तुतस्तु साक्षात्कारत्वेन ज्ञाननिवर्त्यत्वं विवक्षितमित्यभिप्रेत्याह—" यद्वेति " ॥ २१ ॥ लक्षणान्तरमाह—" यद्वेति। " तच्च स्वा-

---

(१) बृहदारण्यकसम्बन्धवार्तिक श्लो० १८३।

DR. RUPAK NATH
RUPNATHJI (DR. RUPAK NATH)
www.astrology-tantra.com

यद्वा स्वाश्रयनिष्ठस्यात्यन्ताभावस्य सर्वथा ।
प्रतियोगित्वमेवास्तु मिथ्यात्वं साधुसम्मतं ॥ २२ ॥
मिथ्यात्वं सद्विविक्तं वा मानसिद्धं सदिष्यते ।
दोषासहकृतज्ञानकरणं मानमीर्यते ॥ २३ ॥
मिथ्यात्वस्यापि मिथ्यात्वे प्रपञ्चे सत्यता न हि ।

---

त्यन्ताभावसमानाधिकरण एव सत्त्वेन प्रतीयमानत्वं अत पूर्वैव-लक्षण्यमित्यर्थः ॥ २१ ॥ लक्षणान्तरमाह—"सद्विविक्तमिति" सत्वं च प्रमाणसिद्धत्वं प्रमाणत्वं च दोषास(१)हकृतज्ञानकरणत्वं, तेन स्वप्नादिवत्प्रमाणसिद्धभिन्नत्वेन मिथ्यात्वं सिद्ध्यति, अत्राप्यसति निर्द्धर्मके ब्रह्मणि चातिव्याप्तिवारणाय सत्त्वेन प्रतीयमानत्वं विशेषणं देयं तयोः सत्वप्रकारकप्रतीतिविषयत्वाभावादिति ॥ २३ ॥

॥ मिथ्यात्वनिरुक्तिः ॥

ननूक्तमिथ्यात्वस्य मिथ्यात्वे प्रपञ्चसत्यत्वापत्तिरेकस्मिन्धर्मिणि प्रसक्तयोर्विरुद्धधर्मयोरेकमिथ्यात्वेऽपरसत्यत्वनियमात् मिथ्यात्वसत्यत्वे च तद्वदेव प्रपञ्चसत्यत्वापत्तेरुभयथाप्यद्वैतव्याघात इत्याशङ्क्याह—" मिथ्यात्वस्येति " । यत्र मिथ्यात्वावच्छेदकमुभयवृत्ति न भवेत्तत्र हि विरुद्धयोर्धर्मयोरेकमिथ्यात्वेऽपरसत्यत्वं भ-

---

(१) दोषाश्रया ज्ञाने निमित्तकारणमविद्या तादृशकारणतानिरूपकं तत्त्वमस्यादिवेदान्तवाक्यजन्यज्ञान तस्य सर्वस्य भ्रमत्वात् तद्विषयस्य मिथ्यात्व सिध्यति ननु शुद्धब्रह्मणो ब्रह्मविषयत्वपक्षे तत्त्वमस्यादिवाक्यजन्यज्ञानस्य स्वोपहित ब्रह्मैव विषय इति उपहितस्य मिथ्यात्वेन तज्ज्ञानस्य प्रमात्व कथमिति चेन्न, अबाधितस्य वृत्तिविषयत्वोपहित रूपस्य ज्ञानस्य विषयत्त्व प्रमात्व घटादिक वृत्तिविषयत्वानुपहितमपि वृत्तिविषयस्तथापि सर्वस्य ज्ञानस्य स्वविषयत्वोपहितमपि विषय, घटाद्याकारवृत्तिश्च न मिथ्येति भ्रमकाले ज्यार्थं सत्यत्त्व जानता घटाद्याकारवृत्ते प्रमात्त्वव्यवहारो जायत एव तथा चोक्तदोषानिमित्तकारणतानिरूपकान्यधीविषयोयस्तदन्यत्व मिथ्यात्व ज्ञानकरणादिनिवेशे प्रयोजनाभावादिति ध्येयम् ।

RUPNATHJI( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

दृश्यत्वादेर्निषेध्यत्वावच्छेदकतयेष्यते ॥ २४ ॥
मिथोविरहरूपत्वेऽसमसत्ताकयोर्न हि।
विरोधः सत्वमिथ्यात्वधर्मयोर्वा समुच्चयात् ॥ २५ ॥
व्यावहारिकमिथ्यात्वं व्यावहारिकसत्यता।
हरन्नापीह सत्यत्वं जातु काल्पनिकं हरेत् ॥ २६ ॥
मिथ्यात्वसाधने हेतुर्दृश्यत्वं तन्निरूप्यते।

---

वेत् यथा रजतत्वतदभावयोः शुक्तौ, तत्र निषेध्यतावच्छेदकभेदनियमात् प्रकृते तु निषेध्यतावच्छेदकमेकमेव दृश्यत्वादि तथा च न प्रपञ्चसत्यत्त्वापत्तिर्न वाऽद्वैतव्याघात इति तात्पर्यार्थः ॥ २४ ॥ प्रकारान्तरेण परिहारमाह—“ मिथ इति ” द्वाभ्यां—। “ असमेति ” छेदः। एतदुक्तं भवति, परस्परविरहरूपत्वेऽपि विषमसत्ताकयोरविरोधः व्या(१)वहारिकसत्यत्वापहारेऽपि काल्पनिकसत्यत्वानपहारात्तार्किकमतसिद्धसंयोगतदभाववत्सत्यत्वमिथ्यात्वयोः समुच्चयाभ्युपगमाच्चैकसाधकेनापरस्य बाध्यत्वं विषमसत्ताकत्वे प्रयोजकं यथा शुक्तिरूप्यतदभावयोः, एकबाधकबाध्यत्वं च समसत्ताकत्वे प्रयोजकं यथा शुक्तिरूप्यशुक्तिभिन्नत्वयोः अस्ति च प्रपञ्चतन्मिथ्यात्वयोरेकब्रह्मज्ञानबाध्यत्वं अतः समसत्ताकत्वान्मिथ्यात्वबाधकेन प्रपञ्चस्यापि बाधान्नाद्वैतहानिरिति ॥ २५ ॥ २६ ॥

॥ मिथ्यात्वमिथ्यात्वोपपत्तिः ॥

मिथ्यात्वे साध्ये हेतूक्तं यद्दृश्यत्वं तदुपपादनप्रतिज्ञामाह—“ मिथ्यात्वेति ”। लक्षणमाह—“ शब्देति ”। शब्दाजन्यवृत्तिविषयत्वमेव दृश्यत्वं अन्यथा शशविषाणं तुच्छ-

---

( १ ) व्यावहारिकमिथ्यात्वं नेति शेषः।

DR. RUPNATHJI (DR. RUPAK NATH)
www.astrology-tantra.com

शब्दादजन्यधीवृत्तिविषयो दृश्यमिष्यते ॥ २७ ॥
न शुद्धतुच्छयोरेवं व्यभिचारो यतस्तयोः ।
शब्दजन्यैकधीवृत्तिगोचरत्वं मतं द्वयोः ॥ २८ ॥
सप्रकारकधीवृत्तिविषयत्वं तदस्तु वा ।
कश्चिद्धर्मोऽस्ति सोपाख्यः प्रकारो वृत्तिगोचरः ॥ २९ ॥
न निष्प्रकारकज्ञानविषये शुद्धचिद्धने ।
व्यभिचारो न वा तुच्छे निरुपाख्यप्रकारगे ॥ ३० ॥
चैतन्यविषयत्वं वा चित्सम्बन्धित्वरूपधृक् ।
न चिति व्यभिचारोऽस्य सम्बन्धस्याप्यभावतः ॥ ३१ ॥
यद्वा स्वव्यवहारे स्वातिरिक्तायाः स्वसंविदः ।

---

मित्यादिशब्दजन्यवृत्तिविषये तुच्छे व्यभिचारस्य दुरुद्धरत्वात् एवं सति शुद्धस्य वेदान्तजन्यवृत्तिविषयत्वेऽपि न तत्र व्यभिचारः तु(१)च्छशुद्धयोः शब्दाजन्यवृत्त्यविषयत्वानभ्युपगमात् इति द्वयोरर्थः॥२७॥२८॥

लक्षणान्तरमाह—" सप्रकारकेति " द्वाभ्यां ॥ २९ ॥ ३० ॥

लक्षणान्तरमाह—" चैतन्येति " । यथाकथञ्चिच्चित्सम्बन्धित्वरूपं हेतुः तत्र न चैतन्ये अभेदेन भेदनान्तरीयकस्य सम्बन्धस्याभावादतो न व्यभिचार इत्यर्थः ॥ ३१ ॥ लक्षणान्तरमाह—" यद्वेति " त्रिभिः । स्वव्यवहारे स्वातिरिक्तसंविदपेक्षानियतिरूपं दृश्यत्वं हेतुः स्वपदशब्देन च विषयाभिव्यक्तं वृत्त्यभिव्यक्तं वा शुद्धं वा चैतन्य-

---

(१) शब्दज्ञानानुपाती वस्तुशून्यो विकल्प इति पातञ्जलसूत्रोक्तविकल्पाख्यशब्दजन्यवृत्तिविषयस्तुच्छ, ब्रह्मापि "फलव्याप्यत्वमेवास्य शास्त्रकृद्भिर्निराकृतम । ब्रह्मण्यज्ञाननाशाय वृत्तिव्याप्तिरपेक्ष्यते" इत्युक्तरीत्या श्रुतिजन्यवृत्तिविषय इति हेतुसत्त्वान्न व्यभिचार इति भावः।

www.astrology-tantra.com
RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )

अपेक्षावत्त्वमेवास्तु दृश्यत्वं हेतुरंजसा ॥ ३२ ॥
शुद्धं वा वृत्त्यभिव्यक्तं चिन्मात्रं वा घटादिगं।
संविच्छब्देन तेनासौ व्यवहारोपि सर्वगः ॥ ३३ ॥
ब्रह्मणः स्फूर्तिरूपे स्वातिरिक्ताया न संविदः।
व्यवहारे नित्यसिद्धेऽपेक्षाऽस्तीति न दृश्यता ॥ ३४ ॥
अस्तु वाऽस्वप्रकाशत्वं दृश्यत्वं ब्रह्मगं न तत्।
ब्रह्मणः स्वप्रकाशत्वं यत्साक्षादिति च श्रुतेः ॥ ३५ ॥
स्वापरोक्ष्येऽनपेक्षत्वं स्वप्रकाशत्वमन्यतः।
अन्याधीनापरोक्षत्वाद्दृश्यत्वं स्याद्घटादिषु ॥ ३६ ॥

---

मभिप्रेतं तथा च घटादौ नित्यातीन्द्रिये घटादिभास्ये च सर्वोपि व्यवहारः स्वातिरिक्तसंवित्सापेक्ष इति नासिद्धिः व्यवहारश्च स्फुरणाभिवदनादिसाधारणस्तत्र ब्रह्मणः स्फुरणरूपे व्यवहारे नित्यसिद्धे स्वातिरिक्तसंविदपेक्षैव नास्तीति नियतिपदेन व्यभिचारवारणं स्वगोचरयावद्व्यवहारे स्वातिरिक्तसंविदपेक्षायां पर्यवसानादिति त्रयाणां समुदितार्थः ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥

लक्षणान्तरमाह—" अस्तुवे "ति द्वाभ्यां। अस्वप्रकाशत्वं दृश्यत्वं स्वप्रकाशत्वं हि स्वापरोक्षत्वे स्वातिरिक्तानपेक्षत्वं 'यत्सा(१)-क्षादपरोक्षाद्ब्रह्मेति' श्रुतेः तथा चान्यानधीनापरोक्षत्वं पर्यवसितं तन्निरूपितभेदवत्त्वं हेतुः तच्च नित्यपरोक्षेऽन्याधीनापरोक्षे च घटादावस्तीति नासिद्धिः। न च ब्रह्मणो ब्रह्मप्रतियोगिककाल्पनिकभेदवत्त्वात्तत्र व्यभिचारः अकल्पितभेदस्य कार्प्यसिद्धत्वादिति वाच्यं। तद्भेदस्यान्यानधीनापरोक्षत्वरूपधर्मानिरूपितत्वात् जीवत्वेश्वरत्वादिरूपस्यान्यस्यैव धर्मस्य तन्निरूपकत्वादिति वा(२)तात्पर्यार्थ ॥३५॥३६॥

---

(१) बृहदारण्यके ३ ४-१। (२) वा इति पुस्तकान्तरे नास्ति।

RUPNATHJI (DR. RUPAK NATH) www.astrology-tantra.com

अवेद्यन्त्वेऽपरोक्षैकयोग्यताभावरूपि तत् ।
दृश्यत्वं तत्र नासिद्धिर्हेतुवैकल्यमेव वा ॥ ३७ ॥
जडत्वमपि हेतुः स्याज्जगन्मिथ्यात्वसाधकं ।
अज्ञानत्वं जडत्वं स्यादनात्मत्वमथास्तु वा ॥ ३८ ॥
अर्थोपलक्षितं भानं ज्ञानत्वेनोच्यते श्रुतौ ।
तन्न व्यभिचरेन्मोक्षदशायामपि चिद्घने ॥ ३९ ॥
एवमानन्दाभिन्नन्त्वमनात्मत्वं भवेन्नवा ।
ब्रह्मत्वं विषयोत्थेऽपि सुखे ज्ञानात्मनि स्वतः ॥ ४० ॥

---

एवं चावेद्यत्त्वे सत्यपरोक्षव्यवहारयोग्यत्वाभावरूपं दृश्यत्वमपि हेतुरित्याह—" अवेद्यन्त्वे इति ।" ननु फलव्याप्यत्वाभावविशिष्टं यदपरोक्षव्यवहारयोग्यत्वं तस्य ब्रह्मणीवाविद्यान्तःकरणादौ शुक्तिरूप्यादौ च सत्वेनासिद्धिः साधनवैकल्ये स्यातामित्याशङ्क्याह— " न चेति(१) ।" अज्ञाननिवर्त्तकवृत्तिविषयत्वयोग्यत्वस्यापरोक्षव्यवहारयोग्यत्वपदेन विवक्षितत्त्वात्तस्य चाविद्यादौ शुक्तिरूप्यादौ चासत्त्वान्नासिद्धिसाधनवैकल्ये इति दृश्यत्वहेतूपपत्तिरित्यर्थः ॥३७॥

॥ दृश्यत्वहेतूपपत्तिः ॥

जडत्वमपि मिथ्यात्वे हेतुरित्याह—" जडत्वमिति "। अर्थोपलक्षितप्रकाशस्यैव ज्ञानत्वेन मोक्षदशायामपि तदनपायादज्ञानत्त्वं जडत्वमिति पक्षे नात्मनि व्यभिचारः ज्ञानस्य सज्ञेयत्वं सज्ञातृत्वं न स्वाभाविकं किन्त्वौपाधिकं उपाधिविलये तथात्वस्य सत्वादिति तात्पर्यार्थः ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ अनात्मत्त्वं जडत्वमिति पक्षेप्याह— "एवमिति"। वैषयिकानन्दस्यापि ब्रह्मरूपत्वात्तदुपाधिमात्रस्यैवोत्पत्तिविनाशप्रतियोगित्वात्तथा चानन्दभिन्नत्वमनात्मत्वमिति सुष्ठुक्तमिति भावः ॥ ४० ॥ जडत्त्वहेतूपपत्तिः ।

---

( १ ) नचेति प्रतीकं मूलासम्बद्ध दृश्यते तत्स्थाने नासिद्धिरित्येव युक्तमिति धेयम् ।

DR.RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

परिच्छिन्नत्वमप्यस्ति हेतुर्मिथ्यात्वसाधने।
दिक्कालवस्तुविच्छेदशून्यत्वादात्मगं न तत् ॥ ४१ ॥
स्वान्यूनसमसत्ताकाभावैकप्रतियोगिता।
अस्त्यज्ञानवियन्मुख्ये नातोसिद्धिरिहेष्यते ॥ ४२ ॥
तस्माद्वेति श्रुतिः प्राह जन्यत्वं वियदादिषु।

---

परिच्छिन्नत्वमपि मिथ्यात्वे हेतुरित्याह— "परिच्छिन्नत्वमिति"। तद्देशतो वस्तुतः कालतश्चेति त्रिविधं, तत्र देशतः परिच्छिन्नत्वमत्यन्ताभावप्रतियोगित्वं कालतः परिच्छिन्नत्वं ध्वंसप्रतियोगित्वं वस्तुतः परिच्छिन्नत्वमन्योन्याभावप्रतियोगित्वं। ननु समवायसम्बन्धेनात्यन्ताभावप्रतियोगित्वमात्मनि व्यभिचारि तस्याप्याकाशवत्काप्यसमवेतत्वात् तथाऽन्योन्याभावप्रतियोगित्वमपि तत्र व्यभिचारि तस्य जडनिष्ठान्योन्याभावप्रतियोगित्वादन्यथा जडत्वापत्तेरित्याशङ्क्याह—"दिक्कालेत्यादिना"। अत्यन्ताभावेऽन्योन्याभावे च धर्मिप्रतियोगिसमसत्ताकत्वविशेषणेनात्मनि व्यभिचारपरिहारादिति भावः ॥ ४१ ॥ अज्ञानाकाशादौ च स्वसमानसत्ताकात्यन्ताभावान्योन्याभावप्रतियोगित्वसत्त्वेनासिद्धमभावात् अविद्याकाशादेर्व्यावहारिकस्य पारमार्थिकाभावपक्षे स्वान्यूनसत्ताकेति विशेषणदाने नासिद्धिरित्याह—"स्वान्यूनेति"। ॥ ४२ ॥ ननु ध्वंसप्रतियोगित्वमाकाशादावसिद्धं तेषां परैर्नित्यत्वाभ्युपगमादित्यत आह—" तस्माद्वा इति "। 'तस्माद्वा(१)एतस्मादात्मन आकाशः सम्भूतः' इति श्रुतिर्निसिद्धजन्यत्वेनानुमितत्वान्नाकाशादौ ध्वंसप्रतियोगित्वमसिद्धं 'आकाशवत्सर्व-

---

(१) तैत्तिरीयोपनिषदि ब्रह्मवल्ल्या १ अनुवाके।

अतोऽन्यदार्तमित्याह ब्रह्मभिन्नं विनश्यति ॥ ४३ ॥
घटाद्याः स्वानुगस्फूर्तिवस्तुन्यारोपिता इमे ।
विभक्तत्वाद्यथा सर्पमालाद्या रज्ज्विदंलवे ॥ ४४ ॥
अस्ति प्रतीयमानत्वं स्वाभाववति वस्तुनि ।
कल्पितत्वं निवर्त्यत्वं स्वरूपज्ञानतोऽथवा ॥ ४५ ॥

---

गतश्च नित्य' इत्यत्र चात्मनिदर्शनत्वं स्वसमानकालीनसर्वगतत्वेन आभूतसंप्लवावस्थायित्वेन चेति द्रष्टव्यं । 'अतो(१)ऽन्यदार्तमिति' श्रुत्याऽनात्ममात्रस्यैव विनाशित्वप्रतिपादनादिति भाव ॥ ४३ ॥

॥ परिच्छिन्नत्वहेतुस्मृत्ति ॥

अत एव घटादयः स्वानुगतप्रतिभासे वस्तुनि कल्पिताः विभक्तत्वात् यथा सर्पमालादिकं स्वानुगतप्रतिभासं रज्ज्वा इदमंशे विभज्यते एवं ब्रह्मण्यनुगच्छति घटादिकं विभज्यते सन्घट सन्पट इत्यानन्दबोधोक्तमपि साधु इत्यभिप्रेत्याह—"घटाद्या इति" । रज्ज्विदंलवे—रज्ज्वा इदमंशे इत्यर्थः । विभक्तशब्देन स्वसमानसत्ताकभेदप्रतियोगिस्वरूपवस्तुपरिच्छेदस्य विवक्षितत्वात् न ब्रह्मतुच्छयोर्व्यभिचार इति भाव ॥ ४४ ॥ अत एव घटादिकं सद्रूपकल्पितं प्रत्येकं तदनुविद्धत्वेन प्रतीयमानत्वात् प्रत्येकं चन्द्रानुविद्धजलतरङ्गचन्द्रवदिति ब्रह्मसिद्धिकारोक्तमपि साधु इत्यभिप्रेत्याह—"अस्तीति"। ननु सदर्थस्य ब्रह्मणो रूपादिहीनस्याऽऽसंसारमज्ञानावृतस्य शब्दैकगम्यस्य कथं घटः सन्नित्यादिबुद्धिविषयता तथात्वे वा कथं सहेतुकस्य निवृत्तिरित्याशङ्क्य स्वरूपेणाप्रत्यक्षस्य राहोश्चन्द्रावच्छेदेनेव ब्रह्मणोपि घटाद्यवच्छेदेनैव प्रत्यक्षता, स्वरूपज्ञानस्यैव सहेतुकस्य निवर्त्तकत्वं न घटाद्यवच्छिन्नज्ञानस्येत्यभिप्रेत्याह—" निवर्त्यत्वमिति " ॥ ४५ ॥ मिथ्यात्वे चित्सुखानुमानमपि दर्शयति—

---

(१) बृहदारण्यके ३ । ४ । २

DR. RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

स्वोपादानैकनिष्ठस्यात्यन्ताभावस्य सर्वथा ।
प्रतियोगी पटोऽयं स्यादंशित्वादितरांशिवत् ॥ ४६ ॥
मिथ्यात्वसाधकाः सर्वे ये दृश्यत्वादिहेतवः ।
सोपाधिके न सन्त्येत उपाधेरनिरूपणात् ॥ ४७ ॥

---

" स्वोपादानेति " । अयं पटः एतत्तन्तुनिष्ठात्यन्ताभावप्रतियोगी अंशित्वादितरांशिवदिति तत्र तन्तुपदं उपादानपरं अत उक्तं— " स्वोपादानेति " । स्वोपादाननिष्ठात्यन्ताभावप्रतियोगित्वलक्षणमिथ्यात्वसिद्धिरित्यर्थः ॥ ४६ ॥

॥ आनन्दबोधब्रह्मसिद्धिकाराभिमतानुमानोपपत्तिः ॥

ननु दृश्यत्वादिहेतवः सोपाधिकास्तथा हि स्वबाधकाभिमताबाध्यदोषप्रयुक्तभानत्वं स्वबाधकाबाधकं प्रति निषेध्यत्वेन विषयत्वं वा विपक्षाद्व्यावृत्तं समव्याप्तमत एव व्यतिरेकव्याप्तिमदुपाधिरिति तत्राह—" दृश्यत्वादिहेतव इति " । " उपाधेरनिरूपणादिति " । एतदुक्तंभवति, ब्रह्मज्ञानमात्रबाध्ये देहात्मैक्ये मिथ्याभूते साध्याव्यापकत्वात् पर्वतावयववृत्त्यन्यत्वादिवत्साधनवत्पक्षमात्रव्यावर्त्तकविशेषणवत्त्वेन पक्षेतरतुल्यत्वाच्च बाधोन्नीतत्वात् स्वबाधकाभिमताबाध्यदोषप्रयुक्तभानत्वं न मिथ्यात्वव्यापकं दोषप्रयुक्तभानत्वं तु भवति व्यापकं तच्च साधनव्यापकमपीति नोपाधिः दृश्यत्वादिनैव मिथ्यात्ववत्तस्यापि साधनात् एवं द्वितीयोपाधावपि स्वबाधकाबाध्यबाधकं प्रतीति विशेषणं व्यतिरेकसाधने व्यर्थं विशेष्यभागस्तु साध्यसाधनयोर्व्यापक इति नोपाधिर्नापि श्रुतितात्पर्याविषयत्वमुपाधिः श्रुतितात्पर्यविषयत्वस्य ब्रह्ममात्रनिष्ठतया तदभावस्य साधनव्यापकत्वादिति ॥ ४७ ॥

॥ मिथ्यात्वानुमाने सोपाधिकत्वभङ्गः ॥

DR.RUPNATHJI(DR.RUPAK NATH)
www.astrology-tantra.com

आभाससाम्यं नाप्येषां नैते बाधितगोचराः ।
प्रत्यक्षयोग्यसत्त्वस्यानिरुक्तेर्बाधकं न तत् ॥ ४८ ॥
तस्माद्ध्यक्षयोग्यस्य सत्त्वस्येहानिरुक्तितः ।

---

ननु विमतं प्रातिभासिकं दृश्यत्वात्, ब्रह्म मिथ्या व्यवहारविषयत्वा-द्सद्विलक्षणत्वाद्वा शुक्तिरूप्यवदित्याभाससाम्यमित्याशङ्क्य निरा-चष्टे—" आभासेति "। जगतो व्यावहारिकसत्त्वे बाध्ये व्यवहा-रानुपपत्तिर्ब्रह्मणो मिथ्यात्वे शून्यवादापत्तिश्चेति प्रतिकूलतर्कपराह-तेन तयोरसाधकत्वात् प्रकृते च प्रतिकूलतर्कस्य निरसिष्यमाणत्वात्। प्रातिभासिकत्वं ब्रह्मज्ञानेतरबाध्यत्वं चेत्साध्ये देहात्मैक्ये व्यभिचा-रोऽप्रयोजकत्वञ्च प्रतिभासमात्रशरीरत्वं चेद् दृष्टिसृष्टिमतेन सिद्ध-साधनं, ब्रह्मणि मिथ्यात्वं साध्ये सोपाधिके सिद्धसाधनं निरुपाधिके व्यवहारविषयत्वरूपो हेतुरसिद्ध. एवमसद्विलक्षणत्वं क्वचिदप्युपाधौ सत्त्वेन प्रतीत्यर्हत्वरूपं शुद्धे ब्रह्मणि नास्त्येव ब्रह्मणोऽबाध्यत्वेन बाध्य-त्वलक्षणमिथ्यात्वसाधने विरोधाद्, दृष्टान्तस्तु साधनविकल इत्यर्थः ।

॥ मिथ्यात्वानुमान आभाससाम्यभङ्गः ॥

ननु सन् घट इत्याद्यध्यक्षबाधितविषया दृश्यत्वादय इत्याश-ङ्क्य परिहरति—" नैत इति "। चक्षुरादिप्रत्यक्षयोग्यामिथ्या-त्वविरोधिसत्त्वानिरुक्तेः, तथाहि न तावत् प्रमाविषयत्वं तद्योग्यत्वं भ्रमाविषयत्वं वा तादृक्सत्त्वं चक्षुराद्यगम्यभ्रमप्रमाघटितत्वेन चक्षु-राद्ययोग्यमिति न प्रत्यक्षस्य तद्बाधकत्वमित्यर्थ. । तथा च प्रपञ्चप्र-त्यक्षस्य तात्त्विकत्वागोचरत्वेऽपि अतत्त्वावेदकत्वसम्भवान्न तेन त-द्बाध इति भावः ॥४८॥ तस्मात्प्रत्यक्षयोग्यसत्त्वानिरुक्त्या प्रत्यक्षबाधो-

३

नाध्यक्षबाधो मिथ्यात्वलिङ्गस्यात्रोपपद्यते ॥ ४९ ॥
न(१)लौकिकं न सामान्यजन्यं साक्ष्यात्मकं च न ।
प्रत्यक्षं बाधते लिङ्गं मिथ्यात्वस्यानुमापकं ॥ ५० ॥
सन्घटश्चेत्यधिष्ठानब्रह्मवस्त्ववभासते ।
यथेदं रूप्यमित्यत्र भातीदं रजताश्रयः ॥ ५१ ॥
रूपादिहीनकालादेरक्षगोचरता यथा ।
तथा रूपादिहीनस्य ब्रह्मणः किं न सम्भवेत् ॥ ५२ ॥

---

द्धार. सिद्ध इत्युपसंहरति—"तस्मादिति" द्वाभ्यां ॥४९॥५०॥

॥ प्रत्यक्षयोग्यसत्त्वानिरुक्त्या प्रत्यक्षबाधोद्धारः ॥

किञ्चेदं रूप्यमित्यत्रेदमितिवत् सन्घट इत्यत्रापि सदित्यधिष्ठानभूतं ब्रह्मैव भासते इत्याह—"सन्निति"। इदं रजताश्रयः इदमिति रजतस्याधिष्ठानमित्यर्थः। ननु रूपादिहीनस्य ब्रह्मणः कथं चाक्षुषादिज्ञाने स्फुरणमिति तत्राह—"रूपादीति" सार्द्धेन॥५२॥ किञ्च निश्चितप्रामाण्यमेव प्रत्यक्षमितरबाधकं भवद्भवेत् न चात्र प्रामाण्यं निश्चितमागमविरोधाद्धाविबाधाभावानिर्णयाच्चेत्याह—"न वेति"। मात्त्वं-प्रामाण्यं। ननु प्रत्यक्षमेव प्रबलमनुमानाग-

---

(१) यथाह [illegible]मते ब्रह्मणि यत्सत्त्वमभ्युपगम्यते तदेव मन्मते जगत्यपि, तन्निष्ठ च सत्त्व नापि [illegible] तस्य तुच्छेऽपि सत्त्वात्किन्त्वन्यदेव तच्च प्रपञ्चेऽपि भविष्यतीति चेन्न, स्वप्रकाशाद्वितीयचैतन्यरूपस्य सत्त्वस्य स्वीकृतत्वेन जगत्यपि तदभ्युपगमे रजतत्वविरोधिशुक्तिसत्त्वया रजतस्येव जगतोऽप्यसत्त्वापत्तेः। न च तथाऽपि सर्वदेशीयत्रैकालिकनिषेधप्रतियोगित्वमसत्त्व तुच्छानिर्वचनीयसाधारण तदभाव सत्त्व तच्च ब्रह्मणीव जगत्यपीति वाच्यं, चक्षुराद्ययोग्यानेकपदार्थघटितत्वेनैतादृशसत्त्वग्रहणे चक्षुरादेरसामर्थ्यात्। न च सामान्यप्रत्यासत्त्या तत्सम्भव सामान्यस्य प्रत्यासत्तित्वानभ्युपगमात् प्रत्यक्षस्य वर्तमानमात्रग्राहित्वाच्च, नन्वेव सति शुक्तिरूप्यादे प्रतिपन्नोपाधौ त्रैकालिकनिषेधप्रतियोगित्वरूपमिथ्यात्त्व कथ प्रत्यक्ष न च साक्षिणा तद्गृह्यत इति वाच्यम्। तर्हि निषेधाप्रतियोगित्वं सत्त्वमपि तेनैव गृह्यतामिति चेन्न। साक्षिणो विद्यमानसर्वावभासकत्वे नाविद्यमानभाविबाधाभावभासकत्वानुपपत्तेरिति ध्येयम्।

सर्वाधिष्ठानमेवैकं सत्सर्वत्रानुभूयते ।
न वा वेदविरोधेन मात्वं मानान्तरं भजेत् ॥ ५३ ॥
चन्द्रे प्रादेशप्रत्यक्षं यथाऽऽगमविरोधतः ।
अप्रमाणं तथाऽध्यक्षं भेदग्राहि न मा भवेत् ॥ ५४ ॥
असम्भावितदोषस्यापौरुषेयतया स्वतः ।
यथा प्रमात्त्वं वेदस्य तथा मानान्तरे न तत् ॥ ५५ ॥
वेदानुकूलतर्कोऽपि प्रत्यक्षात्प्रबलो यतः ।
ततो न तेन बाधोस्ति मिथ्यात्वानुमितेरपि ॥ ५६ ॥

---

मबाधकं नानुमानागमौ तथेत्याशङ्क्य चन्द्रतारकादिपरिमाणप्रत्यक्षेऽनुमानागमविरोधेन तस्याप्रामाण्यदर्शनात्तेनाऽपि स्वप्रामाण्यसिद्ध्यर्थमितराविरोधस्यावश्यमपेक्षणीयत्वादित्यभिप्रेत्याह—“ चन्द्रेति ” । “ न मा भवेत् ”—अप्रमाणं स्यादित्यर्थः ॥ ५४ ॥ ननु प्रत्यक्षमागमापेक्षया जात्यैव प्रबलं स्यादित्यतआह—“असम्भावितेति” । तथा च ‘प्राबल्यमागमस्यैव जात्या तेषु त्रिषुस्मृतमिति वचनादपि प्रत्युतागमस्यैव सर्वतः प्राबल्यं, प्रत्यक्षे तु न जात्या प्राबल्ये मानमस्तीति भावः ॥५५॥ वेदानुकूलतर्कस्यापि प्रत्यक्षात्प्राबल्यं किमुत साक्षाद्वेदस्येत्याह—“ वेदेति ” । (१) ॥ ५६ ॥ ननूक्तरीत्या प्रत्यक्षस्य प्राबल्याभावेऽपि उपजीव्यत्वेन त-

---

(१) ननु प्रत्यक्षस्यासञ्जातविरोधित्वादुपक्रमन्यायेनैव प्राबल्यमिति चेन्न, यत एकवाक्यपरस्परसापेक्षपदत्वेनोभयो साम्ये सत्युपक्रमस्थवेदपदानुरोधेनोपसंहारस्थगौदिपदानां मन्त्रमात्रवाचिना कृत्स्नवेदपरत्वे निर्णीतेऽपि न तन्न्यायसम्भवत्युभयो. साम्याभावात् गृहीतप्रमाणभावश्रुत्यपेक्षया भ्रमविलक्षणत्वेनानिश्चितस्य न्यूनबलत्वात् अन्यथेद रजतमिति भ्रमोऽपीयं शुक्तिरित्याप्तोपदेशापेक्षया प्रबलः स्यात् इति ।

DR.RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

नोपजीव्यविरोधोपि शङ्क्यो यस्मान्न बाध्यते।
उपजीव्यं स्वरूपं यद्बाध्यते तद्विलक्षणं ॥ ५७ ॥
मिथ्याभूतेन सम्यग्धीर्जन्यते प्रतिबिम्बवत्।
ध्वनिधर्मविशिष्टैश्च वर्णैः शाब्दी प्रमा यथा ॥ ५८ ॥
प्रामाण्यं रूपतो मिथ्या तदर्थो न मृषा भवेत्।
सर्वबाधावधित्वेन ब्रह्मैव विषयो यतः ॥ ५९ ॥

---

त्स्यादेव न तद्विरोधादनुमानागमयोः प्रामाण्यं सेत्स्यतीत्याशङ्क्य निराचष्टे—" नोपजीव्येति "। यत्स्वरूपमुपजीव्यते तन्न बाध्यते बाध्यते च तात्त्विकत्वाकारः स च नोपजीव्यते कारणत्वे तस्याप्रवेशात् अतो नोपजीव्यविरोध इत्यर्थः ॥५७॥ ननु मिथ्याभूतेन वेदेन कथं सम्यग्ज्ञानं जन्यत इत्यत आह—"मिथ्येति"। ॥५८॥ ननु ज्ञानप्रामाण्यस्य मिथ्यात्वे विषयस्यापि मिथ्यात्वं स्यात् शुक्तिरूप्यज्ञाने तथा दर्शनात् प्रकृतेऽप्यद्वैतसिद्धये प्रामाण्यस्य मिथ्यात्वे वक्तव्ये विषयस्यापि मिथ्यात्वं स्यादित्याशङ्क्याह—" प्रामाण्यमिति "। प्रामाण्यमिथ्यात्वं हि न विषयमिथ्यात्वे प्रयोजकं भ्रमप्रमाबहिर्भूतनिर्विकल्पके बाधाभावात् किन्तु तदभाववति तत्प्रकारकत्वादिरूपमप्रामाण्यमेव तथा तच्च प्रकृते नास्त्येव अबाधितार्थविपयत्वं हि यत्प्रामाण्यं तस्य मिथ्यात्वं प्रकृते नार्थबाधात् तद्बाधकप्रमाणासम्भवात् तस्य सर्वबाधावधित्वात् किन्तु तद्विषयत्त्वरूपसम्बन्धबाधात् तथा चाबाधितार्थविषयत्वरूपप्रामाण्यमिथ्यात्वेऽपि नार्थो मिथ्या विशिष्टस्यैकांशमिथ्यात्वेऽप्यपरांशसत्त्यत्वात् यथा दण्डबाधनिबन्धनदण्डिपुरुपबाधेऽपि पुरुषो न बाधित एव मत्रापि द्रष्टव्यमिति तात्पर्यार्थ. ॥ ५९ ॥

॥ प्रत्यक्षस्योपजीव्यत्वभङ्ग. ॥

RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

विपक्षबाधकोपेतं प्रत्यक्षस्यास्ति बाधकं ।
अनुमानमपीत्येतद्बलवद्धि परीक्षितं ॥ ६० ॥
परीक्षितप्रमाणत्वशब्दबाध्यमपीष्यते ।
प्रत्यक्षं तात्विकत्त्वेन व्यावहारिकगोचरं ॥ ६१ ॥
व्यावहारिकमानत्त्वमागमेन न बाध्यते ।
बाध्यते तात्त्विकं तस्य प्रामाण्यमपरीक्षितं ॥ ६२ ॥
न प्रत्यक्षाविरोधाय तत्त्वमोर्लक्षणाऽऽश्रिता ।
किन्तु तात्पर्यविषयीभूताखण्डप्रतीतये ॥ ६३ ॥

---

अपरीक्षितप्रत्यक्षं हि परीक्षितानुमानापेक्षया दुर्बलं नीलं नभ इति प्रत्यक्षमिव नभोनीरूपत्वानुमानापेक्षया, अतो न सामान्यतोदृष्टमात्रेण सर्वसङ्करापत्तिरित्यभिप्रेत्याह—"विपक्षेति" । अत उपपन्नं सर्वत्र सर्वदा सविपक्षबाधकमेवमनुमानं प्रत्यक्षस्य बाधकमित्यर्थः ॥६०॥

॥ प्रत्यक्षस्यानुमानबाध्यत्वसिद्धिः ॥

अद्वैतागमस्यापि परीक्षितप्रमाणभावेन प्रत्यक्षबाधकत्त्वमित्याह—" परीक्षितमिति " ॥ ६१ ॥ प्रत्यक्षादेर्हि परीक्षया व्यावहारिकप्रामाण्यमात्रं सिद्धं तच्च नाद्वैतागमेन बाध्यते बाध्यते तु तात्त्विकं प्रामाण्यं तत्तु न परीक्षया सिद्धमित्यभिप्रेत्याह—" व्यावहारिकमिति " । ॥ ६२ ॥ ननु तर्हि किमर्थं प्रत्यक्षाविरोधाय तत्त्वम्पदयोर्लक्षणाऽऽश्रीयते इति तत्राह—"न प्रत्यक्षेति"।षड्विधलिङ्गैस्तात्पर्यावधारणात्सामान्येन चाखण्ड एवावधार्यमाणस्य तात्पर्यस्यानुपपत्तेर्जीवेशगतसार्वज्ञ्यकिञ्चिज्ज्ञत्वादीनामैक्यान्वयानुपपत्तेश्च तात्पर्यविषयीभूताखण्डप्रतीतिनिर्वाहाय लक्षणाङ्गीकारस्यैवोचितत्वादिति तात्पर्यार्थः ॥ ६३ ॥ नन्वेवं सति यजमानः प्रस्तर इत्यादिवाक्यवदद्वै-

RUPNATHJI(DR.RUPAK NATH)
www.astrology-tantra.com

अन्यशेषममुख्यार्थं वाक्यं स्यात्प्रस्तरादिकं।
अनन्यशेषमद्वैतवाक्यं मुख्यार्थमिष्यते ॥ ॥ ६४ ॥
शक्यार्थमात्रबोधित्वं न मुख्यार्थत्वमिष्यते।
तात्पर्यविषयीभूतस्वार्थबोधित्वमेव तत् ॥ ६५ ॥
अमुख्यार्थं तथाऽन्यार्थतात्पर्यकमितीष्यते।
न लाक्षणिकमात्रं वा विभागोऽयं विविच्यताम् ॥ ६६ ॥
तथा चाद्वैतवाक्यस्य लक्षणश्रयणेऽपि हि।
मुख्यार्थत्वं सुसंपन्नं तात्पर्यविषयत्वतः ॥ ६७ ॥
मानान्तरविरोधे सत्येव स्याल्लक्षणेत्यपि।
निरस्तं लक्षणा यस्मान्न मुख्यार्थत्वबाधिका ॥ ६८ ॥
तस्मादद्वैतवाक्यं हि सिद्धं प्रत्यक्षबाधकं।

---

तागमस्याप्यमुख्यार्थत्वं स्यादित्यत आह—“अन्यशेषेति” ॥६४॥ मुख्यार्थत्वं किमित्याकाङ्क्षायामाह—“ शक्यार्थेति ”। तात्पर्यविषयीभूतार्थबोधकत्त्वं हि मुख्यार्थत्व न शक्यार्थमात्रबोधकत्वमित्यर्थः ॥ ६५ ॥ अमुख्यार्थत्वं तु यत्र पुन प्रतीत एव मुख्यार्थोऽन्यशेषत्वेन कल्प्यते तत्रैवेत्याह—“ अमुख्यार्थमिति ” ॥ ६६ ॥ प्रकृते तु प्रतीतार्थस्यानन्यशेषत्वेन मुख्यत्वान्न तथात्वमिति, फलितमाह—“ तथा चेति ”। अद्वैतागमस्य स्वतात्पर्यविषयीभूतार्थनिर्वाहाय लक्षणाऽऽश्रयणेऽपि मुख्यार्थत्वमुपपन्नमेवेत्यर्थः ॥ ६७ ॥ मानान्तरविरोधस्यैव लक्षणाबीजत्वमिति नियममाशङ्क्य निरस्यति— “ मानान्तरेति ”। ॥ ६८ ॥ प्रत्यक्षस्यागमबाध्यत्वमुपसंहरति—

DR. RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

स्त्वार्थे तात्पर्यवत्त्वेन बलवत्तरभावतः ॥ ६९ ॥
प्राबल्यमागमस्यैवापच्छेदन्यायतो मतं ।
पौर्वापर्ये हि पूर्वस्य दौर्बल्यं प्रकृतेरिव ॥ ७० ॥
तत्परत्वात्परत्वाच्च निर्दोषत्त्वाच्च वैदिकं ।
पूर्वस्य बाधकं नायं सर्प इत्यादिवाक्यवत् ॥ ७१ ॥
व्यावहारिकप्रामाण्यं प्रत्यक्षादेः श्रुतेस्तु तत् ।

---

" तस्मादिति " । ॥ ६९ ॥

॥ प्रत्यक्षस्यागमबाध्यत्वसिद्धिः ॥

पूर्वस्य प्रत्यक्षस्य परेणागमेन बाध इत्यत्रापच्छेदन्यायं निर्दिशति—" प्राबल्यमिति" । 'पौ(१)र्वापर्ये पूर्वदौर्बल्यं प्रकृतिव'दित्यधिकरणे उद्गात्रपच्छेदनिमित्तादक्षिणयागेन परेण प्रतिहर्त्रपच्छेदनिमित्तकस्य बाध इति स्थितं तथोपनिषद्‌भ्यागमेन पूर्वस्य प्रत्यक्षस्य बाधः सगुणसप्रपञ्चश्रुत्योर्निर्गुणनिष्प्रपञ्चश्रुतिभ्यामपच्छेदन्यायेन बाध इति तात्पर्यार्थ. ॥ ७० ॥

तत्रानन्दबोधाचार्यवचनसम्मतिमाह—"तत्परत्वादिति" । ॥ ७१ ॥ ननु मानान्तरविरोधे श्रुतेस्तत्परत्त्वमसिद्धं परत्वं तु प्रमानन्तरभ्रमे व्यभिचारि दृश्यते च 'न(२)क्त्वासेडिति' परं प्रति 'मृ(३)डमृदगुधकुषक्लिशवदवसः क्त्वेति' पूर्वमपि बाधकं, निर्दोषत्त्वं त्वर्थान्तरप्रामाण्यान्यथासिद्धं तदुक्तं 'तत्परत्वमसिद्धत्वात्परत्वं व्यभिचारतः निर्दोषताऽन्यथासिद्धेः प्राबल्यं नैव साधये'दित्याशङ्क्याह—" व्यावहारिकेति " । प्रत्यक्षादेर्व्यावहारिकं प्रमाण्यं श्रुतेस्तु तात्त्विकमिति विरोधाभावेन तत्परत्वसिद्धे. परशब्दे च मानान्तरा-

---

( १ ) जैमिनिसूत्र अ० ६ पा० ४ सू० ५४ ।
( २ ) पाणिनिसूत्र अ० १ पा० २ सू० १८
( ३ ) पाणिनिसू० अ० १ पा० २ सू० ७

DR. RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

तान्त्विकन्त्वविरोधेन तत्परत्वं ततः श्रुतेः ॥ ७२ ॥
मानान्तराबाधितन्त्वात्परन्त्वं तेन च श्रुतेः ।
व्यभिचारः परन्त्वस्य न प्रमानन्तरभ्रमे ॥ ७३ ॥
अपवादापवादे स्यादुत्सर्गस्य व्यवस्थितिः ।
निर्दोषन्त्वं श्रुतेस्तस्मान्नान्यथासिद्धमिष्यते ॥ ७४ ॥
तात्पर्यविषये यस्मात्प्रामाण्यं चाभ्युपेयते ।
पूर्वोक्तन्यायतस्तस्मान्न वैषम्यं मनागपि ॥ ७५ ॥
न मिथ्यान्त्वानुमानस्य वन्हिशैत्यानुमानवत् ।

---

बाधितपरत्वं विवक्षितं तेन प्रमानन्तरभ्रमे न व्यभिचारस्तस्य तदुत्तरभाविमानबाध्यत्त्वात्, उक्ता सोऽडित्यस्य तु पाठतः परत्वेऽपि स्वभावसिद्धकित्वस्यानेनापाकरणं विना पुनस्तत्प्रतिप्रसवार्थं मृडमृदेत्यादेरप्रवृत्तेस्तदपेक्षया प्रथमतः पूर्वत्वमेवापवादापवादे उत्सर्गस्यैव स्थितत्वात् अतो निर्दोषत्त्वमपि नान्यथासिद्धिमिति त्रयाणां समुदितार्थः ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ तात्पर्यविषयएव प्रामाण्यस्याभ्युपेयत्त्वादित्यबोधमात्रविजृम्भितमपच्छेदन्यायवैषम्याभिधानमित्याह–
" तात्पर्येति "। ॥ ७५ ॥

॥ अपच्छेदन्यायवैषम्यभङ्गः ॥

ननु भवतु वेदेन प्रत्यक्षबाधनं अनुमानं तु न तद्बाधितुमुत्सहते यदि प्रत्यक्षबाधितमप्यनुमानं साधयेत् तदा वन्ह्यनौष्ण्यमपि साधयेत् तथा च कालात्ययापदिष्टकथा सर्वत्रोच्छिद्येत अनौष्ण्यानुमितेर्मिथ्यात्वानुमितेश्च , समानयोगक्षेमत्त्वात् औष्ण्यप्रत्यक्षायजमानप्रत्यक्षादे. सत्वप्रत्यक्षापेक्षया विशेषो वा वक्तव्यो बाधस्य दोषता वा त्याज्या न चौष्ण्यप्रत्यक्षं परीक्षितोभयवादिसिद्धप्रामाण्यं सत्वप्रत्यक्षं न तथेति विशेष इति वाच्यं। सत्त्वप्रत्यक्षेऽपि प्रामाण्यासम्मतौ

DR.RUPAK NATH ( DR.RUPNATHJI )
www.astrology-tantra.com

कालात्ययापदिष्टत्वं विशेषोऽस्ति यतस्तयोः ॥ ७६ ॥
औष्ण्यवल्लिङ्गतो ग्राह्यं शैत्यं तु व्यावहारिकं ।
औष्ण्यप्रत्यक्षतः साम्याल्लिङ्गग्राह्यं हि बाध्यते ॥ ७७ ॥
प्रत्यक्षसिद्धं सत्त्वं तु प्रकृते व्यावहारिकं ।
तद्विरुद्धं न मिथ्यात्वं वस्तुसत्वविरोधि तत् ॥ ७८ ॥
व्यावहारिकसत्त्वैकग्राहकेण न बाध्यते ।
प्रत्यक्षेण ततो वन्हिशैत्यग्राहि न साम्यभाक् ॥ ७९ ॥
मानं परीक्षितत्वेन प्रत्यक्षं प्रबलं भवेत् ।

---

हेत्वभावात् परीक्षायास्तुल्यत्वादित्याशङ्क्याह—" नमिथ्यात्वेत्यादि " चतुर्भिः । प्रत्यक्षसिद्धायजमानत्वौष्ण्यादिवच्छन्दलिङ्गग्राह्ययजमानानौष्ण्यादीनि व्यावहारिकमिति समत्वात्प्रत्यक्षेण बाध्यत प्रकृते तु सत्त्वं व्यावहारिकं प्रत्यक्षसिद्धं तद्विरुद्धं च न मिथ्यात्वं तस्य पारमार्थिकसत्त्वविरोधित्वादतो न व्यावहारिकग्राहकेणाध्यक्षेण बाध्यते इत्यस्ति वैषम्य तस्मान्मिथ्यात्त्वानुमानस्य न वह्निशैत्यानुमितिसाम्यमिति तत्साम्यभङ्गइति चतुर्णां समुदितार्थः ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥

॥ मिथ्यात्त्वानुमितेर्वन्हिशैत्यानुमितिसाम्यभङ्गः ॥

इदं रजतमिति प्रत्यक्षस्यानुमानाप्तवाक्याभ्यां, नभोनैल्यप्रत्यक्षस्य नीरूपत्वग्राहकानुमानेन, गौराहमित्यस्याहमिहैवास्मि सदने जानानइत्यस्य चन्द्रप्रादेशिकत्वप्रत्यक्षस्य चागमानुमानाभ्यां, पीत. शङ्खस्तिक्तो गुडइत्यादेश्चानुमानाप्तवाक्याभ्यां बाधो दृश्यते तस्मात्परी-



RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

नोपजीव्यापरोक्षत्वादिना प्राबल्यमश्नुते ॥ ८० ॥
अतोऽनुमानशब्दाभ्यां प्रत्यक्षे बाध्यतेरिता ।
अपरीक्षितभावेन चन्द्रप्रादेशिकत्वगे ॥ ८१ ॥
पार(१)मार्थिकमद्वैतं प्रविश्य शरणं श्रुतिः ।
विरोधादुपजीव्येन न बिभेति कदा चन ॥ ८२ ॥
प्रत्यक्षाद्वेदवाक्यस्याद्वैततात्पर्यकस्य तु ।
प्राबल्यं तेन बाध्यत्वं प्रत्यक्षस्य श्रुतीगिरा ॥ ८३ ॥
अध्यस्तग्राहि प्रत्यक्षमधिष्ठानप्रमावहा ।
बाधते श्रुतिरद्वैतब्रह्मतत्त्वावबोधिका ॥ ८४ ॥

---

क्षितत्वेनैव प्राबल्यं नोपजीव्यत्वापरोक्षत्वादिनेत्यभिप्रेत्याह—"मानं परीक्षितत्वेनेति" द्वाभ्यां ॥ ८० ॥ ८१ ॥ पारमार्थिकतत्त्वपरा श्रुतिर्नोपजीव्यविरोधाद्बिभेतीत्यत्र खण्डनकृत्संमतिमाह—"पारमार्थिकमिति" ॥ ८२ ॥

॥ परीक्षितत्वस्यैव प्राबल्यप्रयोजकत्वोपपत्तिः ॥

प्रकारान्तरेणाबाधितस्य चन्द्रप्रादेशिकत्वप्रत्यक्षस्य यथाऽऽगमेन बाधः तथा प्रकारान्तरेणाबाधितस्य सन्घटइत्यादिप्रत्यक्षस्य मिथ्यात्वबोधकेनागमेन बाध इति निर्णय इत्यभिप्रेत्याह— " प्रत्यक्षादिति " ॥ ८३ ॥ ननु भ्रमकालीनापरोक्षबुद्ध्यविषयविशेषविषयैव धीर्बाधिका दृष्टा न च विश्वबाधिका धीस्तथेत्याशङ्क्याधिष्ठानतत्त्वज्ञानत्वेनैव भ्रमनिवर्त्तकत्वाद्विश्वनिवर्त्तकब्रह्मज्ञानस्य तथात्वमित्यभिप्रेत्याह—"अध्यस्तेति"।

---

(१) खण्डनखण्डखाद्ये प्र० प० श्लो० २२।

DR. RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

अचिन्त्यं शब्दसामर्थ्यं बुद्ध्या ब्रह्मात्मबोधके ।
वेदान्तवाक्ये सन्देहो न कार्यो दोषवर्जिते ॥ ८५ ॥
अ(१)त्यन्तासत्यपि ज्ञानमर्थे शब्दः करोति हि ।
अबाधात्तु प्रमामत्र स्वतः प्रामाण्यनिश्चलां ॥ ८६ ॥
अतोऽवबोधक(२)त्वेन दुष्टकारणवर्जनात् ।
अबाधाच्च प्रमाणत्वं वस्तुन्यक्षादिवच्छ्रुतेः ॥ ८७ ॥
प्रत्यक्षादिप्रमाणस्य व्यावहारिकताऽयतः ।
तात्विकं न प्रमाणत्वमतो नास्ति विरोधधीः ॥ ८८ ॥
अद्वैतपरवेदान्तानुमानाद्यविरोधिता ।

---

ननु प्रत्यक्षाद्यनुभूयमानं जगत्कथं श्रुत्याऽपलप्यते कथं वा सर्वप्रमाणाविषयमात्मानं बोधयेदित्यसम्भावनां निराकरोति—" अचिन्त्यमिति "। ॥ ८५ ॥ शब्दस्याचिन्त्यशक्तिकत्वं खण्डनकारवार्तिककारोक्तिभ्यां द्रढयति—" अत्यन्तासतीति " द्वाभ्यां । वार्तिकवचने त्वाक्षवदिति निदर्शनं व्यावहारिकप्रामाण्यमात्रेणेति ॥ ८६ ॥ एवं च तात्विकप्रामाण्याभावेऽपि प्रत्यक्षादीनां व्यावहारिकप्रमाणत्वाभ्युपगमात् न स्वप्रक्रियाव्याघात. न वा 'प्र(३)त्यक्षमनुमानं च शास्त्रं च विविधागमं । त्रयं सुविदितं कार्यं धर्मशुद्धिमभीप्सता'त्यादिस्मृतिविरोध इत्याह—"प्रत्यक्षादीति" ॥८८॥

॥ शब्दस्याऽचिन्त्यशक्तित्वोपपादनम् ॥

तस्मात्सिद्धं बाधनिश्चयेन तच्छङ्कया वा प्रत्यक्षादेरद्वैतागमानुमा-

(१) खण्डने प्र० प० श्लो० ११ ।
(२) वृहद् रण्यकसम्बन्धवार्तिके श्लो० ८८१ ।
(३) मनुस्मृतौ अ० १२ श्लो० १०५ ।

DR.RUPNATHJI (DR.RUPAK NATH)
www.astrology-tantra.com

प्रत्यक्षादेरतः सिद्धा भाविबाधविनिश्चयात् ॥ ८९ ॥
न चानुमानबाध्यत्त्वं मिथ्यात्त्वानुमितेरपि।
व्याप्यत्वासिद्धिदोषाद्यैर्दुष्टत्वात्तेऽनुमाऽप्रमा ॥ ९० ॥

---

नाद्यविरोधित्वमिति फलितमुपसंहरति—" अत्रैवेति " ॥८९॥

॥ भाविबाधोपपत्ति ॥

स्यादेतत् अध्यक्षस्य भिन्नविषयत्वादिना बाधकत्वमभावेऽप्यनुमानमेव बाधकं स्यात् तथा हि ब्रह्मप्रमान्येन वेदान्ततात्पर्यप्रमितिजन्यज्ञानान्येन वा मोक्षहेतुज्ञानान्येन वा ऽबाध्यत्वेसत्त्यसत्त्वानधिकरणत्वेसति ब्रह्मान्यत् विमतं वा सत् परमार्थसद्वा प्रातिभासिकसत्त्वानधिकरणत्वे सत्त्यसद्विलक्षणत्त्वात् ब्रह्मवत् व्यतिरेके शशशृङ्गवद्धेत्याशङ्क्य निराचष्टे—"न चेति"। त्वन्मते प्रातिभासिकस्याप्यसत्त्वेन व्यर्थविशेषणतया व्याप्यत्वासिद्धेः अस्मन्मतमाश्रित्य हेतूकरणे च देहात्मैक्ये ब्रह्मज्ञानेतराबाध्ये व्यभिचारात् न हि प्रातिभासिकत्त्वं ब्रह्मज्ञानेतरबाध्यत्वात्मकम् त्वया हि प्रातिभासिकस्य शुक्तिरूप्यादेरपक्षत्वाय सत्यत्वमाद्यं विशेषणत्रयं विकल्पेन पक्षे प्रक्षिप्तं, तत्र ब्रह्म वृत्तिव्याप्यमिति मतेनाद्यं, तदनभ्युपगमे तु शाब्दप्रमां प्रति तात्पर्यप्रमा हेतुरिति मतेन द्वितीय, अन्योन्याश्रयत्वान्न सा हेतुरिति मतेन तृतीयं, तथा च प्रातिभासिकस्यासत्त्वानधिकरणत्वमङ्गीकृतमेव अन्यथा तुच्छव्यावर्तकासत्त्वानधिकरणत्वविशेषणेनैव तद्व्यावृत्तावेतत्त्रयस्य वैयर्थ्यापत्तेः एवं च देहात्मैक्यस्यापि पक्षत्वे बाध एव न चेत् सति पक्षविशेषणस्य पक्षत्वस्यासिद्ध्याऽऽश्रयासिद्धिरपि। अत एव स्वबाधकाभिमताबाध्यदोषजन्यज्ञानाविषयत्वे सतीति वा, स्वबाधकाभिमताबाध्यबाधाविषयत्त्वे सतीति वा, स्वसमानाधिकरणकर्मप्रागभावसमानकालीनज्ञानाबाध्यत्वे सतीति वा, विशेषणप्रक्षेपेन निस्तारः देहात्मैक्ये पूर्वदोषाव्यावृत्तेरेव। तेऽनुमाऽनुमानमप्रमा सर्वथा हेत्वाभासैर्ग्रस्तत्वादप्रमाणमेवेति तात्पर्यार्थः ॥ ९० ॥

॥ मिथ्यात्त्वानुमानस्याऽनुमानाबाध्यत्त्वोपपत्तिः ॥

RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

श्रुत्यनुग्राहकत्त्वाच्च सद्धेतोर्व्याप्तिदर्शनात् ।
मूलप्रमाणसद्भावान्मिथ्यात्वानुमितिर्ध्रुवा ॥ ९१ ॥
न च सत्त्वानुमानं स्याज्जगत्यर्थक्रियाक्षमे ।
स्वाप्ने हि कामिनीसङ्गे व्यभिचाराद्वृथाऽनुमा ॥ ९२ ॥
भ्रान्त्याप्रतीयमानेऽर्थे न सत्वं पारमार्थिकं ।
न हि स्वाप्ने प्रियाद्यर्थे पारमार्थिकता भवेत् ॥ ९३ ॥
चिदध्यस्तत्वमिथ्यात्वे तुल्ये स्वाप्नेऽथ जागरे ।
अर्थक्रियासमर्थत्वमपि तुल्यं तयोर्द्वयोः ॥ ९४ ॥
असद्विलक्षणं विश्वमपरोक्षप्रतीतितः ।
सद्विलक्षणमप्येत्तद्बाध्यत्त्वात्स्वाप्नवस्तुवत् ॥ ९५ ॥
सदसत्वे विरुद्धत्त्वान्नास्मिन्सम्भवतो यतः ।
अतोऽनिर्वाच्यता सिद्ध्येन्मिथ्यात्त्वं तत एव हि ॥ ९६ ॥
ऐन्द्रजालिकवन्नेशे भ्रान्तत्वापतिरण्व्यपि ।

---

जगन्मिथ्यात्वानुमानं सर्वथाऽनवद्यमित्याह—" श्रुतीति " ॥९१॥ जगत्सत्यत्वानुमानं व्यभिचारदुष्टमित्याह—" न चेति त्रिभिः " ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ अतोमिथ्यात्वं सिद्धमित्याह—" सद्विलक्षणमिति " द्वाभ्यां ॥ ९५ ॥ ९६ ॥

॥ मिथ्यात्वसत्वानुमानयो. सम्यक्त्वदुष्टत्वोपसंहार. ॥

नन्वीश्वरज्ञानविषयस्य प्रपञ्चस्य मिथ्यात्वे तस्य भ्रान्तत्वप्रसङ्ग इत्यत आह—" ऐन्द्रजालिकवदिति " । अय-

DR.RUPAK NATH JI (DR.RUPAK NATH)
www.astrology-tantra.com

तन्मायाकल्पितत्वेऽपि नापारोक्ष्याद्यसम्भवः ॥ ९७ ॥
देहात्मैक्यभ्रमे यद्वज्जीवाविद्याप्रकल्पिते ।
जीवापरोक्ष्यमस्त्येव नाविद्यामाययोर्भिदा ॥ ९८ ॥
स्वप्नप्रपञ्चवन्मायामात्रमित्यादिसन्नयात् ।

---

मर्थः मिथ्याभूतस्य मिथ्यात्वेनैव ग्रहणादैन्द्रजालिकवद्भ्रान्तत्वायोगादन्यथा सविषयकभ्रमज्ञातृत्वेन भ्रान्तत्वस्य दुर्वारतापत्तेः। अथनिषेध्यत्वेन ज्ञानं तत्पालनाद्यर्थमीश्वरस्य प्रवृत्तिर्न स्यादिति चेन्न। ऐन्द्रजालिकप्रवृत्तिवदीश्वरप्रवृत्तेरपि तथाविधत्वमिति। ननु विमतं नेश्वरमायाकल्पितं तत्प्रत्यपरोक्षत्वात् यदेव तदेवं यथा चैत्रं प्रत्यपरोक्षो घटो न चैत्रमायाकल्पितः विमतं न जीवकल्पितं तस्मिन्सुषुप्तेऽपि अवस्थितत्वात् आत्मवत्, नचासिद्धिः प्रत्यभिज्ञानात् अदृष्टाभावे पुनरुत्थानायोगाच्चेत्याशङ्क्य समाधत्ते। नाद्यमनुमानं साधु—“ तन्मायेति ”। ऐन्द्रजालिकं प्रत्यपरोक्षे तन्मायाकल्पिते व्यभिचारादित्यर्थः ॥ ९७ ॥ मायाऽविद्ययोरभेदेन देहात्मैक्यभ्रमे व्यभिचारादपि नापरोक्ष्यासिद्धिरित्याह—“ देहात्मैक्येति ”। द्वितीयेऽनुमानेत्वसिद्धिरित्यर्थः। न च प्रत्यभिज्ञया प्रपञ्चस्य स्थायित्वसिद्धेर्नासिद्धि सुषुप्तिकालस्थायित्वासाधकत्वस्य प्रत्यभिज्ञाया दृष्टिसृष्टिसमर्थने वक्ष्यमाणत्वात् अदृष्टादेः कारणात्मनाऽवस्थितत्वेन पुनरुत्थानसम्भवाच्चेति तात्पर्यार्थः ॥ ९८ ॥ ॥ ईश्वरस्य भ्रान्तत्वनिरासः ॥

‘ अ(१)थ न तत्र रथा न रथयोगा ’ इत्यादि श्रुत्या “ मा(२)यामात्रं तु कार्त्स्न्येनानभिव्यक्तस्वरूपत्वादिति ” सूत्रेण च स्वप्नप्रपञ्चस्य मिथ्यात्वसाधनेन सर्वस्यापि प्रपञ्चस्य त-

(१) बृहदारण्यके ४। ३। १०।
(२) ब्रह्मसूत्रे अ० ३। पा० २ सू० ३।

DR. RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

ब्रह्मज्ञानैकबाध्यत्वात् तदज्ञानप्रकल्पितं ॥ ९९ ॥
नार्थातिरिक्तोज्ञानेऽस्ति विशेषस्तत्त्वविन्मतः ।
अ(१)र्थेनैव विशेषो हि निराकारतया धियां ॥ १०० ॥
ब्रह्मज्ञानेतराबाध्यब्रह्मान्यासत्व(२)नाश्रयं ।

---

दृष्टान्तेन मिथ्यात्त्वं साधितं तथा ब्रह्मज्ञानैकनिवर्त्यत्वान्यथानुपपत्त्याऽपि तस्याज्ञानकार्यत्वेन मिथ्यात्त्वं सिद्धमित्याह—"स्वप्नेति" ॥ ९९ ॥ ननु स्वप्नादिज्ञानमेवार्थक्रियाकारि नार्थ स्तच्च ज्ञानमबाध्यं तथा च कथं तद्दृष्टान्तेन प्रपञ्चमिथ्यात्वसिद्धिरित्याशङ्क्याह— " नार्थेति " । न हि ज्ञानमात्रस्य सुखादिजनकत्वं तथा च किञ्चिद्विशेषितस्यैव तथात्त्वं वाच्यं ज्ञाने च विशेषो नार्थातिरिक्त इत्यत्र वृद्धसंमतिमाहार्थेनेत्यर्द्धेन—" अर्थेनेति " । अर्थएवेत्यर्थः तथा च मिथ्याभूतविशेषितस्य जनकत्वाभ्युपगमे मिथ्याभूतस्यापि जनकत्त्वमस्तीत्यर्थ । ननु विषयोपलक्षितस्यैव ज्ञानस्य सुखजनकत्वमस्तु तत्कुतोविषयस्य जनकत्वमिति चेन्न । स्वरूपाणामननुगततया ज्ञानत्वादेश्चातिप्रसक्ततयाऽनुगतानतिप्रसक्तोपलक्ष्यतावच्छेदकाभावादुपलक्षणत्वासम्भवात्तद्विशेषितस्यैव तथात्वमस्तीति भावः ॥ १०० ॥ ॥ असत्यस्यार्थक्रियाकारित्वोपपत्तिः ॥

मिथ्यात्वे च विशेषतोऽनुमानानि, ब्रह्मज्ञानेतराबाध्यब्रह्मान्यासत्वानधिकरणत्वं पारमार्थिकसत्वाधिकरणावृत्ति ब्रह्मावृत्तित्वात् शुक्तिरूप्यत्ववत् परमार्थसद्भेदवच्च, विमतं मिथ्या ब्रह्मान्यत्वात् शुक्तिरूप्यवत्, परमार्थसत्वं स्वसमानाधिकरणान्योन्याभावप्रतियोग्यवृत्ति सदितरावृत्तित्वात् ब्रह्मत्ववत्, ब्रह्मत्वं पक्षत्वं वा सत्वव्यापकं सत्त्वसमानाधिकरणत्वात् असद्वैलक्षण्यवत्, अव्याप्यवृत्तिघटादिः जन्याभावानतिरिक्तसमानाधिकरणाभावमात्रप्रतियोगी अभावप्रतियोगित्वात् अभिधेयत्ववत्, अभिधेयत्वं हि प-

---

( १ ) उदयनकृतकुसुमाञ्जलौ स्तवके ४ श्लो० ४

( २ ) असत्त्वशब्दोऽप्यत्र पाठोऽन्यादर्शपुस्तकानुरोधात् तथैव स्थापित इति ज्ञेयम् ।

DR. RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

पारमार्थिकसत्वाधिकरणावृत्तिमद्भवेत् ॥ १ ॥
शुक्तिरूप्यत्ववद्ब्रह्मावृत्तित्वात्सत्यभेदवत् ।
ब्रह्मान्यत्वाज्जगत्सर्वं मिथ्या स्याच्छुक्तिरूप्यवत् ॥२॥
ब्रह्मत्त्वं ब्रह्मवृत्तित्वान्न भेदप्रतियोगि तत् ।
न सन्निष्ठोभवेज्जातु भेदः सत्प्रतियोगिकः ॥ ३ ॥
मिथ्यात्वं ब्रह्मतुच्छातिरिक्तत्वव्यापकं भवेत् ।
समस्तमिथ्यावृत्तित्वाद्यथा दृश्यत्वमिष्यते ॥ ४ ॥
दृश्यत्वं सदवृत्ति स्यादभिधेयैकवृत्ति यत् ।
शुक्तिरूप्यत्ववद्भ्रान्तिसिद्धवस्तुगतं यतः ॥ ५ ॥
परमार्थसद्भिन्नत्वव्याप्यं दृश्यत्वमस्तु वा ।
दृश्यान्यावृत्तिधर्मत्वात्प्रातिभासिकता समं ॥ ६ ॥

---

रमते केवलान्वयित्वादन्योन्याभावमात्रप्रतियोगि स च समानाधिकरणएव अस्मन्मते तु मिथ्यैवेति नोभयथाऽपि साध्यवैकल्यं, अत्यन्ताभावः प्रतियोग्यवच्छिन्नवृत्तिः नित्याभावत्त्वात् अन्योन्याभाववत्, ब्रह्मत्वं न परमार्थसन्निष्ठान्योन्याभावप्रतियोगितावच्छेदकं ब्रह्मवृत्तित्वात् असद्वैलक्षण्यवत्, परमार्थसत्प्रतियोगिको भेदो न परमार्थसन्निष्ठः परमार्थसत्प्रतियोगिकत्त्वात् परमार्थसत्त्वावच्छिन्नप्रतियोगिकाभाववत्, मिथ्यात्त्वं ब्रह्मतुच्छोभयातिरिक्तत्वव्यापकं सकलमिथ्यावृत्तित्वात् मिथ्यात्वसमानाधिकरणात्त्यन्ताभावाप्रतियोगित्वाद्वा दृश्यत्ववत्, दृश्यत्वं परमार्थसदवृत्ति अभिधेयमात्रवृत्तित्वात् शुक्तिरूप्यत्ववत्, दृश्यत्त्वं परमार्थसद्भिन्नत्वव्याप्यं दृश्येतरावृत्तिधर्मत्त्वात् प्रातिभासिकत्त्ववत् इत्यादिप्रमाणानीत्याह— " ब्रह्मेत्यादिप्रातिभासिकतासममित्यन्तैः " षड्भिः ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥

॥ मिथ्यात्वेविशेषानुमाननिरूपणम् ॥

DR. RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

एवमन्येऽपि मिथ्यात्वे विपश्चिद्भिर्यथोचितं।
प्रयोगा ऊहनीयाः स्युर्वादिध्वान्तप्रहाणये ॥ ७ ॥
हेतवोभीष्टसिद्ध्यर्थं सम्यञ्चो बहवश्च नः।
अल्पाः परस्य दुष्टाश्च ज्ञातव्या युक्तिभिर्बुधैः ॥ ८ ॥

---

एवमन्येऽपि प्रयोगा ऊहनीयाइत्याह— " एवमिति " ।

एतत्पटात्त्यन्ताभावः एतत्तन्तुनिष्ठः एतत्पटानाद्यभावत्वात् एतत्पटान्योन्याभाववत्, तन्तुनाशजन्यपटनाशस्य कदापि तन्तुवृत्तिता नास्तीति तत्र व्यभिचारवारणायानादिपदं, यस्य पटस्याश्रयविभागेन नाशस्तदत्त्यन्ताभावस्य पक्षत्वे त्वनादिपदमनादेयमेव, अत्र चैतत्पटप्रतियोगिकात्यन्ताभावत्त्वावच्छिन्नस्य पक्षीकरणान्न सम्बन्धान्तरेणात्त्यन्ताभावमादायांशतः सिद्धसाधनं पक्षतावच्छेदकावच्छेदेन साध्यसिद्धेरुद्देश्यत्वात्। समवायसम्बन्धावच्छिन्नोव्यधिकरणधर्मानवच्छिन्नश्च यएतत्पटात्यन्ताभावः सएव वा पक्षः तन्तुशब्देन च पटोपादानकारणमुक्तं तत्र च प्रागभावस्य सत्वात् न तेन व्यभिचारः। यद्वा समवायसम्बन्धावच्छिन्नोऽयमेतत्पटात्यन्ताभावः एतत्तन्तुनिष्ठः एतत्पटप्रतियोगिकात्यन्ताभावत्त्वात् सम्बन्धान्तरावच्छिन्नैतत्पटात्यन्ताभाववदिति विशिष्यानुमानं ऊहनीयमिति भावः ॥ ७ ॥ पराभिमतानुमानगतहेतुभ्यो दुष्टेभ्योऽल्पेभ्यश्च स्वमताभिमतानुमानगतहेतूनां बाहुल्यं समीचीनत्वं स्पष्टमेवेति युक्तिभिरेव ज्ञातव्य मित्याह—" हेतवइति " ॥ ८ ॥

॥ मिथ्यात्त्वे विशेषानुमानोपसंहारः ॥

नन्वस्तु शब्दबाध. तथा हि। " विश्वं(१)सत्यं"यच्चि(२)केतस्तमित्तन्न मोघं' 'या(३)थातथ्यतोऽर्थान् व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समा-

---

( १ ) ऋक्संहिताया द्वितीयाष्टके ७ अध्याये ३ वर्गे ऋक् ३।
( २ ) ऋक्संहितायामष्टमाष्टके १ अध्याये १७ वर्गे ऋक् १।
( ३ ) ईशावास्योपनिषदिमन्त्र ८।



DR. RUPAK NATH (DR. RUPNATHJI)
www.astrology-tantra.com

शब्दबाध्यं न मिथ्यात्वं शब्दतात्पर्यमद्वये।
तन्न सिद्ध्येद्यतः सर्वविश्वमिथ्यात्वमन्तरा ॥ ९ ॥
विश्वं सत्यमिति श्रौतं वाक्यं स्तुति परं मतं।
त्रैकालिकनिषेधोऽस्याभिमतोऽस्त्यद्वयश्रुतेः ॥ १० ॥
तात्पर्यलिङ्गसंयुक्ता श्रुतिरद्वैततत्परा।

---

भ्य" इत्यादिश्रुतिभिर्विश्वसत्यत्वप्रतिपादनादित्याशङ्क्य श्रुतेस्तत्र तात्पर्याभावान्नैवमित्याह—"शब्दबाध्यमिति"। एतदुक्तं भवति—"विश्वं सत्यं मघवानायुवो" रित्यादिश्रुतिवाक्यस्य स्तुतिपरतया नास्य विश्वस्य सत्यत्वे तात्पर्यम्। "यच्चिकेतसत्यमितन्न मोघ" मित्यादिश्रुतेरिन्द्रस्तुतिपरतया न विश्वसत्यत्वे तात्पर्यम्। "याथातथ्यतोऽर्थान्व्यदधात्" श्रुतिर्न तत्सत्यत्वे प्रमाणं प्रत्यक्षसिद्धानुवादकत्वात्, त्रैकालिकसत्त्वनिषेधश्रुतिविरोधेन विश्वसत्यत्वश्रुतेस्त्रैकालिकसत्त्वपरत्वाभावो निश्चीयते। नच वैपरीत्यमेव किन्न स्याद्विनिगमकाभावादितिवाच्यं तात्पर्यान्यथानुपपत्तिगतिसामान्यानामेव विनिगमकत्वादिति ॥ ९ ॥ ॥ १० ॥

अद्वैतश्रुतिर्तर्हि षड्विधलिङ्गतात्पर्योपेता, तत्र त्रिविधं तात्पर्यलिङ्गं प्रामाण्यशरीरघटकमर्थनिष्ठं अज्ञातत्वमबाधितत्त्वं प्रयोजनवत्त्वं च, त्रिविधं तु शब्दनिष्ठमतिप्रसङ्गवारकं उपक्रमोपसंहारयोरेकरूप्यं अभ्यासोऽर्थवादश्चेति, तत्र शब्दनिष्ठलिङ्गत्रये तावन्न विवादः सर्वासामेवोपनिषदामेवं वृत्तत्त्वात् मानान्तरासिद्धतया मोक्षहेतुज्ञानविषयतया चाज्ञातत्त्वं सप्रयोजनत्त्वं च निर्विवादमेव अबाधितत्त्वमात्रं सन्दिग्धं तत्रान्यथानुपपत्तिगतिसामान्याभ्यां नि-

www.astrology-tantra.com

तत्रापि त्रिविधं लिङ्गमर्थनिष्ठं प्रमावहं ॥ ११ ॥
अज्ञातत्वादिभेदेन निर्विवादं सतां मतं ।
शब्दनिष्ठं तु त्रिविधं प्रसक्त्यन्तरवारकं ॥ १२ ॥
उपक्रमोपसंहृत्योरैक्यरूप्यमिहादिमं ।
अभ्यासश्चार्थवादश्च निर्विवादमिति त्रयं ॥ १३ ॥
अज्ञातत्त्वं मतं मानान्तरासिद्धे चिदद्वये ।
सप्रयोजनता मोक्षहेतुधीविषयत्वता ॥ १४ ॥
अबाधितत्त्वं सन्दिग्धं तच्च निर्णीयते स्फुटम् ।
अन्यथाऽनुपपत्त्या च गतिसामान्यतस्तथा ॥ १५ ॥
न हि विश्वनिषेधात्मा द्वैतं स्याद्व्यावहारिकं ।
येन तत्र श्रुतेः सिद्धं प्रामाण्यं व्यावहारिकं ॥ १६ ॥
अतस्तत्र श्रुतेरस्ति प्रामाण्यं तात्विकं परं ।
व्यावहारिकसत्यत्वे द्वैते तत्र श्रुतेरपि ॥ १७ ॥

---

र्णीयते एतत्सर्वं मनसिनिधायाह—" तात्पर्यै " त्यादिपञ्चभिः ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥

॥ अद्वैतश्रुतेस्तात्पर्यलिङ्गोपेतत्वोपपत्तिः ॥

अद्वैतश्रुतेस्तात्त्विकं प्रामाण्यं तात्विकवस्तुविषयत्त्वात्। द्वैतश्रुतेस्तु व्यावहारिकं व्यावहारिकवस्तुविषयत्त्वादिति व्यवस्थां विषयभेदेन दर्शयति—" नहीति " सार्द्धद्वयेन ॥ १६ ॥ १७ ॥ परस्पर-विरुद्धयोर्द्वयोस्तात्विकत्वं न सम्भवतीत्याह—" मिथ " इत्य-

DR.RUPAK NATH (DR.RUPNATHJI)
www.astrology-tantra.com

व्यावहारिकमेवास्ति प्रामाण्यं न तु तात्त्विकं ।
मिथो विरुद्धयोर्नास्ति तात्त्विकत्त्वप्रयोगतः ॥ १८ ॥
विश्वसत्यत्ववाक्यस्य गतिरस्त्यन्यथैव हि ।
सामानाधिकरण्यं हि यतः सिद्धं चतुर्विधं ॥ १९ ॥
अध्यासे स्यादिदंरूप्यमभेदे तत्वमस्यपि ।
स्थाणुः पुमांस्तु बाधायां वैशिष्ट्ये नीलमुत्पलं ॥ २० ॥
अध्यासे वाथ बाधायां विश्वं सत्यमितोष्यते ।
न तेनाद्वैततात्पर्यवतोवाक्यस्य बाधनं ॥ २१ ॥
यन्त्वेकाकी न रमत इति श्रीः सप्रपञ्चतां ।

---

द्वैन । वस्तुनि विकल्पासम्भवात्तात्विकव्यावहारिकप्रामाण्य-भेदेन च व्यवस्थोपपत्तेरित्यनवद्यमिति भावः ॥ १८ ॥ स्तुतिपरत्वे-नावधारितस्य विश्वसत्यत्ववाक्यस्यैवान्यथा व्याख्यातुमुचितत्त्व-मित्त्यभिप्रेत्याह—" विश्वसत्यत्वेति " ॥ १९ ॥ उक्तं सामा-नाधिकरण्यचातुर्विध्यं विभजते—" अध्यासे " इति ॥ २० ॥ विश्वं सत्यमित्यत्र बाधायामध्यासे वा सामानाधिकरण्योपपत्तेर्न तस्य षड्विधतात्पर्यलिङ्गोपेताद्वैतश्रुतिबाधकत्वमित्याह–" अध्या-सेइति " । ॥ २१ ॥

॥ विश्वसत्यत्त्वप्रतिपादिनीनां श्रुतीनामर्थान्तरपरत्वोपवर्णनम् ॥

अथ " (१)तस्मादेकाकी न रमत " इति श्रुतेः सप्रपञ्च-तापि पुरुषार्थः स्यादिति नेत्याह—" यन्त्विति " । "(२)द्विती-

---

(१) बृहदारण्यके १ । ४ । ३ ।
(२) बृहदारण्यके १ । ४ । २ ।

RUPAKNATH JI ( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

पुमर्थमाह तन्नैवं सा ऽविवेकिपरा श्रुतिः ॥ २२ ॥
एकधैवेति वेदान्तः साक्षान्मोक्षैकहेतुतां।
प्राहाद्वैतात्मबोधस्य निष्प्रपञ्चैकतत्परः ॥ २३ ॥
विश्वसत्यत्वगीस्तस्माद्व्यावहारिकसत्वगा।
ब्रह्मज्ञानेतराबाध्यं व्यावहारिकमिष्यते ॥ २४ ॥

---

याद्वैभयंभवतीति" श्रुते' तस्या सप्रपञ्चताया दुःखसाधनत्वेन पुरुषार्थत्वायोगात्कर्मकाण्डवदस्याः श्रुतेरविवेकिपुरुषपरत्वाच्च न तथात्त्वमित्यर्थः ॥ २२ ॥ ननु—"(१)पृथगात्मानं प्रेरितारं च मत्त्वा जुष्टस्तेनामृतत्वमेतीति" भेदज्ञानस्य मोक्षहेतुत्वश्रवणात्कथं न सप्रपञ्चता पुरुषार्थइत्याशङ्क्याह—"एकधेति" ।एक(२)धैवानुद्रष्टव्यमित्यादिवाक्यस्वारस्यादभेदज्ञानस्यैव साक्षान्मुक्तिहेतुत्वं प्रेरकपृथक्त्वदृष्टेः सगुणब्रह्मज्ञानस्यापि परम्परयोपकारकत्वान्मतेः परं न तु तदुत्तरामिति तात्पर्यार्थः ॥ २३ ॥

॥ सप्रपञ्चतायाः पुरुषार्थत्वनिरास ॥

अतएव सत्यत्वश्रुतिविरोधेन मिथ्यात्वश्रुतिरेवान्यपरेत्यपि न, षड्विधलिङ्गतात्पर्योपेतत्वेन मिथ्यात्वश्रुतेरनन्यपरतया प्रबलत्वाद्द्वैदिकतात्पर्यविषयस्य च तात्त्विकत्त्वनियमेन तात्पर्यज्ञापकानामपि लिङ्गानां च तथात्वएव पर्यवसानात्सत्वश्रुतिवाक्यस्थपदानां चान्यपरत्वान्न सत्वे तात्पर्यलिङ्गशङ्केत्यभिप्रेत्याह— "विश्वसत्यत्वेति"। व्यावहारिकत्त्वं च ब्रह्मज्ञानेतराबाध्यत्वं न त्वबाध्यत्वं मिथ्यात्वबोधकश्रुतिविरोधादिति भावः ॥ २४ ॥

---

(१) श्वेताश्वतरोपनिषदि प्र० ष० मन्त्र। (२) बृहदारण्यके ४।४।२०।

DR. RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

अप्रामाण्यप्रसङ्गोऽपि न सत्यत्वश्रुतेर्मम ।
अतत्त्वावेदकत्वेन स्यादनिष्टकरो मनाक् ॥ २५ ॥
तात्पर्येण तु सर्वासां श्रुतीनां सम्मतं समं ।
अस्मत्सिद्धान्तगं तत्त्वावेदकत्वं समन्वयात् ॥ २६ ॥
अनन्यशेषमिथ्यात्वश्रुतेः स्वार्थपरत्वतः ।
अन्यशेषतया विश्वसत्यत्वश्रुतिरन्यगा ॥ २७ ॥
तत्परत्वेन चाद्वैतश्रुतेः प्राबल्यमिष्यते ।
ततो न तद्विरोधेन सत्यं विश्वं वदेच्छ्रुतिः ॥ २८ ॥

---

ननु प्रपञ्चसत्यत्वश्रुतेरप्रामाण्यप्रसङ्ग इत्याशङ्क्य निराचष्टे—" अप्रामाण्येति " द्वाभ्यां । अतत्त्वावेदकत्वरूपाप्रामाण्यस्यावान्तरतात्पर्यमादायेष्टत्वात्, परमतात्पर्येण तु सर्वश्रुतीनामपि तत्त्वावेदकत्वं समं, प्रातिभासिकव्यावृत्तस्य व्यावहारिकस्य तद्वतितत्प्रकारकत्त्वादिरूपस्य निराकर्त्तुमशक्यत्वात् सांव्यवहारिकं प्रामाण्यमव्याहतमेवेति तात्पर्यार्थः ॥ २५ ॥ २६ ॥ ननु, यदि सत्वश्रुतिः प्रत्यक्षप्राप्त्यर्थत्वान्न स्वार्थपरा तर्हि मिथ्यात्वश्रुतिरपि तद्विरुद्धार्थत्वात्स्वार्थपरा न स्यात् तत्प्रापिततद्विरोधयोस्तात्पर्याभावहेत्त्वोरुभयत्रापि समत्वादित्याशङ्क्याह—" अनन्येति " । प्रत्यक्षापेक्षया चन्द्राधिकपरिमाणबोधकागमस्येव मिथ्यात्वबोधकागमस्य बलवत्त्वेन प्रत्यक्षप्राप्तानुवादिसत्वश्रुत्यपेक्षयाऽपि बलवत्त्वात् प्राप्तार्थाप्राप्तार्थयोर्विरोधे प्राप्तार्थस्याऽप्राप्तविध्यर्थत्वेनान्यशेषत्वनियमादप्राप्तार्थस्यैवानन्यशेषत्वेन च बलवत्वात् अनन्यशेषमिथ्यात्वश्रुतिविरोधान्न प्रत्यक्षागृहीतत्रिकालाबाध्यत्वरूपसत्यत्वपरा विश्वसत्यत्वश्रुतिरिति । अद्वैतश्रुतेश्च प्राबल्ये निरवकाशत्वतात्पर्यवत्वादिकमेव प्रयोजकं नान्यदिति द्वयोस्तात्पर्यार्थः ॥ २७ ॥ २८ ॥

॥ विश्वमिथ्यात्वानुमानस्याऽऽगमादिबाधोद्धारः ॥

DR.RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

पक्षादीनां हि मिथ्यात्वबोधनेऽपि न नः क्षतिः ।
साधकस्य च मिथ्यात्वे न क्षतिः सत्वसाधने ॥ २९ ॥
प्रतिबिम्बस्य बिम्बैकसाधनत्वमिहेक्ष्यते ।
तस्य बिम्बात्मना सत्वे मिथ्यात्वं तु स्वरूपतः ॥ ३० ॥
शुभादिसूचकत्त्वं हि स्वाप्नार्थस्यासतोऽपि च ।

---

ननु सत्वसाधकानां मिथ्यात्वसाधकानुमानेभ्यः प्राबल्यं, मिथ्यात्वसाधकप्रतिज्ञाद्युपनीतपक्षादीनां मिथ्यात्त्वाबोधने सर्वमिथ्यात्त्वासिद्धि. तद्बोधने परस्परव्याहतिराश्रयासिद्ध्यादिकं चेत्याशङ्क्य मिथ्यात्वसाधकप्रतिज्ञाद्युपनीतपक्षादीनां मिथ्यात्वबोधनेपि व्याहत्यभावात् प्रतिज्ञादिभिस्तेषां त्रिकालाबाध्यत्त्वरूपसत्त्वाप्रतिपादनान्नैवमित्यभिप्रेत्याह—"पक्षादीनामिति"। मिथ्यात्वस्य मिथ्यात्वेपि तत्त्वावेदकश्रुतिवेद्यत्त्वोपपत्तिः सत्त्वेन सत इव मिथ्यात्वेन मिथ्याभूतस्यापि प्रमाणगम्यत्वाविरोधात् एकांशे तत्त्वावेदकत्त्वाभावे प्यंशान्तरे तत्त्वावेदकत्त्वोपपत्तेरिति पुरेरितमित्यर्थः। ननु साधकत्वान्यथानुपपत्या परमार्थसत्त्वमायाति परमार्थसतएव साधकत्वादित्यत आह—"साधकस्येति"। परमार्थसत्वस्य साधकतायामतन्त्रत्वेन तद्भावेऽपि न साधकतानुपपत्तिः। वस्तुतस्तु ज्ञाताज्ञातसाधारणं व्यावहारिकसत्वमेव तन्त्रं तच्च ब्रह्मज्ञानेतराबाध्यत्वमेवेति न काचिद्धानि साधकत्त्वस्येति शेष ॥ २९ ॥ नेदमदृष्टचरं लोके प्रति बिम्बस्य मिथ्यात्वेऽपि बिम्बसाधकत्त्वं दृष्टमित्याह—"प्रतिबिम्बस्येति"। प्रतिबिम्बे बिम्बसाधकत्त्वं तावदस्ति तस्य बिम्बात्मना सत्त्वेपि प्रतिबिम्बाकारेणासत्त्वात् परमार्थसत्त्वं न साधकत्वे प्रयोजकमित्यर्थ. ॥ ३० ॥ एवं स्वाप्नार्थस्याऽसतोऽपि शुभाशुभसूचकत्त्वमित्याह—"शुभादीति"। वर्णारोपितह्रस्वत्व-

DR.RUPNATHJI(DR.RUPAK NATH)
www.astrology-tantra.com

वर्णारोपितदीर्घत्वाद्यपि सत्यार्थबोधकं ॥ ३१ ॥
मायाकल्पितहस्त्यादिर्भयकम्पादिकारणं ।
अतो न तात्त्विकं सत्वं साधकत्वे प्रयोजकं ॥ ३२ ॥
अर्थावच्छिन्नमेवास्ति ज्ञानं सर्वत्र कारणं ।

---

दीर्घत्वादीनां च नगो नागइत्यादावर्थविशेषप्रत्यायकत्वं दृष्टमित्यर्थः ॥ ३१ ॥

मायाकल्पितहस्त्यादे रज्जुसर्पादेश्च भयादिहेतुत्वं सवितृसुषिरस्य च मरणसूचकत्वं शङ्काविषस्य च मरणहेतुत्वं दृष्टं तथाऽत्रापि स्यादेवेत्याह—“ मायेति ” । ॥ ३२ ॥ ननु तत्र शङ्कैव भयमुत्पाद्य धातुव्याकुलतामुत्पादयतीति सैव मरणहेतुर्न तु शङ्कितं विषमपि, एवं ‘पु(१)रुषं कृष्णं कृष्णदन्तं पश्यती’त्यादिश्रुतिबलात्स्वाप्नदर्शनस्यैव शुभादिसूचकत्वं, एवं सवितृसुषिरमायागजादीनामपि ज्ञानमेव तत्तदर्थक्रियाकारि न तु तदर्थोऽपि तथा च सर्वत्रोदाहृतस्थलेषु ज्ञानमेव हेतु तच्च स्वरूपत सत्यमेव अन्वयव्यतिरेकावपि ज्ञानस्यैव कारणतां ग्राहयत. न हि सन्निहितमपि सर्पमजानानो बिभेतीत्याशङ्क्याह—“अर्थावच्छिन्नमिति” । एतदुक्तं भवति स्वप्ने जागरे वा उत्कृष्टकलधौतदर्शनादुत्कृष्टं सुखं उत्कृष्टसर्पादिदर्शनाच्चोत्कृष्टभयादि दृश्यते विषयस्याकारणत्वे तदुत्कर्षानुविधानं कार्ये न स्यात्, न च ज्ञानप्रकर्षादेव तत्प्रकर्ष. ज्ञानेपि विषयगतप्रकर्षं विहायान्यस्य प्रकर्षस्याभावात् । अथ ज्ञानगता जातिरेव प्रकर्षः न, चाक्षुषत्वादिना सङ्करप्रसङ्गात् विषयप्रकर्षेणैवोपपत्तौ चाक्षुषत्वादिव्याप्यजात्यङ्गीकारे गौरवान्मानाभावाच्च, किं च ज्ञानस्य भयादिजनकत्वे सर्पाद्यवच्छिन्नत्वमेव कारणतावच्छेदकमास्थेयं ज्ञानत्वेन

(१) ऐतरेयारण्यके ३ । २ । ४ ७ । १६ ।

DR. RUPNATHJI( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

न केवलमतोऽप्यर्थो हेतुरस्ति मृषात्मकः ॥ ३३ ॥
नह्यर्थगतमौत्कृष्ट्यं विना ज्ञानं सुखादिके ।
शक्नोत्यौत्कृष्ट्यमाधातुमितोऽर्थस्तत्र कारणं ॥ ३४ ॥
न चाप्रयोजकं मिथ्यात्वानुमानं यतोऽन्यथा ।
दृग्दृश्ययोर्हि सम्बन्धो दृश्यसत्त्वे न सम्भवेत् ॥ ३५ ॥

---

जनकत्वेऽतिप्रसङ्गात् तथा च मिथ्यार्थोपचितत्वाकारेण ज्ञानस्य मिथ्यात्वात् जनकतावच्छेदकरूपेण च मिथ्यात्वे रूपान्तरेण सत्त्वमप्यसत्त्वान्नातिरिच्यतेऽनुपयोगादिति तस्मात्सद्विविक्तं साधकमिति सिद्धमिति ॥ ३३ ॥ ३४ ॥

॥ असतामपि साधकत्वे युक्तिप्रदर्शनम् ॥

ननु मिथ्यात्वानुमानमप्रयोजकं सत्यत्वेऽपि दृश्यत्वोपपत्तेरित्याशङ्क्य दृग्दृश्यसम्बन्धानुपपत्तेर्न हि ज्ञानं ज्ञेयासम्बद्धमेव प्रकाशकमतिप्रसङ्गात् नापि संबद्धं आत्मस्वरूपस्य तद्गुणस्य वा ज्ञानस्य ज्ञेयेन संयोग(१)समवाययोरभावादन्यस्य चानाध्यासिकस्य सम्बन्धस्याभावान्मैवमित्यभिप्रेत्याह—" नचेति " सार्द्धेन । आध्यासिक एव सम्बन्धो दृग्दृश्ययोरतो मिथ्यात्वानुमानं नाप्रयोजकमित्यर्थः ॥ ३५ ॥ स्यादेतत्सर्वस्यापि दृश्यस्य ब्रह्मात्मकदृग-

---

(१) यथादौ नात्मन संयोग द्रव्येऽपि तस्यातीतत्वादिकाल उत्पत्तिकाले वा न स न चोत्पत्तिकाले संयोगो मास्तु चतीतादौ तदीयमूर्त्ताऽवस्थासंयोगद्वारक सम्बन्ध एव तथाप्यपि द्रव्यद्वारेति वाच्यम् ।घुट्यादेर्निरवयवत्वेन तत्र तद्गुणादौ च तदसम्भवात् साक्षात् एव संयोगस्य स्वीकारान्निरवयवेऽवच्छेदकत्वा सम्भवात् दिक्कालविशेषणां तु घुट्यादौ सम्बन्धस्य दैशिकव्याप्यवृत्तितया दैशिकाव्याप्यवृत्तिस्वभावसंयोगादावच्छेदकत्वाऽसम्भवात् आत्मगुणत्वन्तु न ज्ञानस्य सम्भवति तत्र मनस एवोपादानत्वादन्यथाऽऽत्मनस्तदुपादानत्व मनसो निमित्तत्वमित्यत्र गौरवात् आत्मरूपज्ञानस्य जगदुपादानस्य समवायो नातीतादौ सम्भवति न वाऽनादौ इति ध्येयम् ।



DR. RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

तस्मादाध्यासिकः सिद्धः सम्बन्धो दृशिदृश्ययोः ।
साक्षाच्चिद्दृक्प्रकाशः स्यात्स्वसंसृष्टप्रकाशकः ॥३६॥
दृश्याधिष्ठानरूपेण न परम्परया भवेत् ।
वृत्त्याऽऽवरणभङ्गे चित्प्रकाशोऽनावृतः स्वतः ॥३७॥
अतो वृत्तेः पुरा दृश्याप्रतीति रुपपद्यते ।

---

ध्यस्तत्वेपि कस्य चित्कदाचित्कं चित्प्रति[illegible] प्र[illegible]ाय त्वयापि तत्त-त्सन्निकृष्टेन्द्रियजन्यतत्तदाकारवृत्तिद्वारक [illegible]त्वानावृतदृक्सम्बन्धः स्वीकृत. तथा च सत्यत्वेपि तद्द्वारक एव सम्बन्धोऽस्तु किमाध्या-सिकसम्बन्धदुर्व्यसनेन न हि भवतां विज्ञानवादिनामिव तत्तज्ज्ञाने तत्तदर्थाध्यासस्वीकार. शुद्धदृशः स्वतो भेदाभावात् उपाधिविशि-ष्टाया भेदेपि घटादिवत्तस्या अपि मिथ्यात्वेनाधिष्ठानत्वायोगादिति चे-न्नेत्याह—" साक्षादिति " । प्रकाशस्य साक्षात्स्वसंसृष्टप्रका-शत्वनियमेन चैतन्यस्य परम्परासम्बन्धेन विषयप्रकाशकत्वायोगात् न हि प्रदीपः परम्परासम्बद्धं प्रकाशयति अतो विषयाधिष्ठानचैत-न्यमनावृतमेव प्रकाशकं आवरणभङ्गश्च वृत्त्या, अतो वृत्ते. पूर्वमा-ध्यासिकसम्बन्धे विद्यमानेपि दृश्याप्रतीतिरुपपन्ना अत एव वृत्तिप्र-तिबिम्बितचैतन्यस्य घटप्रकाशकत्वे आध्यासिकसम्बन्धस्या तन्त्रतापत्तिः घटाभिव्यक्तचैतन्यस्य घटप्रकाशकत्वे आवश्यकेन वृ-त्तिप्रतिबिम्बितचैतन्येनैव घटप्रकाशोपपत्तौ तदधिष्ठानचिदभिव्य-क्ति[illegible]योग इति निरस्तं, परोक्षविलक्षणस्फुटतरव्यवहारार्थे वि-षयाधिष्ठानचैतन्याभिव्यक्तिकल्पनाया युक्तत्वादिति सार्द्धद्वयता-[illegible]र्थ. ॥ ३६ ॥ ३७ ॥

॥ दृश्यत्वादिहेतोरप्रयोजकत्वनिरास ॥

ननु घटादेः स्वसन्निकृष्टेन्द्रियजन्यस्वज्ञानात्पूर्वं सत्वेन तत्राध्या-सो न युक्त. न च या घटेन्द्रियसन्निकर्षवृत्तिस्तया घटस्य न प्रकाशो-येन च प्रकाशो घटाधिष्ठानचैतन्येन न तत्सन्निकर्षजमिति वाच्यं, वृत्त्य-

www.astrology-tantra.com
RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )

धीवृत्तेरुदयात्पूर्वमज्ञातार्थप्रसिद्धये ॥ ३८ ॥
धीवृत्तिव्यतिरिक्तस्य ज्ञानस्यावश्यकत्वतः ।
अन्यथा साधकाभावे स्यादर्थो नरशृङ्गवत् ॥ ३९ ॥
वृत्तिरूपं न तज्ज्ञानं किं तु साक्षि चिदद्वयं ।
वृत्तिगोत्पत्तिनाशाद्यसंस्पृष्टं विविधं खवत् ॥ ४० ॥
अज्ञानसाधकत्त्वात्तन्नाज्ञानविनिवर्तकं ।
तच्च वृत्त्युपरक्तं सदज्ञानान्ध्यनिवर्तकं ॥ ४१ ॥
स(१)र्वतीर्थदृशां सिद्धिः स्वाभिप्रेतस्य वस्तुनः ।

---

तिरिक्ते ज्ञाने मानाभावात् अज्ञाननिवृत्तेरपि ततएव भावादिति चे-त्तत्राह— "धीवृत्तेरिति"। अन्यथा तस्य साधकाभावेन नर-शृङ्गतुल्यतया सन्निकर्षतज्जन्यज्ञानहेतुत्वेन प्राक्सत्त्वकल्पना निष्प्र-माणिका स्यात् तस्मादीदृशस्य घटादेरिन्द्रियसन्निकर्षाश्रयत्त्वेन ज्ञान-कारणत्त्वं तादृशस्य साधकं किं चिन्मानमवश्यमभ्युपेय(२)तच्च मानं न वृत्तिरूपं तदानीं वृत्तिकारणाप्रवृत्तेरिति तद्विलक्षणं नित्यं स्वप्र-काशमेकमेव साक्षित्वात् वृत्तिगतोत्पत्तिविनाशजडत्त्वादिभिरसंस्पृष्टं नानाविधोपाधिसम्बन्धान्नानाविधव्यवहारभाग्भवति नभ इव घटा-द्युपाधिभेदेनेति सार्द्धद्वययोजना ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥

ननु तर्ह्यज्ञानसाधके साक्षिचैतन्ये तस्मिन् घटादेरध्यास इति का-नुपपत्तिरित्यभिप्रेत्याह— "अज्ञानेति" ॥४१॥ तत्र वार्त्तिकवचनानि

---

(१) बृहदारण्यक ४ अ० ३ ब्रा० वार्तिके श्लो० १५६ ।

(२) अन्यथाऽन्वयव्यतिरेकयोरग्रहेण कार्यकारणभावाग्रहात् सर्वा मानमेयादि-व्यवस्थोच्छिद्येतेति शेषः ।

यदभ्युपगमादेव तत्सिद्धिर्वार्यते कुतः ॥ ४२ ॥
स(१)र्वतीर्थदृशां तावत्सामान्यं मानलक्षणं ।
अज्ञातार्थावगमनं त्वदुक्ते तन्न युज्यते ॥ ४३ ॥
स्वतः(२)सिद्धोऽथ वासिद्धो देहादिस्ते भवन्मते ।
प्रमाणानां प्रमाणत्त्वं नोभयत्रापि लक्ष्यते ॥ ४४ ॥
प्रमा(३)णान्यन्तरेणापि देहादिश्चेत्प्रसिध्यति ।
वद प्रमाणैः कोन्वर्थो न हि सिद्धस्य साधनं ॥ ४५ ॥
स्व(४)तोऽसिद्धे प्रमेये तु नासतो व्यञ्जिका प्रमा ।
नाभिव्यनक्ति सविता शशशृङ्गं स्फुरन्नपि ॥ ४६ ॥
प्रतिबिम्बितचैतन्यं घटाधिष्ठानतोऽपृथक् ।
सर्वावभासकत्त्वं चिद्वस्तुनोऽतोऽद्वयात्मनः॥ ४७ ॥
चिदध्यस्ततया सर्वं चिदज्ञानैककारणं ।

---

दर्शयति ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ वृत्तिप्रतिबिम्बितचैतन्यस्य घटाधिष्ठानचैतन्येन सह भेदाभावाच्चैतन्यस्यैकत्वमेवेत्यभिप्रेत्याह—“वृत्तीति” ॥ ४७ ॥

चैतन्यमात्राज्ञानजन्यत्वात्तज्ज्ञाननिवर्त्यत्वाच्च घटादिप्रपञ्चस्याध्यस्तत्वमेवेति सिद्धान्तरहस्यमाह—“अत इति”। सदिति प्रतीय-

---

(१) बृहदारण्यके ४ अ० ३ ब्रा० वार्तिके श्लो० १५८।
(२) बृहदारण्यके ४ अ० ३ ब्रा० वार्तिके श्लो० १६०।
(३) बृ० ४ अ० ३ ब्रा० वा श्लो० १६१।
(४) बृ० ४ अ० ३ ब्रा० वा० श्लो० १६२।

DR.RUPAK NATH
www.astrology-tantra.com

चिज्ज्ञानेनैव बाध्यं तन्न चितोऽतः पृथङ्मनाक् ॥४८॥
विश्वस्याध्यासिकत्वेपि प्रातिभासिकवस्तुतः ।
वैलक्षण्यं पुरा वृत्तेश्चिदध्यस्तं घटादि यत् ॥ ४९ ॥
इन्द्रियद्वारतश्चित्तं तत्संयुक्तं घटादिकं ।

---

मानाधिष्ठानचैतन्यानुविद्धतया प्रतीयमानमसत्यमेव तस्माज्जगत्सत्यत्वे दृग्दृश्यसम्बन्धानुपपत्तिर्दृढैवेति भावः ॥ ४८ ॥ ननु विश्वस्याध्यासिकत्वे प्रातिभासिकस्थल इव विषयेन्द्रियसन्निकर्षाधीनायाः प्रतिकर्मव्यवस्थाया अनुपपत्तिरिति चेन्नैवमित्याह—" विश्वस्येति " । वृत्तेः पूर्वमेव घटादीनां चैतन्येऽध्यासेन प्रातिभासिकस्थलापेक्षया वैलक्षण्यात्प्रतिकर्मव्यवस्था सिद्ध्यत्येवेत्यर्थः ॥ ४९ ॥

॥ विश्वसत्यत्वे दृग्दृश्यसम्बन्धानुपपत्तिः ॥

अन्तःकरणं चक्षुर्वत्तेजोवयवि तच्चेन्द्रियद्वारेण तत्संयुक्तं विषयं व्याप्य तदाकारं भवति यथा नद्याद्युदकं प्रणाड्या निःसृत्य केदाराद्याकारं भवति सैव वृत्तिरित्युच्यतइत्याह—"इन्द्रियद्वारत इति" । तत्र जीवचैतन्यमविद्योपाधिकं सत्सर्वगतं अन्तःकरणोपाधिकं सत्परिच्छिन्नमिति मतद्वयं, तत्राद्ये विषयावभासकं जीवचैतन्यं द्वितीये ब्रह्मचैतन्यं आद्यपक्षेपि जीवचैतन्यमविद्यानावृतमावृतं वा तत्राद्ये वृत्तिर्जीवचैतन्यस्य विषयोपरागार्था, द्वितीये त्वावरणाभिभवार्था, परिच्छिन्नत्वपक्षे तु जीवचैतन्यस्य विषयप्रकाशकतदधिष्ठानचैतन्याभेदाभिव्यक्तिसिद्ध्यै, अनावृतत्वपक्षे ह्यनावृतं सर्वगतमपि जीवचैतन्यं तत्तदाकारवृत्त्यैवोपरज्यते न तु विषयैः असङ्गत्वात् यथा गोत्वं सर्वगतमपि सास्नादिमद्व्यक्त्याऽभिव्यज्यते न तु केशरादिमद्व्यक्त्या इत्याद्युपपादितं प्रत्यक्षतत्त्वचिन्तामणौ

DR. RUPNATHJI( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

विषयं व्याप्य तेजस्त्वात्तदाकारं भवत्यपि ॥ ५० ॥
अविद्योपाधिको जीवः सर्वव्यापी मतः क्वचित् ।
तथाऽन्तःकरणोपाधिः परिच्छिन्नो मतः क्वचित् ॥ ५१ ॥
तत्राद्ये विषयाभासि जीवचैतन्यमिष्यते ।
द्वितीये ब्रह्मचैतन्यं विशेषोऽयं विविच्यताम् ॥ ५२ ॥
जीवस्यानावृतत्वे वाऽवृतत्वेवा मते भवेत् ।
विषयोपरागार्था वा ऽऽवरणाभिभवाय वा ॥ ५३ ॥
वृत्तिः स्यात्सर्वगत्वेऽस्य प्रतिकर्मव्यवस्थितौ ।
परिच्छिन्नत्वपक्षे साऽभेदाभिव्यक्तये मता ॥ ५४ ॥
उपपादनमेतेषां युक्तिभिर्विस्तरेण तु ।
ज्ञेयमस्मत्कृते प्रत्यक्तत्वचिन्तामणौ स्फुटं ॥ ५५ ॥
अतः सत्यामविद्यायां शक्तेरभिभवादपि ।
तूलाज्ञानक्षतेर्वा स्यादेकदेशविनाशतः ॥ ५६ ॥

---

पञ्चमप्रकरणे विस्तरेणाभिहितमित्यभिप्रेत्याह–"अविद्योपाधिक" इति पञ्चकेन ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥

॥ मतभेदेन वृत्तेरुपयोगनिरूपणम् ॥

तत्र प्रतिकर्मव्यवस्थाया न काचिदनुपपत्तिरिति व्यवस्थामाह— "अविद्यायामिति"। तस्मादविद्यायां सत्यामपि शक्त्यभिभवाद्वा तूलाज्ञाननाशाद्वाऽवस्थाविशेषप्रच्यावनाद्वा एकदेशनाशाद्वा कटवत्सम्वेष्टनाद्वा भीतभटवदपसरणाद्वाऽऽवरणभङ्गानिर्मोक्षबाधानामुपपत्तिरस्तीति द्वयोर्योजना ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ नन्ववस्थाविशेषाणा-

www.astrology-tantra.com
DR. RUPNATHJI (DR. RUPAK NATH)

कटवद्वेष्टनाद्वापसृतेर्भीतभटादिवत् ।
आवृतिक्षत्यनिर्मोक्षबाधानामुपपत्तितः ॥ ५७ ॥
अवस्थावदभिन्नैवावस्थाऽज्ञानात्मिका मता ।
अज्ञानैक्यं तु सर्वत्राऽस्त्यनुस्यूतैकरूपतः ॥ ५८ ॥
अनेकाज्ञानपक्षे तु न शङ्कोदेति मन्मते ।
एकेनैव विनाशेपि व्यवस्था प्रागभाववत् ॥ ५९ ॥

---

मज्ञानाभिन्नत्वे एकाज्ञानपक्षश्चाति· भिन्नत्वे च साक्षाज्ज्ञानेन निवृत्तिर्भ्रमाद्युपादानत्वं च न स्यात् तेषामिव रूप्यस्यैवोपादाननाशं विना नाशप्रसङ्गश्च शुक्त्यज्ञानं नष्टमित्यनुभवविरोधश्चेत्याशङ्क्याह—"अवस्थेति" । अज्ञानावस्थाया अज्ञानत्वेन न ज्ञानसाक्षान्निवर्त्यत्वानुपपत्तिः । यत्त्ववस्थाविशेषाणामिव रूप्यस्यैवोपादाननिवृत्तिं विना निवृत्त्यापादनं तदयुक्तं अज्ञानएव ज्ञानस्य साक्षाद्विरोधावधारणेनाज्ञानावस्थायास्तदभिन्नाया ज्ञानसाक्षान्निवर्त्यत्वानर्हत्वात् न तु रूप्यादीनां अनीदृक्त्वादिति तात्पर्यार्थः ॥५८॥

नन्वनेकाज्ञानपक्षे एकया वृत्त्या सर्वतदज्ञानस्य निवृत्तिरुतैकतदज्ञानस्य, आद्ये पुनः शुक्तेः कदाप्यप्रकाशो न स्यात् अन्त्ये वृत्तिकाले ऽपि प्रकाशो न स्यात् एकस्यावरणस्य निवृत्तावप्यावरणान्तरानिवृत्तेरिति चेन्मैवं, एकया वृत्त्यैकाज्ञाननाशेपि तयैवावरणान्तराणां प्रतिरुद्धत्वाद्यावत्सा तिष्ठति तावत्प्रकाशस्तस्यामपगतायां पुनरप्रकाशश्चोपपद्यते अज्ञानस्य प्रागभावस्थानीयत्वात् यथा तव एकं ज्ञानमेकमेव प्रागभावं नाशयति तन्नाशरूपेणोदयात् प्रागभावान्तरनिबन्धनमज्ञातत्वादिव्यवहारं च प्रतिबध्नाति तथा ममाप्येकं ज्ञानमेकमेवाज्ञानं निवर्तयति अज्ञानान्तरनिबन्धनं च प्रयोजनं प्रतिबध्नातीति किमनुपपन्नमित्यभिप्रेत्य परिहरति—"अनेकेति" ॥५९॥

॥ वृत्तीनामज्ञाननिवर्तकत्वनिरूपणम् ॥

DR. RUPAK NATH
www.astrology-tantra.com

न मिथ्यात्वानुमानं वा प्रतितर्कपराहतं ।
ब्रह्मणो निर्विशेषस्य निःसामान्यस्य वस्तुतः ॥६०॥
स्वप्रकाशतया ज्ञातेप्यानन्दत्वाद्यभानतः ।
अधिष्ठानत्वमस्त्यव सामान्यादेश्च सम्भवात् ॥६१॥
कल्पितानां हि सामान्यविशेषाणां प्रवाहतः ।
अनादित्वेन नो शङ्क्यमत्राऽन्योन्याश्रयादिकं ॥६२॥
सत्वानन्दत्वमुख्यानामेव कल्पितभेदतः ।

---

ननु मिथ्यात्वानुमानं प्रतिकूलतर्कपराहतं तथाहि विश्वं यदि कल्पितं स्यात् साधिष्ठान स्यात्, नचैव, सामान्यतो ज्ञातत्वे सत्यज्ञातविशेषवत्त्वस्याधिष्ठानत्वप्रयोजकस्य निर्विशेषे निःसामान्ये च ब्रह्मण्यसम्भवादित्याशङ्क्य स्वरूपेण ज्ञातत्वे सति विशेषेणाज्ञातत्वस्याधिष्ठानत्वप्रयोजकत्वेनाज्ञातविशेषवत्त्वस्याप्रयोजकत्वात् तथा च निःसामान्ये निर्विशेषे च ब्रह्मणि स्वप्रकाशत्वेन ज्ञानात्परिपूर्णानन्दत्वादिना चाज्ञानादधिष्ठानत्वमुपपन्नमित्यभिप्रेत्य परिहरति—“ न मिथ्यात्वे ” इति द्वाभ्यां। वस्तुतस्तु कल्पितसामान्यविशेषवत्त्वं ब्रह्मण्यपि सुलभमेव अकल्पितसामान्यविशेषवत्त्वं चाप्रसिद्धमित्याशयेनाह—“ सामान्यादेरिति ” ॥६०॥६१॥

न चान्योन्याश्रयादि शङ्क्यमित्याह—“ कल्पितानामिति ” ॥६२॥ सत्त्वानन्दत्वादीनामेव कल्पितव्यक्तिभेदेन सामान्यत्वात् परिपूर्णानन्दत्वादीनां च विशेषत्वात् सदात्मना स्वरूपज्ञानस्यैव सामान्यज्ञानत्वादिति न काचिदनुपपत्तिरित्याह—“ सत्त्वानन्दत्वेति ” युग्मेन। नह्यध्यसनीयं सदात्मना न भाति एतावानेव

RUPNATHJI (DR. RUPAK NATH)
www.astrology-tantra.com

सामान्यत्त्वात्तथा पूर्णानन्दत्वादेर्विशेषता ॥ ६३ ॥
आनन्दाद्यात्मना तस्याऽऽवृतस्याऽपि चिदात्मनः ।
सद्रूपेण प्रकाशस्य सम्भवान्न क्षतिः क्वचित् ॥ ६४ ॥
य(१)त्प्रसादादविद्यादि सिध्यतीव दिवानिशं ।
तमप्यपन्हुतेऽविद्या नाज्ञानस्यास्ति दुष्करं ॥ ६५ ॥
विश्वोपादानविषयाज्ञानस्य श्रवणादिजम् ।
वृत्तिरूपं विरोधि स्याज्ज्ञानं न तु चिदात्मकं ॥ ६६ ॥
अनादित्वेन चाऽविद्याध्यासे दोषानपेक्षता ।

---

विशेषः यदधिष्ठानं स्वत एव सदात्मना भाति अध्यसनीयं तु तत्सम्बन्धादिति भावः ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ नन्वधिष्ठानतिरोभावं विना भ्रमासम्भवः प्रकाशरूपतिरोधाने तु तदध्यस्ताविद्यादेः प्रकाशानुपपत्तेरित्याशङ्क्यैकस्यैवानन्दात्मना तिरोहितस्य सदात्मना प्रकाशसम्भवोऽस्तीत्यत्र वार्त्तिकवचनमुदाहरति—"यत्प्रसादादिति" ॥ ६५ ॥ विश्वोपादानगोचराज्ञानस्य श्रवणादिजन्यमात्ममात्रविषयकं वृत्तिरूपं ज्ञानं विरोधि न तु चिद्रूपं स्वतःसिद्धज्ञानं, भ्रमविरोधिनश्च वृत्तिरूपस्य ज्ञानस्येदानीमभावोऽस्त्येवेत्याह— "विश्वेति" ॥ ६६ ॥

॥ मिथ्यात्त्वे प्रतिकूलतर्कनिरासः ॥

ननु दोषं विना भ्रमस्वीकारे स्यादप्रामाण्यस्य स्वतस्त्वापत्तिः दोषजन्यत्वस्वीकारे तु दोषस्याप्यध्यसनीयत्त्वेनानवस्थापत्तिरित्याशङ्क्यानाद्यविद्याध्यासस्य दोषानपेक्षत्त्वात्साद्यध्यासस्य चावि-

---

(१) बृहदारण्यक ४ अ० ३ ब्रा० वार्तिके श्लो० ७४ ।



RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

अन्यान्तःकरणाध्यासे त्वविद्या सर्वदोषभूः ॥६७॥
अधिष्ठानापरोक्षत्वं कारणं सकलभ्रमे ।
चैतन्यस्यापरोक्षत्वं स्वप्रकाशतया स्वतः ॥ ६८ ॥
अध्यस्तत्वादविद्यायाः स्वावच्छिन्ने चिदात्मनि ।
तेनैव साक्षिणा तस्या अपरोक्षत्वमिष्यते ॥ ६९ ॥
समसत्ताकताऽविद्यादोषद्वैतप्रपञ्चयोः ।
कार्य्यकारणभावेन मिथ्यात्वमुभयोः समं ॥ ७० ॥
वेदान्तवाक्यजं ज्ञानं मतं स्वपरबाधकं ।
नानवस्थाऽस्ति दृश्यत्वमात्रभावोऽपि बाधकं ॥ ७१ ॥

---

यादोषजन्यत्वाभावाद्प्रामाण्यस्य स्वतस्त्वं नाप्यनवस्थापत्तिरित्यभिप्रेत्याह— "अनादित्वेनेति" ॥ ६७ ॥ ननु देहेन्द्रियादिकं विना कथमन्त करणाध्यास इत्यतआह—"अधिष्ठानेति" । अधिष्ठानापरोक्षत्वं ह्यपरोक्षभ्रमे कारणं तद्यत्राधिष्ठानं स्वतो नापरोक्षं यथा शुक्त्याद्यवच्छिन्नचैतन्यं तत्र तदपरोक्षतार्थं देहेन्द्रियाद्यपेक्षा प्रकृते चाविद्यावच्छिन्नचैतन्यमधिष्ठानं तत्र चैतन्यस्य स्वप्रकाशत्वेनाविद्यायाश्च तदध्यस्तत्वेन तेनैव साक्षिणाऽपरोक्षत्वात्कुत्र देहेन्द्रियाद्यपेक्षा स्यादिति द्वयोरर्थः ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ अविद्याप्रपञ्चयोर्न विषमसत्ताकत्वमित्याह—" समसत्ताकतेति " ॥ ७० ॥ ननु बाधकज्ञानं सत्यमेव वक्तव्यं अन्यथा बाधपरम्परयाऽनवस्थापत्तिरित्याशङ्क्य वेदान्तवाक्यजन्यचरमचित्तवृत्तेः कतकरजोन्यायेन स्वपरबाधकतयाऽनवस्थाया अभावान्मैवमित्याह—" वेदान्तेति " ॥ ७१ ॥ यद्यपि बाधकज्ञानं वृत्त्युपरक्तचैतन्यरूपं स्वतः सत्यमेव

www.astrology-tantra.com
RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )

यद्यपि ब्रह्मचैतन्यं ज्ञानं वृत्तिगतं स्वतः ।
सत्यं तथाऽपि धीवृत्तेर्मिथ्यात्वाद्बाधसम्भवः ॥ ७२ ॥
नाधिष्ठानधियः प्राक् स्या त्तस्या मिथ्यात्वधीरिति ।
ततस्तात्सिद्धये पूर्वं प्रवृत्तिरुपपद्यते ॥ ७३ ॥
आत्मैक्यज्ञानबाध्यं तदज्ञानं तत्र कल्पितं ।

---

तथापि तदवच्छेदिकाया वृत्तेर्दृश्यत्वेन मिथ्यात्त्वाद् बाधोपपत्तिरस्तीत्याह—" यद्यपीति " ॥ ७२ ॥

ननु बन्धस्यात्यन्ताभावप्रतियोगित्वरूपमिथ्यात्त्वे तदभावार्थं यत्नो न स्यात् अत्यन्ताभावस्यासाध्यत्वात् अत एव न तत्प्रतीत्यभावार्थमपि यत्न तस्या अपि मिथ्यात्वादित्याशङ्क्य सत्यस्य ब्रह्मणो निवृत्त्यदर्शनेन स्वरूपतो मिथ्यात्वाभावे निवृत्त्ययोगान्मिथ्यात्वं निवृत्त्यनुकूलमेव न च तदर्थं प्रवृत्त्यनुपपत्ति अधिष्ठानसाक्षात्कारानन्तरं तथैव, ततः पूर्वं तु कण्ठगतविस्मृतचामीकरप्राप्तय इव भ्रमबाधकज्ञानोत्पत्तये प्रवृत्त्युपपत्तिरित्याशयेनाह—" नाधिष्ठानेति " ॥ ७३ ॥

ननु बन्धस्य ब्रह्मण्यध्यस्तत्वे तन्निदिध्यासनसाध्यतत्साक्षात्कारनिवर्त्यत्वं श्रवणादिनियमादृष्टसापेक्षब्रह्मज्ञाननिवर्त्यत्वं च न स्यात् न हि देवतानिदिध्यासनसाध्यतत्साक्षात्कारनिवर्त्यं दुरितं ब्रह्मण्यस्तं न वा दूरगमनादिनियमाऽदृष्टसापेक्षसेतुदर्शननिवर्त्यं दुरितं तत्राध्यस्तमित्याशङ्क्याऽऽत्माध्यस्तगौरत्वादेः शुक्त्याध्यस्तरूप्यादेश्च तत्तत्साक्षात्कारनिवर्त्यत्वदर्शनेन प्रपञ्चस्यापि ब्रह्मण्यध्यस्ततया तत्साक्षात्कारनिवर्त्यत्वस्यावश्यकत्वात् देवतादर्शनादिना तु प्रायश्चित्तसमकक्षेण दुरितस्य कारणात्मनाऽवस्थानमात्रं क्रियते न तु शुक्तिज्ञानेनेव निवृत्तिरज्ञाननिवृत्तिश्चाधिष्ठानज्ञानादेवेति नियमो नान्यथा तन्निवृत्तिरित्यभिप्रेत्य परिहरति—

RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

सकार्यमत एतस्य नान्यथा विनिवर्तनं ॥ ७४ ॥
वेदान्तश्रवणादिभ्यो वृत्तेर्जन्म न कर्मभिः।
तेषां तद्योग्यतासिद्धै विधिर्नोत्पत्तये धियः ॥ ७५ ॥
तत्वज्ञानं विनाऽविद्यानिवृत्तिर्नान्यतो भवेत्।
न ज्ञाने श्रवणाद्यन्यत्साधनं वेद उच्यते ॥ ७६ ॥
मिथ्यात्वेऽपि प्रपञ्चस्य श्रुतिसूत्रादिनिर्णये।

---

" आत्मैक्येति " ॥ ७४ ॥ कर्मादीनां बुद्धिशुद्ध्यर्थतया साक्षाच्छ्रवणादेरिव तत्त्वज्ञानजनकत्वाभावेऽपि न साक्षाज्ज्ञानसाधनत्वमित्याह—" वेदान्तेति " ॥ ७५ ॥ अज्ञानानिवृत्तेस्तत्वज्ञानैकसाध्यतया न तत्वज्ञाने श्रवणाद्यतिरिक्तस्य साधनत्त्वप्राप्तिरित्याह—" तत्वज्ञानमिति " ॥ ७६ ॥

॥ बन्धस्याऽध्यस्तत्वेन ज्ञाननिवर्त्यत्वोपपत्ति ॥

ननु यदि विश्वमध्यस्तं स्यात्तदा 'जन्मा(१)द्यस्य' यत इति सूत्रे 'यतो वाइमानि भू(२)तानी'त्यादि श्रुतौ च जन्माद्युक्तिः 'ईक्ष(३)तेर्ना शब्द'मिति सूत्रे 'तदै(४)क्षते'त्यादिश्रुतौ चश्वरस्येक्षापूर्वककर्तृत्वोक्तिः 'लोकवत्तु(५)लीलाकैवल्य'मिति सूत्रे 'आप्तकामस्य कास्पृहे'त्यादि श्रुतौ च प्रयोजनाभावेपि लीलया सृष्ट्युक्तिः 'वैष(६)म्यनैर्घृण्ये न सापेक्षत्वादिति' सूत्रे 'पुण्येन पुण्य लोकं नयती'त्यादिश्रुतौ च कर्मसापेक्षत्वेनावैषम्योक्ति' तेजोत(७)स्तथाह्याहे'ति सूत्रे 'वायो(८)र'ग्निरित्यादिश्रुतौ च तेजआदेर्वाय्वादिजन्यत्वोक्ति. 'विपर्यय-

---

(१) ब्र० सू० १।१।२।
(२) तैत्तिरीय ३।१।
(३) ब्र० सू० १।१ ५।
(४) छान्दोग्ये ६।३।१।
(५) ब्र० सू० २।१।३३।
(६) ब्र० सू० २।१।३४।
(७) ब्र० सू० २।३।१०।
(८) तैत्तिरीय २।१।

RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

विरोधतन्निरासोक्तिर्व्यावहारिकसत्त्वतः ॥ ७७ ॥
अध्यस्तेऽपीन्द्रजालादावैन्द्रजालिकपूरुषे ।
ईक्षापूर्वकस्रष्टृत्वं दृष्टं स्यात्प्रकृते तथा ॥ ७८ ॥
मिथ्या स्वाप्नरथादीनां सृष्टिरुच्यत आगमे ।
अध्यस्तस्याऽपि सर्पादेर्भयकम्पादि हेतुता ॥ ७९ ॥
पारमार्थिकदृष्ट्या तु न च शङ्का न चोत्तरं ।
तदनन्यत्वमित्यत्र श्रुतेर्हार्दं तथेक्ष्यते ॥ ८० ॥
मायाविन इवेशस्य स्वाभासस्यापि देहिनः ।
लीलया भ्रामणं तेन न भ्रान्तत्त्वं महेशितुः ॥ ८१ ॥

---

(१)'न तु क्रमोऽत उपपद्यते चेति' सूत्रे 'पृथिव्यप्सु प्रलीयते' इत्यादिस्मृतौ च पृथिव्यादीनामबादौ लयोक्तिरित्यादि सर्वमप्ययुक्तं स्यात् न हि कल्पिते तत्तद्विरोधशङ्का तन्निराकरणं च युक्तमित्याशङ्क्य प्रपञ्चस्य कल्पितस्यापि व्यावहारिकसत्त्वाभ्युपगमेन तद्दशायां विरोधशङ्कातत्परिहारयो रुचितत्वादिन्द्रजालादावध्यस्तेप्यैन्द्रजालिकादेरीक्षापूर्वकस्रष्टृत्वादेर्दर्शनाच्च स्वप्नेऽपि सृष्ट्यादेः श्रुत्या प्रतिपादनाच्चाध्यस्तस्यापि सर्पस्य भयकम्पादिजनकत्ववद्वाय्वादीनां तेज आदिजनकत्वमप्युपपन्नं 'तदभि(२)ध्यानादेव तु तल्लिङ्गात् स इति' सूत्रे च तत्तद्भावापन्नस्य ब्रह्मण एव कारणत्वाभिधानादबादौ पृथिव्यादिलयोक्तिरपि तत्तद्भावापन्नचैतन्ये व्याख्येयेति नाधिष्ठानातिरिक्ते लयोक्तिः वैषम्यनैर्घृण्यप्रयोजनादिशङ्कापरिहारादिकं उपासनावस्थायां 'भोक्त्रा(३)पत्तेरविभागश्चेत्स्याल्लोकवदि'त्यापानतः परिणामवादाभ्युपगमेन 'तदनन्यत्व(४)मारम्भणशब्दादिभ्य' इति तु विवर्तवादेन परमसिद्धान्तदशायां न शङ्का न चोत्तरं मायाविन इवेश्वरस्य स्वप्रतिबिम्बभूतजीवभ्रमयितृत्वेन सर्वविरोधनिरासोपपत्तेरेवमभिप्रेत्य परिहरति—" मिथ्यात्त्वेपीत्यादि " पञ्चकेन ॥७७॥ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥

---

(१) ब्र० सू० २ । ३ । १४ ।
(२) ब्र० सू० २ । १ । १२ ।
(३) ब्र० सू० २ । ३ । १३ ।
(४) ब्र० सू० २ । १३ ।

RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

यथा सतो जनिर्नैवमसतोऽपि जनिर्न च ।
जन्यत्वमेव जन्यस्य मायिकत्वसमर्पकं ॥ ८२ ॥
सदसत्कार्यवादादिनिषेधेनैव युक्तिभिः ।
कार्यकारणभावोऽतानिर्वाच्ये पर्यवस्यति ॥ ८३ ॥
तदेवं सर्वविश्वस्याद्वये ब्रह्मणि कल्पनात् ।
प्रतिकूलेन तर्केण न मिथ्यात्वे पराहतिः ॥ ८४ ॥
एकमेवाद्वितीयं सदित्यादिश्रुति मस्तकं ।
अनुगृह्णाति मिथ्यात्वाऽनुमानं सर्वतो वरं ॥ ८५ ॥
निर्दोषशब्दभावेन वेदे प्रामाण्यसम्भवः ।

---

अध्यस्तस्य कथमुत्पत्त्यादिरित्याकाङ्क्षायामभियुक्तवचनमाह—"यथेति" । अनध्यस्तस्य चाप्युत्पत्त्याद्यदर्शनेनाध्यस्तत्वस्यैव तदुपपादकत्वमित्यभियुक्तवचनस्यार्थः ॥ ८२ ॥ सत्कार्यवादासत्कार्यवादनिषेधेनानिर्वचनीयकार्यवादमात्रे कार्यकारणभावपर्यवसानादपि तथात्वमित्याह—" सदसदिति " ॥ ८३ ॥ तदेवं प्रपञ्चस्याद्वये ब्रह्मणि कल्पनोपपत्तेर्न प्रतिकूलतर्कपराहतिरित्याह—" तदेवमिति " ॥८४॥

॥ ब्रह्मणि कृत्स्नकल्पनोपपादनेन प्रतिकूलतर्कभङ्गः ॥

एतदनुमानमेक(१)मेवाद्वितीयमित्यादिश्रुतिरप्यनुगृह्णातीत्याह—"एकमेवेति " ॥ ८५ ॥

ननु श्रुत्या स्वस्वरूपस्वप्रामाण्यस्वयोग्यतादेर्मिथ्यात्वावबोधनेन प्रत्यक्षादिसिद्धतत्सत्त्वोपजीवनेन च ब्रह्मान्तरसकलमिथ्यात्वासिद्धेः

---

(१) छान्दोग्ये ६ । २ । १ ।

DR.RUPAK NATH (DR.RUPNATHJI)
www.astrology-tantra.com

आप्तत्वापौरुषेयत्वे दोषाभावे गतार्थके ॥ ८६ ॥
योग्यतादेश्च मिथ्यात्वबोधनेऽपि श्रुतेर्गिरा ।
तदर्थस्य न मिथ्यात्वं तन्निमित्ताद्यभावतः ॥ ८७ ॥
शाब्दिकन्यायवैषम्यान्नोपजीव्यविरोधिता ।

---

‘(१)सन्निपातलक्षणो विधिरनिमित्तं तद्विघातस्य’ न्यायेन प्रत्यक्षादिसिद्धघटादिमिथ्यात्वासिद्धिश्च योग्यतादिमिथ्यात्वबोधने च श्रुत्यर्थस्यातात्त्विकत्वापत्तिः शब्दबोधस्य शब्दतत्प्रामाण्ययोग्यतादिना समसत्ताकत्वनियमात् न च सदर्थस्वाप्नदेवतावाक्ये व्यभिचारः आप्तत्वापौरुषेयत्वायोगेन तस्य शब्दत्वेन प्रामाण्यायोगात् किन्तूपश्रुतिवत्तादृशशब्दज्ञानं लिङ्गत्वेन प्रमाणमित्याशङ्क्य निर्दोषशब्दत्वेन तस्य शब्दविधया प्रामाण्यसम्भवात् आप्तत्वाऽपौरुषेयत्वयोर्दोषाभाव एवोपक्षयात् व्याप्त्याद्युपस्थितिकल्पने गौरवात् वक्तुः कल्पितत्त्वेऽपि तद्गतदोषाभावार्थसम्वादेन कल्पयितुमशक्यत्वान्नैवमित्यभिप्रेत्याह—“निर्दोषेति”। तथा च शब्दसमसत्ताकत्वस्य व्यभिचाराद्योग्यतादिसमसत्ताकत्वनियमासिद्धेरप्रयोजकत्वाच्च परोक्षत्वानित्यत्वाद्युपाधिसम्भवाच्च श्रुत्या योग्यतादिसकलमिथ्यात्वबोधनेऽपि तदर्थस्य न मिथ्यात्वं मिथ्यात्वप्रयोजकरूपाभावादिति द्वयोस्तात्पर्यम्। ॥८६॥८७॥ महाभाष्योक्तन्यायादरहणमपि न युक्तं विषमवैषम्यादित्याह—“शाब्दिकेति”। तत्र प्रत्ययत्वमात्रेणैव निमित्तत्वान्न सन्निपातलक्षणन्यायावतारः प्रत्ययसद्भावस्य तदनुपजीव्यत्वात् एवं स्थिते यद्यमिथ्याभूतत्वेन प्रत्यक्षादेर्निमित्तता

---

(१) इयं परिभाषा महाभाष्यस्था ८७। सन्निपातः सम्बन्धो लक्षणं निमित्तं यस्य तादृशो विधिस्तद्विघातस्य स्वनिमित्तीभूतसन्निपातविघातस्य निमित्तं कारणं नेत्यर्थः तथा च यथा शतानीत्यादौ शिसन्निपातं निमित्तीकृत्य प्रवर्तमानो नुमाविधिर्नान्तत्वद्वारकषट्संज्ञया श्लोपेन तद्विघातस्य न निमित्तं तथा मिथ्यात्वधर्मिग्राहकप्रत्यक्षादिप्रामाण्यसन्निपातं निमित्तीकृत्य प्रवर्तमाना विश्वमिथ्यात्वश्रुतिर्नोक्तसन्निपातविघातस्य निमित्तमित्यर्थः।

DR.RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH)
www.astrology-tantra.com

अध्यक्षादेः स्वरूपेण निमित्तत्वं न सत्त्वतः ॥ ८८ ॥
बाध्यबाधकयोरैक्यरूपे सत्यपि न क्षतिः ।
सत्यं वेद्यं परं ब्रह्म वेदान्तानां प्रमात्त्वके ॥ ८९ ॥
वृक्षस्य स्वगतो भेदः पत्रपुष्पफलादिभिः ।
वृक्षान्तरात्सजातीयो विजातीयः शिलादितः ॥ ९० ॥
तथा सद्वस्तुनो भेदत्रयं प्राप्तं निवार्यते ।
एकावधारणद्वैतप्रतिषेधैस्त्रिभिः क्रमात् ॥ ९१ ॥

---

स्यात्तदा प्रत्ययस्यालुप्तत्वे निमित्ततामिव भवेदेतन्न्यायावतारः प्रत्यक्षादेस्तु स्वरूपेणैव निमित्तता स्वप्नार्थस्याप्यर्थक्रियाकारित्वदर्शनेन प्रागेवोपपादितेत्यतो यद् बाध्यगतं तात्विकत्त्वं तन्नोपजीव्यं यच्चोपजीव्यमर्थक्रियासामर्थ्यलक्षणं व्यावहारिकप्रामाण्यं तच्च न बाध्यत इति तात्पर्यार्थः ॥ ८८ ॥

प्रकृतेऽपि योग्यतादेस्तात्विकत्त्वस्यानुपजीव्यत्वात् न हि योग्यता तात्विकयोग्यतात्वेन निमित्तं किन्तु योग्यतात्त्वेन सकलद्वैताभावस्याधिकरणस्वरूपत्वेन तदधिकरणस्य च ब्रह्मणः 'सत्यं(१)ज्ञानमनन्तं ब्रह्म' "तत्स(२)त्यं स आत्मेत्यादि" श्रुत्या सत्यत्वप्रतिपादनाद्योग्यतादेर्मिथ्यात्त्वेपि वेदान्तवेद्यं सत्यमेवेति स्थितमित्यभिप्रेत्याह— "बाध्येति" ॥ ८९ ॥ एकमेवाद्वितीयमिति श्रुतिं व्याख्यातुं लोकसिद्धभेदत्रयं दृष्टान्तेनाभियुक्तोक्तं दर्शयति— "वृक्षस्येति" ॥९०॥ दार्ष्टान्तिके भेदत्रयं त्रिभिः पदैर्निषेधाति— "तथेति" । एकेति सजातीयस्य, एवेति स्वगतस्य, अद्वितीयमिति विजातीयस्य, भेदस्य निवारणं क्रियते इति विवेकः ॥ ९१ ॥ प्र-

---

(१) तैत्तिरीये । २ । १ । ३ ।
(२) छान्दोग्ये । ६ । ८ । ७ ।

DR. RUPAK NATH JI (DR. RUPAK NATH)
www.astrology-tantra.com

जडभेदो विजातीयः सजातीया चितो भिदा ।
ज्ञानानन्दादिधर्माणां भेदः स्यात्स्वगता भिदा ॥ ९२ ॥
यद्वाऽद्वितीयशब्देन सजातीयस्य वर्जनं ।
एकावधारणाभ्यां तु यथेष्टं शिष्टवर्जनं ॥ ९३ ॥
यद्वाऽद्वितीयशब्देन भेदत्रयनिषेधनात् ।
एकावधारणाभ्यां तु सङ्कोचाशङ्कनं हृतं ॥ ९४ ॥
एतत्तूयनिषेधेन ब्रह्माद्वैतपरा श्रुतिः ।
प्रपञ्चगतमिथ्यात्त्वानुमानं बहु मन्यते ॥ ९५ ॥
नामरूपादिमुक्तः सन्शोकं तरति तत्त्ववित् ।

---

कृते भेदप्राप्तिं विभज्य दर्शयति—" जडभेदइति " ॥९२॥ यदि चास्य गोर्द्वितीयोऽन्वेष्टव्य इत्युक्ते गौरेव द्वितीयोऽन्विष्यते नाश्वो न गर्दभ इति महाभाष्यानुसारात्सजातीयद्वितीयपरत्वं द्वितीयशब्दस्य तदा द्वितीयशब्दस्य सजातीयभेदनिषेधपरत्वं विजातीयस्वगतभेदनिषेधपरत्वं तु एकावधारणपदयोर्यथेष्टं व्याख्येयमित्यभिप्रेत्याह— " यद्वेति " ॥ ९३ ॥

पक्षान्तरमाह—" अथवेति " ॥ ९४ ॥ प्रकृतमुपसंहरति— " एतदिति " ॥ ९५ ॥

॥ सर्वाद्वैतश्रुतेः प्रत्यक्षादिविरोधोद्धारः ॥

'तर(१)ति शोकमात्मवित्,' तथा(२)विद्वान्नामरूपाद्विमुक्तः,' भिद्य(३)ते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः । क्षीयन्ते चा-

---

(१) छान्दोग्ये ७ । १ । ३ । (२) मुण्डके ३ । २ ८ ।
(३) मुण्डके २ । २ । ८ (



RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

भिद्यते हृदयग्रन्थिरित्यादिश्रुतिभिः स्वयं ॥ ९६ ॥
तत्त्वज्ञाननिवर्त्यत्वस्याऽन्यथानुपपत्तितः ।
मिथ्यात्त्वं बोधितं तस्य सत्यत्त्वे न निवर्त्यता ॥ ९७ ॥
मिथ्यात्वेन निवर्त्यत्वं बाधकत्वं प्रमात्वतः ।
अज्ञानकल्पिते दृश्येऽधिष्ठानज्ञान एव हि ॥ ९८ ॥
अन्यथाऽनन्तनियमकल्पनागौरवं भवेत् ।

---

स्य कर्माणि तस्मिन्दृष्टे परावरे' इत्यादिश्रुतिबोधितज्ञाननिवर्त्यत्वान्यथानुपपत्तिरपि बन्धमिथ्यात्वे प्रमाणं सत्यत्वे ब्रह्मवदनिवर्त्यत्वापत्तेरित्यभिप्रेत्याह—" नामरूपादीति " द्वाभ्यां॥९६॥ ॥ ९७ ॥ ज्ञाननिवर्त्यत्वावच्छेदकं सर्वानुगतं मिथ्यात्वमेवाज्ञानकल्पितत्वापरपर्यायमवच्छेदकं एवं ज्ञानस्यापि तन्निवर्त्तकत्वे सर्वानुगतमधिष्ठानप्रमात्वमेव तथा च यत्र ज्ञानस्याधिष्ठानप्रमात्वेन निवर्त्तकता तत्र मिथ्यात्वेनैव निवर्त्यतेति नियमः सिद्ध्यतीत्यभिप्रेत्याह-" मिथ्यात्त्वेनेति "। अज्ञानकल्पितत्वाद्दृश्ये प्रपञ्चे मिथ्यात्वेनैव निवर्त्यत्वं अधिष्ठानज्ञाने अधिष्ठानप्रमात्वेनैव बाधकत्वं निवर्तकत्वमित्यर्थः ॥ ९८ ॥

एतादृशनियमानभ्युपगमे चानन्तनियमकल्पनागौरवरूपो बाधकस्तर्क तथा हि यन्निष्ठा यदाकारा प्रमारूपान्तःकरणवृत्तिरुदेति तन्निष्ठं तदाकारमज्ञानं नाशयतीति नियमस्य सिद्धत्वादुपादाननाशस्य चोपादेयनिवर्त्तकत्वाच्छुक्त्यादिज्ञानेन तत्तदाकाराज्ञाननाशे तदुपादेयानां रजतादीनां निवृत्तिरौचित्यादवर्जितैवेति नियमान्तराकल्पनेन लाघवमनुकूलस्तर्कोऽस्मत्पक्षे अज्ञानोपादेयत्वं च रजतादीनामन्वयव्यतिरेकाभ्यां सविरुद्धमग्रे स्फुटीभविष्यति एवं स्थिते कृत्स्नस्यापि प्रप-

www.astrology-tantra.com
RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )

आत्मप्रमानिवर्त्यत्वं लाघवाज्जगतो मतं ॥ १० ॥
अज्ञानध्वंसिबोधस्य विनोत्पत्तिं न कस्य चित् ।
अपेक्षाऽस्ति न च ज्ञाने सेतुदर्शनवद्विधिः ॥ २०० ॥
प्रत्य(१)ग्याथात्म्यधीरेव प्रत्यगज्ञानहानिकृत् ।
सा चात्मोत्पत्तितोनान्यद्ध्वान्तध्वस्तावपेक्षते ॥ १ ॥
यत्र(२)हि द्वैतवद्यत्र(३)त्वस्येत्यादिः श्रुतिः स्मृतिः ।

---

अथ्याऽऽत्मप्रमानिवर्त्यत्वे तदज्ञानस्यापि नित्यत्वमेव तत्रावच्छेदकं कल्प्यते न त्वननुगतमाकाशत्वादीत्यभिप्रेत्याह—"अन्यथेति" ॥९९॥

बन्धस्याज्ञानमात्रहेतुकत्वेन ज्ञानातिरिक्तनिवर्त्तकानपेक्षणादज्ञाननिवर्त्तकज्ञानस्य चोत्पत्तिमन्तरेणान्यापेक्षा नास्तीति शुक्तिरज्ज्वादिज्ञाने दृष्टं सेतुज्ञानं तु चोदितविधिनैवैनोनिवर्त्तकं न ज्ञानत्वेन तस्मिन्सत्यपि तत्रत्यम्लेच्छादीनां श्रद्धाविरहिणामघानुपघातादित्यभिप्रेत्याह—"अज्ञानध्वंसीति" । न हि सेतुदर्शनमात्रस्य दुरितनाशकत्वं किं तु पर्षदुपस्थानादिपूर्वकव्रतकलापविशिष्टस्य छत्रपादुकादिवर्जनदोषोद्धारणदूरदेशगामित्वभिक्षाभोजित्वादिनियमानां कृतिसाध्यत्वात्तद्विशिष्टं सेतुदर्शनमपि कृतिसाध्यमिति विशिष्टरूपेण विध्यनोपपत्तिः आत्मज्ञाने तु नास्ति किञ्चिद्विशेषणमपि कृतिसाध्यं येन तद्विशिष्टत्वेनापि विधेयत्वं स्यात्कर्म्मसमुच्चयस्य निराकरिष्यमाणत्वाच्च सेतुदर्शनवद्विधिर्ज्ञाने इत्यर्थः ॥ २०० ॥ तत्र वार्त्तिककृद्वचनमाह—" प्रत्यगिति " ॥ १ ॥

अविद्याविद्याभ्यां प्रपञ्चोपलम्भानुपलम्भौ श्रुतिस्मृतिवाक्य-

---

(१) इ० सम्बन्ध वा० श्लो० १८, (२) बृ० । ४ । ५ । १५ ।
(३) बृ० ४ । ५ । १५ ।

DR.RUPAK NATH
RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

या(१)निशेत्यादिरज्ञानज्ञानाभ्यां धीभिदां जगौ ॥२॥
तस्माज्ज्ञाननिवर्त्यत्वमधिष्ठानप्रमात्वतः ।
प्रपञ्चगतमिथ्यात्त्वे प्रमाणमिति साधितं ॥ ३ ॥
स्वप्नवद्दृष्टिसृष्टेश्चाऽप्यन्यथानुपपत्तितः ।
जगन्मिथ्यात्वसिद्धिः सा ज्ञातमात्रैकसत्त्वभाक् ॥ ४ ॥
साप्यनाद्यतिरिक्तेऽर्थे स्वीकृता कारणात्मना ।

---

प्रमाणसिद्धावित्याह—" यत्रेति " ॥ २ ॥ फलितमुपसंहरति—
" तस्मादिति " ॥ ३ ॥

॥ ज्ञाननिवर्त्यत्वाऽन्यथाऽनुपपत्त्या मिथ्यात्त्वसिद्धि ॥

शुक्तिरूप्यस्वप्नादिवद्दृष्टिसृष्ट्यन्यथानुपपत्त्याऽपि जगतो मिथ्यात्वसिद्धिरित्याह—" स्वप्नवदिति " । दृष्टिसृष्टि. किमिति चेत् शृणु " दृष्टिसृष्टिर्ज्ञातमात्रैकसत्वभाग्भवतीति " योजना । दोषप्रयुक्तत्वनिबन्धनस्य ज्ञातैकसत्वस्याज्ञातसत्वाभावस्य वा प्रतिपन्नोपाधिदृष्टिजन्यज्ञातैकसत्वस्य वा द्रष्ट्रन्तरावेद्यत्वेसति ज्ञातैकसत्वस्य वा विवक्षितत्त्वात् तथा च न सुखाद्यंशे सिद्धसाधनं तद्वदन्यत्रार्थान्तरंवा नास्तीत्यर्थ. ॥ ४ ॥ ननु 'जीवो ब्रह्म विशुद्धा चिद्विभागस्त्वनयोर्द्वयोः । अविद्यातच्चितोर्योगः षडस्माकमनादय'इति प्राचां वचनेन, बौद्धं प्रति प्रत्यभिज्ञादिना विश्वस्य स्थायित्वप्रतिपादकेन च सूत्रभाष्यवार्त्तिकविवरणादिग्रन्थेन विरोध इत्याशङ्क्यानाद्यतिरिक्ते सृष्टिविषय एव दृष्टिसृष्टिस्वीकारात्कारणात्मना स्थायित्वस्वीकाराच्च तावतैव बौद्धाभिमतक्षणिकत्वनिराकरणोपपत्तेर्नास्माकं विरोधः प्रत्युताकरेषु बहुशो दृष्टिसृष्टि-

---

( १ ) भगवद्गीतायाम् २ । अ० श्लो० ६९ ।

DR.RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

स्थायित्वस्वीकृतेस्तत्र न बौद्धमततुल्यता ॥ ५ ॥
प्रतीतिमात्रसत्त्वेपि कर्मज्ञानादिचोदना ।
प्रमाणं स्वाप्नकार्यादिभावबोधकवाक्यवत् ॥ ६ ॥
स्वाप्नवाक्तद्विचाराभ्यां विशेषो वेदवाक्यगः ।
विषयाबाधसद्भावाज्ज्ञातसत्त्वेपि सम्भवेत् ॥ ७ ॥
प्रतिकर्मव्यवस्थापि सिद्ध्येन्मन्दाधिकारिणः ।

---

रुपपादितैवेत्याशयेनाह—" सापीति " । तत्र विषयजाले कारणात्मना स्थायित्वस्वीकृतेर्न बौद्धमततुल्यतेति योजना, नन्वेवं प्रतीतिमात्रशरीरत्वेन नियतकरणाजन्यत्व श्रुतिषु स्वर्गाद्यर्थं ज्योतिष्टोमादिविधेर्ब्रह्मसाक्षात्कारार्थं श्रवणादिविधेराकाशादेर्वाय्वादिहेतुत्वस्य चोक्तिरयुक्तेत्याशङ्क्य स्वाप्नकार्यकारणभावबोधकवाक्यवदुपपत्तेर्मैवमित्याह—" प्रतीतिमात्रेति " ॥ ६ ॥

न चैवं वेदस्तत्वाक्यस्य तन्मीमांसायाश्च स्वप्नवाक्यतन्मीमांसातुल्यतापत्तिः, विषयबाधाबाधाभ्यां विशेषोपपत्तेरित्याह—" स्वाप्नवागिति " । एतेन तृप्त्यर्थं भोजने परप्रत्यायनाद्यर्थं शब्दादौ च प्रवृत्तेरयोगेन स्वप्रक्रियाव्याघात इति निरस्तमिति भाव ॥ ७ ॥

अथैवं घटादेः स्वज्ञानात्पूर्वमसत्वेन प्रतिकर्मव्यवस्थानुपपत्ति अधिष्ठानस्यापि शुक्तीदमंशस्य रूप्यवदिदं रूप्यमिति ज्ञानात् प्रागसत्त्वेन संप्रयोगादिहेतुत्रयजन्यत्वस्याध्यासतटस्थलक्षणस्य सत्यवस्तुनो मिथ्यावस्तुसम्भेदावभास इत्यस्य स्वरूपलक्षणस्य चायोग इत्याशङ्क्य प्रतिकर्मव्यवस्थायाः संप्रयोगादित्रयजन्यत्वरूपाध्यासतटस्थलक्षणस्य च मन्दाधिकारिविषयत्वात् । सत्यस्य वस्तुनो मिथ्यावस्तु

DR.RUPAK NATH
www.astrology-tantra.com

संप्रयोगादिजन्यत्वाध्यासस्तत्रैव बोध्यते ॥ ८ ॥
व्यावहारिकसत्त्वेन व्यावहारिकबाधवत् ।
प्रातिभासिकबाधोऽपि ज्ञातसत्त्वेन सम्भवेत् ॥ ९ ॥
जीवब्रह्मविभागादेरनादित्वेन नेष्यते ।
दृष्टिसृष्टित्वमेवं न स्यान्मुक्तस्य पुनर्भवः ॥ १० ॥
ब्रह्मरूपतया मुक्तेर्दृगन्यत्वं न सम्भवेत् ।

---

सम्भेदावभास इति स्वरूपलक्षणं न दृष्टिसृष्टिपक्षेऽप्यविरुद्ध मित्यभिप्रेत्य परिहरति—" प्रतिकर्मेति "। न हीदमंशावच्छिन्नं चैतन्यं न वस्तु न वा मिथ्यारूप्यस्य तेन सह न सम्भेदावभास इति भावः ॥ ८ ॥ ननु रूप्यादिबाधस्याऽपि दृष्टिसृष्टित्वे तेन रूप्यादेर्मिथ्यात्वासिद्धिरित्याशङ्क्य बाध्यान्यूनसत्ताकत्वमेव बाधकत्वे प्रयोजकं न त्वधिकसत्ताकत्वं व्यावहारिकेण व्यावहारिकबाधवत्प्रातिभासिकेन प्रातिभासिकबाधाविरोधादित्यभिप्रेत्याह—" व्यावहारिकेति " ॥ ९ ॥

ननु सुषुप्तिप्रलयादौ जीवब्रह्मविभागस्याप्रतीतत्वेनाविद्यमानतया प्रतिसुषुप्ति प्रतिप्रलयं च मुक्तस्य पुनरावृत्त्यापत्तिः स्यादिति तत्राह—" जीवेति "। न च सुप्तं प्रति संस्कारादेरप्यभावेन तस्य पुनः प्रबोधायोग इति शङ्क्यं, कारणात्मना संस्कारावस्थितेः सत्त्वादिति भावः ॥ १० ॥ ननु मोक्षस्य दृगन्यत्वेन स्वाप्नमोक्षवद्दृष्टिसृष्ट्यापत्तिरित्यत आह—" ब्रह्मेति "। चैतन्यमात्रस्य दृष्टित्वे यद्यपि तत्समानसत्ताकतया घटादेः सदातनत्वापत्तिस्तथा-

DR.RUPAK NATH (DR.RUPNATHJI) www.astrology-tantra.com

वृत्त्युपाधिकचैतन्यं दृष्टिर्नो केवला चितिः ॥ ११ ॥
रज्जुसर्पादिवद्विश्वं प्रतिभासशरीरधृक् ।
सोऽयंसर्प इतीवात्र प्रत्यभिज्ञा न सा प्रमा ॥ १२ ॥
नाभेदे दृष्टिसृष्टित्वमात्मरूपतया भवेत् ।
बाधकत्त्वं च तज्ज्ञाने भवेदन्यूनसत्त्वतः ॥ १३ ॥

---

पि वृत्त्युपहितचैतन्यमेव दृष्टिशब्दार्थः वृत्तावपि वृत्तिरेव स्वस्वरूपा चैतन्योपाधिरिति नानवस्थाऽपीति भावः ॥ ११ ॥ नन्वैक्यप्रत्यभिज्ञाविरोधः पूर्वकालप्रतीतस्येदानीमभावादित्यत आह—"रज्जुसर्पेति"। नेहना(१)नेत्यादिश्रुतिभिः प्रपञ्चस्य मिथ्यात्वेऽवधृते रज्जुसर्पादिवत्प्रतिभासमात्रशरीरत्वमेव प्रतिभासकालातिरिक्तकालसत्त्वे बाधकं पुरुषान्तरप्रतीतेन सहैककालावच्छेदेनापि घटादौ प्रत्यभिज्ञानं भ्रम एव प्रतिभासस्य भेदात् यथैकस्यामेव रज्ज्वां मन्दान्धकारवर्त्तिन्यां दशानां युगपत्सर्पभ्रमेण पलायमानानां परस्परसम्वादेनैक एव सर्पः सर्वैरनुभूयत इति प्रत्यभिज्ञाभ्रमः अन्यभ्रमसिद्धस्यान्येन ज्ञातुमशक्यत्त्वादित्यर्थः ॥ १२ ॥

नन्वभेदस्यापि दृष्टिसृष्टित्वेन तज्ज्ञानस्य बाधकत्त्वायोग इति चेन्नेत्याह—"नाभेद इति"। आत्माभेदस्यात्मरूपत्त्वेन दृष्टिसृष्टित्वाभावात् अन्यूनसत्ताकत्त्वमात्रेण बाधकत्त्वोपपत्तेश्चेत्यर्थः । न च साक्षात्कारस्यापि दृष्टिसृष्टित्वेन प्रमाणजन्यत्वाभावात्तत्वज्ञानत्वाभावेन ततोमुक्तिर्न स्यादिति वाच्यं अबाधितविषयत्वेन तत्वज्ञानोपपत्तेः तस्य च दृष्टिसृष्टित्वेपि न क्षतिरिति भावः ॥ १३ ॥ ननु 'ध्रुवाद्यौ(२)र्ध्रुवा पृथिवी ध्रुवासः पर्वता इमं ध्रुवं विश्वमिदं जग'-

---

(१) बृ० । ४ । ४ । २५ ।

(२) ऋग्वेदे ८ अष्टके ८ अ० ११ वर्गेऽस्त्यृक् २ ।

RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

ध्रुवा द्यौः स्याद्ध्रुवा भूमिरित्यादिश्रुतिरञ्जसा।
प्रवाहानादिता कल्पादित्याहाद्वैततत्परा ॥ १४ ॥
प्राणलोकादिसृष्टिं हि जीवात्सुप्तोत्थिताच्छ्रुतिः।
वदन्ती दृष्टिसृष्टौ स्यात्प्रमाणं तत्त्वतत्परा ॥ १५ ॥
तद्द्वितीयं न तत्रास्त्यन्यद्विभक्तं ततो न हि।
यत्पश्येदिति वेदान्तः सुषुप्तौ प्रलये प्रमा ॥ १६ ॥
अज्ञानस्य जगद्धेतोः शक्तिवैचित्र्यतो भवेत्।
वैचित्र्यं जगतोऽप्येवं वासिष्ठादौ प्रदर्शितम् ॥ १७ ॥

---

दित्यादिश्रुतिविरोध स्यादिति तत्राह—" ध्रुवेति " । अनित्यतावादिभिरपि ध्रुवेत्यस्यान्यथानयने आवश्यके दृष्टिसृष्टिप्रतिपादकश्रुत्यनुरोधेनाकल्पसन्तानाविच्छेदपरत्वस्यैव युक्तत्वात् प्रपञ्चस्याकल्पात्प्रवाहरूपेणानादिताऽस्तीत्याह श्रुतिर्वस्तुतः सा ब्रह्माद्वैततत्परेत्यर्थः ॥१४॥ दृष्टिसृष्टौ च 'एव(१)मेवैतस्मादात्मनः सर्वे प्राणाः लोकाः सर्वे देवाः सर्वाणि भूतानि सर्व एवैत आत्मानो व्युच्चरन्तीति' श्रुतिः सुप्तोत्थिताज्जीवात्प्राणादिसृष्टिं प्रतिपादयन्ती प्रमाणमित्याह—"प्राणेति " ॥ १५ ॥ सुप्तौ सकलप्रपञ्चविलये 'न तु तद्द्वितीयमस्ति ततोऽन्यद्विभक्तं यत्पश्ये'दित्यादिश्रुतिः प्रमाणमित्याह—"तदिति" ॥ १६ ॥ आविद्यकस्य कुतो वैचित्र्यमित्यत आह—" ज्ञानस्येति" । नेदं स्वोत्प्रेक्षितमित्याह—" एवमिति " ॥ १७ ॥

---

(१) बृ० २ । १ । २० ।

RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

अविद्यायोनयो भावाः सर्वेऽमी बुद्बुदा इव ।
क्षणमुद्भूय गच्छन्ति ज्ञानैकजलधौ लयं ॥ १८ ॥
तस्मात्प्रातीतिकं सत्वं द्वैतजातस्य सर्वतः ।
ज्ञानज्ञेयात्मकं सर्वमाविद्यकमिति स्थितं ॥ १९ ॥
रज्जुसर्पादिवद्विश्वं नाज्ञातं सदितीरितं ।
प्रबुद्धद्रष्टृसृष्टत्वात्सुषुप्तौ च लयश्रुतेः ॥ २० ॥
स च द्रष्टैक एवास्ति न तद्भेदे प्रमाणकं ।
अविद्यावशतो ब्रह्मैवास्ति जीवो न चेतरः ॥ २१ ॥
तस्यैव प्रतिदेहं स्यादहमित्यादिधीर्भ्रमात् ।
स्वप्नवद्बन्धमोक्षादिव्यवस्थायाश्च सम्भवः ॥ २२ ॥

---

वासिष्ठवचनमाह—“ अविद्येति ” ॥ १८ ॥ फलितमुपसंहरति—“ तस्मादिति ” द्वाभ्यां ॥ १९ ॥ २० ॥

दृष्टिसृष्ट्यन्यथाऽनुपपत्त्याऽपि विश्वमिथ्यात्वसिद्धिः ।

स च द्रष्टैक एवास्ति तन्नानात्वे मानाभावादित्याह-“स इति”। ननु कथमेक एव जीवः प्रतिशरीरमहं सुखी अहं संसारी अहमस्य स्वमित्याद्यनुभवविरोधादिति चेन्नेत्याह—“ अविद्येति ” । अविद्यावशाद्ब्रह्मैवैकं संसरति स एव जीवः तस्यैव प्रतिशरीरमहमित्यादिबुद्धिः स्वप्नशरीरे अयं सुखी अयं दुःखीत्येव यत्र बुद्धिर्न त्वहं सुखीत्यादि तत्तु निर्जीवं यत्र त्वमित्यादि तत्सजीवं बन्धमोक्षगुरुशिष्यादिव्यवस्थायाः स्वप्नवद्यावदविद्यमुपपत्तेरिति द्वयोरर्थः ॥२१॥ ॥ २२ ॥ प्रतीतिविरोधं परिहरति—“ ब्रह्मण इति ” । न हि.



DR. RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

ब्रह्मणो नित्यमुक्तत्वेऽप्यविरोधः प्रतीतयोः।
मुक्तेश्च स्वस्वरूपत्वाद्बन्धस्याविद्यकत्वतः ॥ २३ ॥
एकस्मिन्नपि चैतन्ये बुद्धिभेदादयं भ्रमः।
बद्धो मुक्तः सुखी दुःखी त्वमहञ्चायमित्यपि ॥ २४ ॥
अद्वैतैकपरत्वान्न श्रुतीनां द्वैतबोधने।
तात्पर्यं प्रत्युताद्वैतमात्रैकपरता प्रमा ॥ २५ ॥
अ(१)नादिमायया सुप्तो यदा जीवः प्रबुध्यते।
इत्यादिश्रुतिरेकत्वप्रतिपादनतत्परा ॥ २६ ॥

---

मृगतृष्णाकल्पितोदकेन स्वभावशुष्कमरुभूमिरार्द्रा भवतीत्यर्थः ॥ ॥ २३ ॥ व्यवस्थामाह—" एकस्मिन्निति " ॥ २४ ॥

ननु श्रुतिषु '(२)अविद्यायामन्तरे वर्तमाना' इत्यादावविद्या 'रमणीय(३)चरणा' इत्यादौ कर्मबन्धः 'सति स(४)म्पद्य न विदुरि'त्यादौ सुषुप्तिः 'वेदा(५)न्तविज्ञानसुनिश्चितार्था' इत्यादौ तत्वज्ञानं 'परा(६)मृतात्परि मुच्यन्ति सर्वे' इत्यादौ मुक्तिश्च चेतनधर्मः कथमनेकेषूच्यते इत्याशङ्क्य 'नादिमायया सुप्तो जीव' इत्यादिश्रुतिस्थैकवचनप्राप्तैकत्वविरोधेनोदाहृतश्रुतीनामनेकत्वपरत्वाभावात्सर्वजनीनभ्रमसिद्धतदनुवादेनाऽविरोधात्प्रत्यक्परात्कत्वमहमित्यादिव्यवहारप्रयोजकान्तःकरणाभेदाध्यासबलाद् बहुत्वस्य प्राप्तत्वेन पूर्वोत्तरवाक्योदाहृतश्रुत्यादीनां तत्परत्वादित्यभिप्रेत्याह—" अद्वैतेत्यादि " द्वाभ्यां ॥ २५ ॥ ॥ २६ ॥ नन्वा'चार्यवान्पुरुषो वेदेति' श्रुतेरुपदेशं विना जीवस्य तत्त्वं-

(१) माण्डूक्यका० १। १६।
(२) मुण्डके २। ८।
(३) छा० ५। १०। ७।
(४) छा० ८। ३। २।
(५) मुण्डके ३। ५। ६।
(६) मुण्डके ३। ५। ६।

RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

कल्पितत्वेऽपि शास्त्रस्यास्योपदेष्टुर्गुरोरपि ।
स्वाप्नमन्त्रादिवत्सिद्धेत्तत्वज्ञानं स्वरूपगम् ॥ २७ ॥
अबाधितास्पदत्वेन शास्त्रप्रामाण्यमिष्यते ।
न तत्र सत्यतापेक्षा स्वाप्नमन्त्रोपदेष्टृवत् ॥ २८ ॥

---

ज्ञानमनुपपन्नं उपदेष्टव्यादन्यस्य चैतन्यस्याभावाच्च नोपदेशो युज्यत इत्याशङ्क्याह—“कल्पितत्वेऽपीति” । ननूपदेष्टृत्वं न कल्पनमात्रस्य किं तु तत्त्वविस्त्वेन कल्पितस्य तथा चोपदेशात्प्राक्तत्वज्ञानं तदैव मोक्षापत्तिरुपदेशवैयर्थ्यं च, न चैवं स्वप्नेऽपि तुल्यं तदा हि शब्दविशेषवक्तृत्वेनैव गुरुकल्पना न तूपदेशसाध्यज्ञानविषयविशेषवित्त्वेनेति विशेषादिति चेन्न । अत्रापि तद्वदेव वाक्यविशेषवक्तृत्वेनैव कल्पनसम्भवात् । ननु तर्हि ‘यदेव(१)भगवान् वेद तदेव मे ब्रूही’त्यादिश्रुतिः ‘उ(२)पदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिन’इत्यादिस्मृतिश्चायुक्ता स्यादिति चेन्न । सामान्यतो मोक्षोपयोगिज्ञानविषयविशेषाज्ञाततत्त्ववित्त्वेन तत्वमस्यादिवाक्यवक्तृत्वेन वा कल्पनस्योपदेष्टृत्वसम्भवेनोदाहृतवाक्याविरोधात् अन्यथा तवापि मते तत्त्ववित्त्वेन प्रमित एवाचार्य्यत्वेनानुसरणीय इति प्रथमत एव तत्वज्ञाने तत्कालमोक्षापत्युपदेशवैयर्थ्यादिकं स्यात् तथा च स्वप्नगुरुवत्कल्पितत्वेन गुरोरपर्य्यनुयोज्यत्वात् । न च तत्त्वज्ञानहेतुत्वेन वेदस्य मीमांस्यत्ववद् गुरोरपि पर्य्यनुयोज्यत्वमिति वाच्यं । तर्केण वेद इव तत्तद्रूपकल्पनया गुरावपि तत्परिहारात् तस्मात्स्वप्नवद् गुरोरपि कल्पितत्वात्स्वप्नवत्सर्वव्यवस्थोपपत्तिरबाधितविषयत्वेन शास्त्रप्रामाण्योपपत्तिश्चेति सर्वमनवद्यमिति द्वयोस्तात्पर्यार्थः ॥ २७ ॥ २८ ॥

॥ एकजीववादे श्रुतीनां सामञ्जस्योपपादनम् ॥

---

(१) छ० ४ । ९ ।    (२) भगवद्गीता ४ अ० श्लो० ३४ ।

RUPNATHJI(DR.RUPAK NATH)
www.astrology-tantra.com

कल्पकोऽनिश्चिताद्वैतो बद्धोऽहमिति निश्चयात्।
य एकः सर्वदेहेषु स मोक्षार्थप्रवृत्तिभाक् ॥ २९ ॥
अज्ञानाच्छुद्धचिद्धातोः संसारित्वादिसम्भवात्
तन्निरासाय शास्त्रोक्तसाधनेऽस्याधिकारिता ॥ ३० ॥
संसारस्योपलम्भेन न पूर्वं तत्त्वधीरपि।

---

ननु कल्पको न निश्चिताद्वैतः शास्त्रप्रणयनवैयर्थ्यात् नाप्यनिश्चिताद्वैत शास्त्रस्य प्रमामूलकत्वाभावप्रसङ्गादिति चेन्नेत्याह— "कल्पक इति"। प्रमामूलकत्वाभावेऽप्यबाधितविषयत्वेन शास्त्रप्रामाण्योपपत्तेरन्त्यपक्षाभ्युपगमात्। न चामुकः स इत्यनिश्चये बह्वायाससाध्यमोक्षार्थप्रवृत्त्ययोग इति वाच्यं, प्रतिशरीरमहमहमिकया बद्धोऽहमिति निश्चयस्य स्वानुभवसाक्षिकत्वेन प्रवृत्तिसम्भवात् एकेनैव जीवेन चैत्रमैत्रादिशरीराणां सजीवत्वसम्भवस्य प्रागेवोक्तत्वादिति तात्पर्यम् ॥ २९ ॥ किं च चैत्रमैत्रादिषु कोऽसाविति प्रश्नस्य किं देहाद्येकीकृतं चैतन्यं विषयः किं वा निरस्तसमस्तभेदं, नाद्य, तस्य कल्पितत्वेनाकल्पकत्वात् न द्वितीयः तस्यैकत्वेन तदनिश्चयासिद्धेः शुद्धचित एकत्वेन वस्तुनाऽसंसारित्वेऽप्यावरणविक्षेपशक्तिद्वयशालिस्वाश्रिताविद्यावशात्संसारित्वकल्पकत्वमोक्षार्थित्वाद्युपपत्तिरित्यभिप्रेत्याह— "अज्ञानादिति" ॥ ३० ॥

नन्वनादौ संसारे कस्य चित्तत्वज्ञानं मुक्तिश्चाभून्न वा, आद्ये इदानीं संसारोपलब्धिर्न स्यात् जीवस्यैकत्वात् अन्ते सम्प्रदायासम्भवेन तत्वज्ञानासम्भव इति चेन्नेत्याह— "संसारस्येति"। एतदुक्तं भवति न ह्यसांप्रदायिकत्वं तत्वज्ञानोत्पत्तिविरोधि अपूर्वजातीयानुत्पत्तिप्रसङ्गात् किं तु कारणासत्त्वं तच्चास्ति इदानीमुप-

DR. RUPAK NATH JI (DR. RUPAK NATH
www.astrology-tantra.com

शास्त्रप्रामाण्यदार्ढ्येन प्रवृत्तिरपि सम्भवेत् ॥ ३१ ॥
तत्वज्ञानप्रवृत्त्यर्थं वामदेवादितद्विदां ।
मुक्तिकीर्तनमेतेन न जीवानेकता भवेत् ॥ ३२ ॥
स्वप्नवत् सर्वभेदस्य प्रातिभासिकभावतः ।

---

देष्ट्रादिकारणस्य कल्पनासुदृढस्य सत्त्वात् जीवभेदस्य प्रमाणसिद्धत्वे संसारोपलम्भ एवातःपूर्वं तत्त्वज्ञानानुदये प्रमाणम् । न च तत्त्वविस्त्वेन श्रुत्यादिसिद्धानां शुकवामदेवादीनां मुक्तिर्नाभून्मम तु भविष्यतीति कथं श्रद्दध्यादिति वाच्यं शास्त्रप्रामाण्यदार्ढ्यादिति गृहाण अन्यथा तेषां महानुभावानां मुक्तत्वेऽपि मम भविष्यति न वेति शङ्कापिशाच्या प्रवृत्तिप्रनिवन्धः स्यादिति ॥ ३१ ॥ 'तद्धै(६)तत्पश्यन्नृषिर्वामदेवः प्रतिपेदे' इत्यादिश्रुतिषु मुक्तत्वकीर्तनमपि तेषां सिद्धानां मुमुक्षुप्रवृत्तिसिद्धये न जीवभेदे प्रमाणमित्याह— "तत्त्वज्ञानेति" । तथा च न काऽप्यनुपपत्तिरिति भावः ॥३२॥

ननु तर्हि श्रुतिप्रामाण्यबलादेव तत्सिद्धो जीवभेदः. पूर्वमपि केषांचिन्मोक्षश्चाभ्युपेयतां श्रूयते हि 'तद्यो(१)यो देवानां प्रत्यबुध्यत स एव तदभवत्तथर्षीणां तथा मनुष्याणां' "अ(२)जो ह्येको जुषमाणोऽनुशेते जहात्येनां भुक्तभोगामजोऽन्यः' 'नित्यो नित्यानां चेतनश्चेतनाना' मित्यादि, स्मर्यते च 'बह(४)वो ज्ञानतपसा पूता मद्भावमागताः'। 'इदं ज्ञानमु(५)पाश्रित्य मम साधर्म्यमागता' इत्यादि तथा च कथं जीवैक्यमित्याशङ्क्योक्तवाक्यानां सार्वलौकिभ्रमसिद्धभेदानुवादकत्वेन तत्परत्वाभावाज्जीवैक्यबोधकवाक्यानां च मानान्तराप्राप्तस्वार्थपरत्वात्स्वप्नन्यायेन भेदस्य कल्पितत्त्वोपपत्तेश्च ज्ञानस्तुतिपराणि वाक्यानि नात्मभेदं प्रमातुं शक्नुवन्ति तात्पर्यवद्वाक्यविरोधेनातात्पर्यवद्वाक्यानां गुणवादत्त्वोपपत्तेश्चेत्यभिप्रेत्याह—" स्वप्नवदिति " ।

---

(१) बृ० १ । ४ । १० । (२) श्वे० ४ । ५ ।
(४) भगवद्गीता ४ अ० श्लो० १० । (५) भ० १४ अ० श्लो० २ ।
(६) बृ० १ । ४ । १० ।

DR. RUPAK NATH (DR. RUPNATHJI)
www.astrology-tantra.com

बद्धमुक्तादिनिष्ठस्य सम्भवात्स्याद्व्यवस्थितिः ॥ ३३ ॥
अनादिभावरूपैकचैतन्यविषयाश्रया ।
तत्त्वज्ञाननिवर्त्यात्रास्त्वविद्या तत्त्वविन्मता ॥ ३४ ॥
पूर्वस्मिन्नोत्तरज्ञाननिवर्त्येऽतिप्रसञ्जनम् ।
न ज्ञानप्रागभावे वाऽनादिभावपदद्वयात् ॥ ३५ ॥
अज्ञानभ्रमयोर्भाववैलक्षण्येऽपि युक्तितः ।

---

एकजीववादे नानाशङ्कापङ्कप्रक्षालनं स्वप्नदृष्टान्तसलिलधारयैवास्तीति भाव ॥ ३३ ॥

॥ एकजीववादे सर्वकल्पनोपपत्तिः ॥

केयमविद्येत्यपेक्षायामाह—" अनादीति " । रूप्योपादानाज्ञानमप्यनादिचैतन्याश्रितत्वादनाद्येव उदीच्यं शुक्त्यादिकं तु तदवच्छेदकमिति न तत्राव्याप्तिः भावत्वं चात्राभावविलक्षणत्वमात्रं विवक्षितम् अत आरोपिताभावोपादानाज्ञानेऽप्यभावविलक्षणत्वस्वीकारान्नाव्याप्तिरिति । न चाविद्याचैतन्यसम्बन्धेऽतिव्याप्तिस्तस्याप्यविद्यात्मकत्वाज्ज्ञाननिवर्त्यत्वे नातिव्याप्तिरिति, तात्पर्यार्थः ॥ ३४ ॥

अनादिभावपदयोः सार्थक्यमाह—" पूर्वस्मिन्निति " । अनादिपदस्योत्तरज्ञाननिवर्त्यपूर्वज्ञाने भावपदस्य ज्ञानप्रागभावे ज्ञानान्यकार्यप्रागभावे चातिव्याप्तिवारकत्वेन सार्थकत्वादित्यर्थः ॥३५॥
ननु भ्रम भावविलक्षणाज्ञानोपादानत्वं न घटते भ्रमस्य भावविलक्षणत्वे उपादेयत्वायोगात् भावत्वे च भावोपादानकत्वनियमादित्याशङ्क्य समाधत्ते—" अज्ञानेति " त्रिभिः । एतदुक्तं भवति न हि भावत्वमुपादानत्वे उपादेयत्वे वा प्रयोजकं आत्मनि तददर्शनात् ध्वंसत्व-

www.astrology-tantra.com
RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )

भवेद् द्वयो रुपादानोपादेयत्वं विदां मतं ॥ ३६ ॥
अन्वितं कारणत्त्वं स्यादुपादानत्वसाधकं ।
सादित्त्वं साधकं तद्वदुपादेयत्व इष्यते ॥ ३७ ॥
नोभयत्राऽपि नियतं भावत्वमिति निर्णयः ।
ध्वंसेऽपि चेत्तदापत्तिः किन्नश्छिन्नमितो भवेत् ॥ ३८ ॥
साक्षाज्ज्ञानानिवर्त्यत्वं ज्ञानत्वेनास्तु लक्षणं ।
न तत्राऽसम्भवोऽव्याप्तिरतिव्याप्तिर्न वा भवेत् ॥ ३९ ॥
तत्राज्ञानेऽहमज्ञोऽस्मि मामन्यं च न वेद्म्यहं ।
सौषुप्तमपिचाध्यक्षं नाहङ्क्रियाद्विवादिषं ॥ ४० ॥

---

न्वयिकारणत्वमुपादानत्वे तन्त्रं सादित्वमुपादेयत्वे तदुभयं च न भावत्वनियत अत उपादानोपादेयभावोऽपि न भावत्वनियतः न चैवं ध्वंसस्याऽप्युपादेयत्वापत्तिः इष्टापत्ते. अतः सद्विलक्षणयोरज्ञानभ्रमयोर्युक्त उपादानोपादेयभाव इति ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ लक्षणान्तरमाह—" साक्षादिति " । नन्वसम्भवः कल्पितत्त्वेन दोषजन्यधीमात्रशरीरस्याज्ञानस्य ज्ञानानिवर्त्यस्याभावविलक्षणस्य च रूप्यवदनादित्वायोगादिति—" तत्राह नेति " । कल्पितत्वमात्रं हि न दोषजन्यधीमात्रशरीरत्वे सादित्त्वे वा तन्त्रं किं तु प्रतिभासकल्पकसमानकालीनकल्पकवत्त्वं सादिकल्पकवत्त्वं विद्याऽनिवृत्यप्रयुक्तनिवृत्तिप्रतियोगित्त्वं प्रागभावप्रतियोगित्त्वं वा तन्त्रं न च तत्प्रकृतेऽस्ति तथा च नासम्भवादिदूषणमित्यर्थः ॥ ३९ ॥

॥ अविद्या लक्षणोपपादनम् ॥

तत्र चाज्ञाने त्रिविधमनुभवं प्रमाणयति—" तत्रेति " ॥ ४० ॥

DR.RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

अज्ञानानाश्रयत्वेऽप्यहमर्थस्याज्ञताप्रथा ।
सास्त्यज्ञानाश्रयीभूतचितोऽन्तःकरणैक्यतः ॥ ४१ ॥
सुखादौ शुक्तिरूप्यादौ न जानामीत्यसम्भवः ।
नवेद्मीत्यन्यसौख्यादौ प्रमात्रज्ञानतो भवेत् ॥ ४२ ॥
मयि ज्ञानं न चास्तीति भावरूपैकगोचरः ।
सामान्याभावभानस्य व्याहतत्वेन युक्तितः ॥ ४३ ॥
सर्वत्रानुभवे भावरूपमज्ञानमेव हि ।
निर्णीतं तार्किकज्ञानाभावखण्डनयुक्तिभिः ॥ ४४ ॥
न(१)सुषुप्तिगाविज्ञानं नाज्ञासिषमिति स्मृतिः ।

---

नन्वहमर्थस्याज्ञानानाश्रयत्वेन कथमयं प्रत्ययो भावरूपाज्ञानपक्ष उपपद्यते इत्यतआह—"अज्ञानेति" ॥ ४१ ॥ ननु साक्षिवेद्ये सुखदुःखाज्ञानादौ प्रातिभासिके च भावरूपाज्ञानाभावेन तत्र न जानामीति प्रतीतिः कथमुपपद्यते इति नेत्याह—" सुखादाविति " ॥ ४२ ॥ ननु भावरूपाज्ञानविषयत्वेनाभिमतस्याहमज्ञ इति प्रत्ययस्य मयि ज्ञानं नास्तीति ज्ञानाभावविषयात् प्रत्ययादघटं भूतलमिति प्रत्ययस्य घटो नास्तीति प्रत्ययादिव विशेषणविशेष्यभावव्यत्यासं विना इच्छाद्यभावज्ञानयोरिव विषयभेदाप्रतीतिरिति तत्राह—" मयीति " । धर्मिप्रतियोगिज्ञानाज्ञानाभ्यां ज्ञानसामान्याभावज्ञानस्य व्याहतत्वेन मयि ज्ञानं नास्तीत्यस्यापि भावरूपाज्ञानविषयत्वेन विषयभेदाप्रतीतेर्युक्तत्वादित्यर्थ ॥४३॥ फलितमाह—"सर्वत्रेति" ॥४४॥

सौषुप्तानुभवोऽपि भावरूपाज्ञानविषय इत्यत्र वार्त्तिकवचनमुदाह-

(१) बृ० १ अ० ४ बृा० वा० श्लो० ३०० ।

DR.RUPAK NATHJI (DR.RUPAK NATH
www.astrology-tantra.com

कालाद्यव्यवधानत्वान्न ह्यात्मस्थमतीतभाक् ॥ ४५ ॥
न(१)भूतकालस्पृक्प्रत्यङ् चागाऽऽमिस्पृगीक्ष्यते।
स्वार्थदेशः परोऽर्थोऽर्थो विकल्पस्तेन स स्मृतः ॥ ४६॥
न(२)चेदनुभवव्याप्तिः सुषुप्तस्याभ्युपेयते।
नावेदिषं सुषुप्तेऽहमिति धीः किंबलाद्भवेत् ॥ ४७ ॥
साक्ष्यज्ञानसुखाकारास्तिस्रोऽप्यज्ञानवृत्तयः ।
सुप्त्याख्या वृत्तिरेकैवाप्यस्तु तत्र न वा क्षतिः ॥४८॥
अज्ञाने भावरूपेऽस्मिन्ननुमानं प्रमावहं ।

---

रति—" नेति " । कार्योपाधिविनाशसंस्कृतमज्ञानमात्रमेव प्रलयोपमं सुषुप्तिरित्यभिप्रायः ॥ ४५ ॥ अभावरूपाज्ञानखण्डने एव वार्तिकवचनद्वयं पुनरुदाहरति—" न भूतेति "। तमोगुणात्मकावरणमात्रालम्बना काचिद्वृत्तिः सुषुप्तिरित्यभिप्रेत्य तदुपरक्तचैतन्यस्य तन्नाशेनैव नाशात्तत्कालीनाज्ञानानुभवजनितसंस्कारवशेन न किञ्चिदवेदिषमिति स्मरणमभ्युपेतमिति वार्त्तिकविवरणयोरविरोधः तदेवोक्तं वार्तिककारैरुषस्तब्राह्मणे 'न चेदिति' पद्यं ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ सुषुप्तौ वृत्तित्रयमेकैव वाऽविद्यावृत्तिरस्तु न तत्राग्रह इत्याह—" साक्षीति " । निर्विकल्पकस्यापि स्मरणजनकत्वं अहङ्कारोपरागकालीनत्वाभावेन तत्तानुल्लेख इति भावः ॥ ४८ ॥ तत्र विवरणोक्तमनुमानं प्रमाणमित्याह—" अज्ञान इति " । विवादपदं प्रमाणज्ञानं स्वप्रागभावव्यतिरिक्तस्वविषयावरणस्वनि-

---

(१) बृ० १ अ० ४ ब्रा० वा० श्लो० २०१।

RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

उक्तं विवरणाचार्यैस्तथान्यैर्बहुधेरितम् ॥ ४९ ॥
किं च ज्ञानविरोधित्वं सर्वज्ञानविरोधिगम् ।
अनादिभाववतातुल्याधारकं दृश्यभाववत् ॥ ५० ॥
अनाद्यभावभिन्नत्वं सर्वज्ञानविरोधिगम् ।
अनाद्यभावभिन्नैकनिष्ठत्वादभिधेयवत् ॥ ५१ ॥
प्रमाणं श्रुतयोऽप्यत्र न विन्दन्त्य(१)नृतेन हि ।

---

वर्त्यस्वदेशगतवस्त्वन्तरपूर्वकं अप्रकाशितार्थप्रकाशकत्वात् अन्धकारे प्रथमोत्पन्नप्रदीपप्रभावदिति अत्र प्रमाणपदं प्रमाणवृत्तेरेव पक्षत्वेन सुखादिप्रमायां साक्षिचैतन्यरूपायामज्ञानानिवर्तिकायां बाधवारणाय धर्म्यंशप्रमाणवृत्तेरिदमित्याकाराया अज्ञानानिवर्तिकाया पक्षबहिर्भावाय विवादपदमिति विशेषणं विशेषाकारा प्रमाणवृत्तिरिति फलितोऽर्थः ॥ ४९ ॥

तथान्यैरित्युक्तं विवृणोति—" किंचेति "। ज्ञानविरोधित्वं अनादिभाववत्त्वसमानाधिकरणं सकलज्ञानविरोधिवृत्तित्वात् दृश्यत्ववत्, यद्वा अनाद्यभावविलक्षणत्वं ज्ञानविरोधिवृत्ति अनाद्यभावविलक्षणमात्रवृत्तित्वात् अभिधेयत्ववदिति एवमभावविलक्षणाज्ञानेऽनुमानान्यूहनीयानि ॥ ५० ॥ ५१ ॥ एवं श्रुतयश्च भावरूपाज्ञाने प्रमाणं तत्र छान्दोग्येऽष्टमाध्याये 'तद्यथा हिरण्यनिधिं निहितमक्षेत्रज्ञा उपर्युपरि संचरन्तो न विन्देयुरेवमेवेमाः सर्वाः प्रजा अहरहर्गच्छन्त्य एतं ब्रह्मलोकं न विन्दन्त्यनृतेन हि प्रत्यूढा' इति

---

(१) छा० ८। ३।

DR.RUPAK NATH (DR.RUPNATHJI)
www.astrology-tantra.com

प्रत्यूढा इति छान्दोग्ये नीहारेणा(१)वृता जनाः ॥५१॥
न(२)तं विदाथ इत्याद्या अन्याः सन्ति प्रमापिकाः ।
भावत्वेऽस्य तथा ज्ञाननिवर्त्यत्वे श्रुतिर्भवेत् ॥ ५२ ॥
विश्वमायानिवृत्तिः स्याद्भूयश्चान्ते इति प्रमा ।
अज्ञानेऽनन्तशक्तित्वान्मायाशब्दोपपत्तितः ॥ ५४ ॥
जीवस्याप्यनवच्छिन्नब्रह्मानन्दाप्रकाशनात् ।
साऽन्यथानुपपतिश्च मानमज्ञान इष्यते ॥ ५५ ॥
जीवस्य ब्रह्मरूपत्त्वादानन्दैकस्वरूपता ।
तदभानान्यथापत्तिः कथं स्यात्तामिरं विना ॥ ५६ ॥

---

श्रुतिर्ब्रह्मज्ञानप्रतिबन्धकत्वेनानृतं ब्रुवाणा तादृगज्ञाने प्रमाणं 'न तं विदाथ य इमा जजानेत्याद्यारण्यकं च, अन्या अप्येवमेवेत्यर्थः ॥५२॥ ॥ ५३ ॥ ज्ञाननिवर्त्यत्वे 'भूयश्चान्ते विश्वमायानिवृत्ति'रित्यादिश्रुतिर्मानमित्याह—"विश्वेत्यर्धेन" । अज्ञानस्यैव चानिर्वचनीयविचित्रशक्तियोगाच्च विचित्रशक्तिमति मायाशब्दप्रयोगानुपपत्तिरित्याह—"अज्ञान इत्यर्द्धेन" । क्वचिन्मणिमन्त्रादौ तत्प्रयोगस्तूपचारादिति द्रष्टव्यं ॥ ५४ ॥ जीवस्यानवच्छिन्नब्रह्मानन्दाप्रकाशान्यथानुपपत्तिश्च तत्र प्रमाणमित्याह—"जीवस्येति" ॥५५॥

तदेव द्रढयति—"जीवस्येति" ॥ ५६ ॥

॥ अविद्यायां प्रमाणोपन्यासः ॥

सा चाविद्या साक्षिवेद्या न तु शुद्धचित्प्रकाश्या साक्षी च अवि-

---

(१) तै संहिता ४ । ६ । २ । (२) तै० सं० ४ । ६ । २ ।

RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

साऽविद्या साक्षिचिद्वेद्या साक्षी तद्वृत्तिगो मतः।
शुद्धचैतन्यभास्यत्वे तस्यावस्तुत्वमापतेत् ॥ ५७ ॥
भास्या स्वावृतचिद्धाम्नाऽविद्या राहुवदिष्यते।
आश्रयो विषयश्चास्याः शुद्धं ब्रह्मैव सम्मतं ॥ ५८ ॥
उपाधेः प्रतिबिम्बैकपक्षपातितया ततः।
संसारो जीवगो नेशे बिम्बभूते चिदद्वये ॥ ५९ ॥

---

द्यावृत्तिप्रतिबिम्बितचैतन्यं तेन निर्दोषेण तत्प्रकाश्यत्वेनाज्ञानस्य पारमार्थिकत्वापत्तिर्मोक्षेपि तत्प्रकाशापत्तिश्च तदानीमविद्याया निवृत्तत्वात्तत्प्रकाशाभावः प्रतीतिमात्रशरीरस्य प्रतीत्यनुवृत्तौ निवृत्त्ययोगादित्यादिदोषानवकाश इत्यभिप्रेत्याह—“सेति”॥ ५७ ॥ अतएवोच्यते राहुवत्स्वावृतचैतन्यप्रकाश्याऽविद्येत्याह— “भास्येति”(१)।

॥ अविद्याप्रतीत्युपपत्तिः ॥

अविद्याया आश्रयस्तु शुद्धं ब्रह्मैव विषयश्चेत्याह—“ आश्रयइति” ॥ ५८ ॥ दर्पणस्य मुखमात्रसम्बन्धेऽपि प्रतिमुखे मालिन्यवत्प्रतिबिम्बे जीवे संसारः न बिम्बे ब्रह्मणि, उपाधेः प्रतिबिम्बपक्षपातित्वादित्याह—“ उपाधेरिति ” ॥ ५९ ॥ ननु कथं चैतन्यमज्ञाना-

---

(१) नचैव कदाचिदविद्याया अप्रतीत्यापत्ति इष्टापत्ते समाधौ तथाऽभ्युपगमात्। न चाऽविद्यावृत्तेर्दोषजन्यत्वादत्र कथमविद्यावृत्ति अविद्याया एव दोषत्वात् न च वृत्तेरपि वृत्त्यन्तरप्रतिबिम्बितचित्प्रतिभास्यत्वेऽनवस्था, स्वस्या एव स्वभानोपाधित्वात् ननु प्रमाणागम्यायामविद्यया प्रमाणोपन्यासवैयर्थ्यं न च प्रमाणैरसद्व्यावृत्तिमात्र बोध्यत इति वाच्यम्। अज्ञानमद्रष्टृता तत्राऽसद्व्यावृत्तिबोधेऽसामर्थ्यादिति चेन्न प्रमाणोपनीतासद्व्यावृत्तिविशिष्टाज्ञानं हि साक्षिणा गृह्यते तथा चासद्व्यावृत्त्युपनयने प्रमाणाना चरितार्थत्वान्न काऽप्यनुपपत्तिरिति भाव.।

DR. RUPAK NATH
www.astrology-tantra.com

न चिन्मात्रं विरोध्यस्याः साधकत्त्वेन सम्भवेत् ।
तदेव बुध्धिवृत्तिस्थं विरोधि श्रुतिमानतः ॥ ६० ॥
चितोऽपि वृत्त्यवच्छेदादज्ञानेन विरोधिता ।
तृणादेर्भासकस्यापि दाहकत्त्वं यथा रवेः ॥ ६१ ॥
चितोऽज्ञानाश्रयत्वेपि प्रमाणं श्रुतिरिष्यते ।
मायां(१)तु प्रकृतिं विद्यान्मायिनं तु महेश्वरं ॥ ६२ ॥
अज्ञानानाश्रयत्वेऽपि जीवोऽज्ञ इति सम्भवेत् ।
अज्ञानकार्ययोगित्वाद्व्यपदेशोऽस्य नो परे ॥ ६३ ॥

---

श्रयस्तस्य प्रकाशस्वरूपत्त्वात् तथा च तमःप्रकाशवद्विरुद्धस्वभावत्वादिति चेन्नेत्याह— " नेति " । अज्ञानविरोधि ज्ञानं हि न चैतन्यमात्रं किं तु वृत्तिप्रतिबिम्बितं तच्च नाविद्याश्रयः यच्चाविद्याश्रयस्तच्च न विरोधि इत्यर्थः ॥ ६० ॥

ननु तर्हि शुद्धचितोऽज्ञानविरोधित्वाभावे घटादिवदप्रकाशत्वापत्तिरित्यत आह— " चित इति " । वृत्त्यवच्छेदेन तस्या एव अज्ञानविरोधित्त्वात्स्वतस्तृणतूलादिभासकस्य सौरालोकस्य सूर्यकान्तावच्छेदेन स्वभास्यतृणतूलादिदाहकत्ववत्स्वतोऽविद्यातत्कार्यभासकस्य चैतन्यस्य वृत्त्यवच्छेदेन तद्दाहकत्वमविरुद्धमित्यर्थः ॥६१॥ चिन्मात्रस्याविद्याश्रयत्वे प्रमाणमाह— " चित इति " ॥ ६२ ॥ न च 'ज्ञा(१)ऽज्ञावीशानीशौ' इति जीवाज्ञानप्रतिपादकश्रुतिविरोध इति वाच्यं, तदाश्रयत्वाभावेपि तत्कार्ययोगितया अज्ञत्वव्यपदेशोपपत्तेरित्याह— " अज्ञानेति " ॥ ६३ ॥ नन्वचाक्षुषस्य चैतन्यस्य

---

(१) श्वेताश्व० २ श्व० १०। (१) श्वेताश्व० १ श्व० ८।

DR. RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

नीरूपस्यापि रूपस्य प्रतिबिम्बो यथेष्यते।
व्योम्नोऽप्यचाक्षुषस्येव ब्रह्मणः किन्न सम्भवेत् ॥६४॥
वस्तुतस्तु श्रुतेरेव प्रतिबिम्बश्चितेर्मतः।
उपाधिबिम्बसम्बन्धानादित्वान्नास्य सादिता ॥ ६५ ॥
सर्वतः प्रसृतत्वेन चितोऽप्यव्यवधानतः।
आभिमुख्यस्य सद्भावात्प्रतिबिम्बोऽञ्जसा भवेत्॥६६॥
अवच्छेद्यांशमादाय सामानाधिकरण्यतः।
बन्धमोक्षोपपत्तिश्च युक्तिभिः श्रुतिभिस्तथा ॥ ६७ ॥

---

गन्धरसादिवत्प्रतिबिम्बतानर्हत्वात्प्रतिबिम्बत्वे जीवस्य सादित्वापाताच्चेत्याशङ्क्याह— "नीरूपस्येति"। रूपवत एव प्रतिबिम्बइत्यस्या व्याप्तेरूपादौ व्यभिचाराद्यथा भङ्ग. एवमाकाशादौ व्यभिचाराच्चाक्षुषस्यैव प्रतिबिम्ब इत्यस्या अपि व्याप्तेर्भङ्गः, वस्तुतस्तु श्रुतिबलाच्चितः प्रतिबिम्बे सिद्धे नत्रैव व्यभिचारान्नेयं व्याप्तिः तथा च रसादिव्यावृत्तं फलैकोन्नेयं प्रतिबिम्बप्रयोजकं, नापि जीवस्य सादित्वापत्तिः उपाधिबिम्बसम्बन्धानादित्वेनानादित्वोपपत्तेरिति द्वयोस्तात्पर्यार्थः ॥ ६४ ॥ ६५ ॥

चितोऽत्राभिमुख्यसम्भवादपि तत्प्रतिबिम्बसम्भव इत्याह—"सर्वत इति" ॥ ६६ ॥ बन्धमोक्षयोः सामानाधिकण्यमप्यस्तीत्याह— "अवच्छेद्यांश इति" ॥ ६७ ॥

॥ अविद्यायाश्चिन्मात्राश्रयत्वोपपत्तिः ॥

ननु शुद्धब्रह्मणश्चिन्मात्रस्याज्ञानाश्रयत्वे सार्वज्ञविरोधः न

RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

सर्वज्ञत्वं विशिष्टे स्यान्न तदज्ञानमन्तरा ।
स्वतोऽसङ्गतयाऽसङ्गश्रुतेर्नास्ति विरोधिता ॥ ६८ ॥
स्वरूपतः प्रमाणैर्वा सर्वज्ञत्वं द्विधा स्थितं ।
तच्चोभयं विनाऽविद्यासम्बन्धं नैव सिध्यति ॥ ६९ ॥
जीवाश्रिताप्यविद्या स्वीकृता वाचस्पतेर्मते ।

---

च विशिष्ट एव सार्वज्ञ्यं 'तुरीयं सर्वदृक्सदेति' शुद्धस्यैव सर्वज्ञत्वोक्तेरित्याशङ्क्य सर्वदृक्पदेन सर्वेषां दृग्भूतं चैतन्यमित्युच्यते न तु सर्वज्ञं तुरीयं तस्माद्विशिष्ट एव सार्वज्ञ्यं तच्चाविद्यां विना न सम्भवतीत्यविद्यासिद्धिरित्यभिप्रेत्याह—"सर्वज्ञत्वमिति"। 'अ(१)सङ्गो ह्ययं पुरुष' इत्यसङ्गत्वश्रुतिरपि स्वतः सङ्गाभावविषयत्वेनोपपद्यते इत्याह—"स्वतइति" ॥ ६८ ॥ सर्वज्ञो हि प्रमाणत स्वरूपज्ञप्त्या वा तत्र प्रमाणस्य भ्रान्तेश्च अविद्यामूलत्वात् असङ्गस्वरूपज्ञप्तेश्च अविद्यां विना विषयासङ्गतेरित्यत्र वृद्धसम्मतिमाह—"स्वरूपत इति" ॥ ६९ ॥

॥ सर्वज्ञस्याज्ञानाश्रयत्वोपपत्तिः ॥

मतान्तरमाह—"जीवाश्रितेति"। ननु जीवाश्रिताऽविद्या तत्प्रतिबिम्बितचैतन्यं वा तदवच्छिन्नचैतन्यं वा तत्कल्पितभेदं च जीव तथा चान्योन्याश्रय इति चेन्न किमयमन्योन्याश्रय उत्पत्तौ ज्ञप्तौ स्थितौ वा, नाद्य अनादित्वादुभयो, अज्ञानस्य चिद्भास्यत्वेपि चितः स्वप्रकाशत्वेन तद्भास्यत्त्वात्, न तृतीय. स किं परस्पराश्रितत्वेन वा परस्परसापेक्षस्थितिकत्त्वेन वा स्यात् तन्न, उभयस्याप्यसिद्धेः

---

(१) बृ० ४ । ३ । १६ ।

RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

तथैव कल्प्यते सर्वं भूतभौतिकविश्वकं ॥ ७० ॥
स्वेनैव कल्पिते देशे व्योम्नि यद्वद्घटादिकं ।
तथा जीवाश्रयाविद्यां मन्यन्ते ज्ञानकोविदाः ॥ ७१ ॥
चिन्मात्रं विषयोऽस्त्यस्याः स्वयं ज्योतिरकल्पितं ।
नान्यदज्ञानकार्यत्वादप्रसक्तप्रकाशनं ॥ ७२ ॥
स्वयम्भानार्हमावृत्त्या न भातीत्याततं सुखं ।
प्रकाशमानताऽध्यासाधिष्ठानत्वेन चेष्यते ॥ ७३ ॥

---

अज्ञानस्य चिदाश्रयत्वे चिदधीनस्थितिकत्वेऽपि चिति अविद्याश्रितत्वतदधीनस्थितिकत्वयोरभावात् । न चैवमन्योन्याधीनताक्षतिः समानकालीनयोरपि अवच्छेद्यावच्छेदकभावमात्रेण तदुपपत्तेर्घटतद्वच्छिन्नाकाशयोरिवेति तात्पर्यार्थः ॥ ७० ॥

तत्राभियुक्तसंमतिं दर्शयति—“ स्वेनेति ” ॥ ७१ ॥

॥ अज्ञानस्य जीवाश्रयत्वोपपत्तिः ॥

अविद्याया विषयोऽपि सुवच इत्याह—“चिन्मात्रमिति”। चिन्मात्रमेव विषयोऽविद्यायाः तस्याः कल्पितत्त्वेनान्योन्याश्रयादिदोषाप्रसक्तेः स्वप्रकाशत्वेन प्रसक्तप्रकाशे तस्मिन्नावरणकृत्यसम्भवाच्च, नान्यत् तस्याज्ञानकल्पितत्त्वात् अप्रसक्तप्रकाशत्वेन आवरणकृत्याभावाच्चेत्यर्थः ॥ ७२ ॥ शुद्धरूपायाश्चितः प्रकाशमानत्वेऽपि तस्या एव परिपूर्णाद्याकारेणाप्रकाशमानत्वात् तदर्थं तस्या एवावरणकल्पनात् परिपूर्णाद्याकारस्य मोक्षदशानुवृत्तत्त्वेन शुद्धचिन्मात्रत्वमित्यभिप्रेत्याह—“अद्वयेति”। आवरणमहिम्नैव परिपूर्णं ब्रह्म नास्ति न प्रकाशत इति व्यवहारः अस्ति प्रकाशत इति व्यवहारप्रतिबन्धश्च अध्यासाधिष्ठानादिना प्रकाशमानता चाविरुद्धा परिपूर्णाद्याकारेण इदानीं व्यवहाराभावेपि अपरोक्षव्यवहारयोग्यत्वानपायादिति सार्द्धतात्पर्यार्थः ॥ ७३ ॥

RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

पूर्णानन्दात्मनाऽभानेप्यपरोक्षत्वयोग्यता ।
जीवमध्यस्तभेदं प्रत्यावृतत्वाच्चितः स्वतः ॥ ७४ ॥
उभयोरप्यनादित्वान्नानन्तर्यं मिथोऽनयोः ।
तद्भेदापगमे शुद्धचैतन्यं मोक्ष इष्यते ॥ ७५ ॥
त्वदुक्तमर्थं नो वेद्मीत्येवं भातेऽपि वस्तुनि ।
अज्ञानानुभवात्साक्षी नाज्ञानेन विरुध्यते ॥ ७६ ॥

---

ननु दीपावरकघटादिवच्चैतन्यावरकाऽविद्या चैतन्यस्यान्यसंम्बन्धं प्रतिबध्नातु अन्यं प्रति चैतन्यमाच्छादयतु न तु चैतन्यं प्रत्येव चैतन्ये उक्तयोग्यत्वरूपप्रकाशविरोधिनी सा न हि दीपो घटावृतोऽपि स्वयं न प्रकाशते तम.सम्बन्धापातात् । न च कल्पितभेद जीवचैतन्यं प्रति शुद्धचैतन्यमाच्छादयतीति वाच्यं । आवरणं विना भेदकल्पनस्यैवायोगात् यो मोक्षे भावी चिन्मात्रस्यैव चिन्मात्रं प्रति प्रकाशस्तदभावस्यैवेदानीमज्ञानेन साधनीयत्वाच्चेति चेन्नेत्याह–"जीवमिति" सार्द्धेन । कल्पितभेदं जीवं प्रति शुद्धचैतन्यस्यावृतत्वात् । न च भेदकल्पनस्यावरणोत्तरकालीनत्वादिदमयुक्तमिति वाच्यम् । भेदावरणयोरुभयोरप्यनादित्वेन परस्परमानन्तर्याभावात् । यच्चोक्त मोक्षे भावी चैतन्यस्य चैतन्यं प्रति प्रकाशः तदभाव इदानीमज्ञानस्याभाव इति तन्न, मोक्षे जन्यस्य प्रकाशस्याभावात् कल्पितभेदापगमे शुद्धचैतन्यं प्रत्येव प्रकाशस्य जीवं प्रत्यपि सम्भवात् न काचिदप्यनुपपत्तिरित्यर्थः ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ यच्चोक्त प्रकाशस्वरूपे चैतन्ये कथमज्ञानं नह्यालोके तम इति तत्राह—"त्वदुक्तमिति" । तथा च सविषयाज्ञानसाधकत्वात्साक्षिरूपाविषयप्रकाशोपि नाज्ञानविरोधीति भाव ॥ ७६ ॥



DR. RUPAK NATH
www.astrology-tantra.com

प्रमाणवृत्त्युपारूढप्रकाशत्वेन चिन्मयम् ।
निवर्त्तकमविद्याया न चित्सामान्यमिष्यते ॥ ७७ ॥
अहङ्कारोऽस्त्यविद्योत्थोनात्मात्मग्रहणे लये ।

---

ननु न जानामीति ज्ञप्तिविरोधित्वस्यैवानुभवात्कथं वृत्तिविरोधित्वं त्वन्मते चैतन्यस्यैव ज्ञप्तित्वात् चैतन्याज्ञानयोरविरोधे ज्ञानत्वाज्ञानत्वायोगादिति तत्राह—“ प्रमाणेति ” । मन्मते वृत्तिप्रतिबिम्बितचैतन्यं जानामीति व्यवहारविषयः, तथा च न जानामीत्यनेन वृत्तिचितोरुभयोरप्यज्ञानविरोधित्वं विपर्यीक्रियते एवं च न चैतन्ये अज्ञानविरोधित्वं नापि वृत्तौ वृत्त्युपारूढचित ए । प्रकाशकत्वेन तथात्वमित्यर्थः । तस्मादविद्या स्वरूपत आश्रयतो विषयतश्च सुनिरूपा ततश्चाहङ्कारादिसृष्टिरिति भाव ॥ ७७ ॥

॥ अविद्याया निरूपणोपपादनम् ॥

नन्वहमर्थ आत्मैव तस्य कथमविद्यात. सृष्टिः । न च सुषुप्तौ स्वयंप्रकाशमानस्यात्मन. सम्भवेऽप्यनेवंविधस्याहमर्थस्याभाव यदि च सुप्ताबहमर्थः प्रकाशेत तर्हि स्मर्येत ह्यस्तन इवाहङ्कारः अनुभूते. स्मरणनियमाभावेऽपि स्मर्यमाणात्ममात्रत्वादिति वाच्यम । हेतौ असिद्धिस्तर्क इष्टापत्ते रेह्यद्यापि स्वप्रकाशात्मान्यत्वमहमर्थे सिद्धमस्ति आत्मान्यत्वेन स्वप्रकाशत्वसाधने तेन च तदन्यत्वसाधने अन्योन्याश्रयः न चाहमर्थस्यापरामर्शः सुखमहमस्वाप्सं न किं चिदवेदिषमिति तस्यैव परामर्शादित्याशङ्क्य निराचष्टे—“ अहमिति ” । अहङ्कारोऽविद्याकार्यत्त्वादनात्मा लये सुप्तौ आत्मग्रहणेपि अस्याहङ्कारस्याग्रहात् यतो जागरे अस्याऽस्मृतेः स्मरणाभावात् ततः सुप्तौ ग्रहणाभावः अतः—“ स्वयंज्योतिषः सकाशाद्भिन्नो नात्मायमहङ्कार ” इति योजना । अहङ्कारस्तात्रदिच्छादिविशिष्ट एव गृह्यत इत्यावयोः समं सुप्तौ च नेच्छादय इति कथं तदाऽहमर्थानु-

DR. RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

अस्याग्रहात्स्वयंज्योतिर्भिन्नोऽतो जागरेऽस्मृतेः ॥७८॥
सुप्तिकालानुभूतात्मैक्याध्यासान्निश्चयोऽहमः ।
अहमस्वाप्समित्यात्मैक्यारोपेणापि सम्भवेत् ॥ ७९ ॥
अविद्योपाधिकं सुप्तौ चैतन्यमनुभूय तत् ।

---

भवः । न चेच्छादिगुणविशिष्ट एवाहमर्थो गृह्यत इत्यत्र न न संप्रतिपत्तिरिति वाच्यं गुणिग्रहणस्य गुणग्रहणव्याप्तत्वात् अन्यथा रूपादिहीनोऽपि घटः प्रथेत न च रूपादिरहितानां तेषामसत्त्वं तत्र बीजमिति वाच्यं पूर्वनाशाग्रिमरूपानुत्पत्तिलक्षणाद्यक्षणादौ तद्भिनापि सत्त्वात् एवं च गुणाग्रहणे कथं गुणिग्रहणं तथा च निर्गुण एवात्मा गृह्यते इति स्वीकर्तव्यं अनुभवाभावे च न तस्य जागरे परामर्शः तथा चाज्ञानाश्रयत्वेन सुषुप्तावनुभूयमानादात्मनोऽहङ्कारो भिन्न. एवमेवात्मान्यत्वे सिद्धे अस्वप्रकाशत्वसाधने नान्योन्याश्रय इति तात्पर्यार्थः ॥ ७८ ॥

ननु यद्यहमर्थो न परामृश्येत तर्ह्येतावन्तं कालं सुप्तोऽहमन्यो वेति संशय स्यात् तत्त्वहमेवेति निश्चय इति चेन्नेत्याह–"सुप्तीति"। यथा पूर्वदिनानुभूतदेवदत्ताभिन्नतया अनुभूते चैत्रे सोयं नवेति न संशय. किं तु स एवेति निश्चयः तथा सुषुप्तिकालानुभूतात्मैक्याध्यासात्स एवाहमिति निश्चयो युज्यते इत्यर्थः । नन्वेतावन्तं कालमहं स्वप्नं पश्यन्नासं जाग्रदासमित्यत्रेवाहमस्वाप्समित्यत्राप्यहमंशे परामर्शानुभवात्कथं तत्रापरामर्शत्वमित्याशङ्क्य समाधत्ते—"अहमिति" । परामृश्यमानात्मैक्यारोपात्तज्ज्ञानांशे परामर्शत्वाभिमानात् । नचापरामर्शे परामर्शत्वारोपो न दृष्ट इति वाच्यं तद्भिन्ने तत्त्वेनानुभूयमाने परामर्शत्वारोपदर्शनादित्यर्थ. ॥ ७९ ॥ नन्वहमर्थवत्स्मर्त्ता सचाविद्यावच्छिन्नचैतन्यं वा अन्त.करणावच्छिन्नचैतन्यं वा, आद्ये योऽहमकार्षं सोऽहं सौप्तिकाज्ञानादि स्मरामीत्यनु-

DR. RUPAK NATH
www.astrology-tantra.com

बुद्ध्यवच्छेदतः स्मर्तृ न वैरूप्यं तयोर्भवेत् ॥ ८० ॥
स्थूलः स्यामिति वत्सुप्त्यै प्रवृत्तिरुपपद्यते ।
सुप्तौ हेत्त्वात्मना तस्य स्थितः सर्वोपपत्तितः ॥ ८१ ॥
चिन्मात्राज्जायते सर्वमहङ्कारमुखं जगत् ।

---

भवविरोध: अन्त्ये त्वहमर्थस्यैव तदनुभवितृत्वं वाच्यं स्मृतिसंस्कारानुभवानामेकाश्रयाणामेव कार्यकारणभावात् योऽहमन्वभूवं सोऽहं स्मरामीति प्रत्यभिज्ञानाच्चेत्याशङ्क्य परिहरति–"अविद्येति"। अविद्यावच्छिन्ने एवान्तःकरणावच्छेदाज्ज्ञानयोरनुभवितृस्मर्त्रोर्वैरूप्यमित्यर्थ ॥ ८० ॥

नन्वेवं सुषुप्तावहमर्थाभावे अहं निर्दुःखः स्यामितीच्छया सुषुप्त्यर्थं प्रवृत्त्ययोगादिति चेन्नेत्याह—" स्थूलः स्यामिति "। कृशोऽहंस्थूलो भवामीति वत्प्रवृत्त्युपपत्तेः न च तत्र कार्श्यादिनिष्कृष्टस्य शरीरस्यैव स्थौल्याधिकरणतया विवेकिनामुद्देश्यत्वमितिवाच्यम्। प्रकृतेऽप्यन्तःकरणादिनिष्कृष्टस्यैव तदुद्देशविषयत्वात्। ननु योऽहं सुप्तः सोऽहं जागर्मि योऽहं पूर्वेद्युरकार्षं सोऽहमद्य करोमीति प्रत्यभिज्ञानुपपत्तिः अहमर्थस्य भेदात्कृतहान्यादिदोषापत्तिरित्याशङ्क्य परिहरति—" सुप्ताविति "। तस्याहङ्कारस्याविद्यात्मना स्थितस्य सर्वव्यवहारसिद्धिरित्यर्थः ॥ ८१ ॥ अविद्योपहिताच्चैतन्यादहङ्कारादिसृष्टिरित्युक्तं पूर्वं तद्विवृणोति—" चिन्मात्रादिति "

RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

अनात्मत्वमहङ्कारे सिद्धं भ्रान्त्या समुत्थिते ॥ ८२ ॥
सुप्तौ विलयमायाति जागरादौ स जायते ।
आत्मभानेऽप्यभानात्स्यादनात्माऽसौ विनिश्चितः॥ ८३॥
भौतिकत्त्वाद्विनाशित्वाद् दृश्यत्वाच्च जडत्वतः ।
विकारत्वादनात्मत्वमहङ्कारस्य सिद्ध्यति ॥ ८४ ॥
यथा देहघटादीनामनात्मत्त्वं विनिश्चितं ।
तथैवास्याहमोऽप्यस्ति विचाराच्छ्रुतियुक्तिभिः ॥८५॥
कर्तृत्वमात्मनो नास्ति स्वभावादक्रियस्य यत् ।
कर्तृत्वादिविशिष्टाया बुद्धेरध्यासता हि तत् ॥ ८६ ॥

---

॥ ८२ ॥ तस्यानात्मत्त्वं स्फुटयति—" सुप्ताविति " त्रिभि.॥८३॥ ॥ ८४ ॥ ८५ ॥

॥ अहमर्थस्यानात्मत्त्वोपपत्ति ॥

ननु कर्तृत्वं यद्यनात्मधर्मः स्यात्कथमात्मनि भासेत न च जपाकुसुमस्थं लौहित्यं स्फटिक इवान्तःकरणगतं कर्तृत्वमात्मन्यध्यस्यते न तु स्वाभाविकं निर्विकारत्त्वश्रुतिविरोधात् सुषुप्तौ बुद्ध्यभावेऽकर्तृत्वदर्शनाच्चेति वाच्यं एवं हि रक्तं कुसुममिति वत्कदाचिन्मनः कर्त्रीति प्रत्यक्षप्रमा लोहितः स्फटिक इति वच्चैतन्यं कर्त्रीति भ्रमश्च स्यादित्याशङ्क्याह—" कर्तृत्वमिति " । कर्तृत्वविशिष्टान्तःकरणस्य चैतन्यात्मनाध्यासेन तथा प्रतीतिः कुसुमस्य स्फटिकात्मना नाध्यास इति वैषम्यादिति भावः ॥ ८६ ॥ ननु बुद्धिगतं कर्तृत्वं किमहमर्थे अहमर्थगतं वा आत्मनि अध्यस्यते आद्ये आरोपितस्याप्य-

DR.RUPNATHJI (DR.RUPAK NATH)
www.astrology-tantra.com

चिदचिद्ग्रन्थिरूपत्वाद् ह्यंशोऽहङ्कार इष्यते ।
तत्राचिदंशे बुद्धौ हि कर्तृत्वं धर्म ईक्ष्यते ॥ ८७ ॥
बुद्धेस्तु तद्विशिष्टायाश्चित्यैक्याध्यासमन्तरा ।
अहं कर्तेति भानस्यायोगेनाध्यास इष्यते ॥ ८८ ॥

---

नर्थस्यात्मन्यभावे तस्य बन्धमोक्षानधिकरणत्वापत्तिः द्वितीये अनध्यासेनैवाहं कर्तेति प्रतीत्युपपत्तौ किमध्यासेनेत्याशङ्क्याह—“ चिदचिदिति ”। अहङ्कारस्तु चिदचिद्ग्रन्थिरूपतया ह्यंशः तत्राचिदंशे बुद्धौ कर्तृत्वमस्त्वेवापि तद्विशिष्टाया बुद्धेश्चित्यैक्याध्यासं विनाऽहङ्कर्तेति प्रतीतेरयोगेनाध्यासस्यावश्यकत्वात्। एतेनारोपितकर्तृत्वस्याप्यभावे आत्मनो बन्धमोक्षानधिकरणत्वं स्यादिति निरस्तमिति द्रष्टव्यमिति भावः ॥ ८७ ॥

ननु ‘कर्त्ता(१)शास्त्रार्थवत्त्वा’दित्यधिकरणे त्वयापि सांख्यरीत्या बुद्धे कर्तृत्वे प्राप्ते जीवस्यैवेति सिद्धान्तितत्वेन विरोधः स्यादिति चेन्नेत्याह—“ बुद्धेरिति ”। बुद्धेरेव कर्तृत्वं भोक्तृत्वं चैतन्यस्येति पूर्वपक्षं कृत्वा कर्तृत्वभोक्तृत्वयोरैकाधिकरण्यनियमेन भोक्तृत्ववत्कर्तृत्वमप्यङ्गीकर्तव्यमित्युक्तं न तु बुद्धेरकर्तृत्वं आत्मनो वा स्वाभाविकं कर्तृत्वमिति ‘यथा(२)च तक्षोभयथे’त्युत्तराधिकरणे पूर्वाधिकरणोक्तस्य आत्मकर्तृत्वस्य स्वाभाविकत्वं पूर्वपक्षयित्वौपाधिकत्वस्य स्थापितत्वात् अतो न तदधिकरणविरोध इति तात्पर्यार्थः ॥ ८८ ॥ ननु कर्तृत्वाद्यनर्थरूपबन्धस्य बुद्धिगतत्वेन मोक्षस्यापि तदन्वयापत्तिः अनर्थतन्निवृत्त्योरैकाधिकरण्यनियमादिति

---

(१) ब्रह्मसूत्रे २। ३। ३३।

(२) ब्रह्मसूत्रे २। ३। ४०।

RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

अतोऽन्तःकरणाध्यासात् कर्तृत्वं भाति चिद्घने ।
तद्द्वारा बन्धमोक्षादिव्यवहारोपि सिध्यति ॥ ८९ ॥
तथा देहेन्द्रियाद्यैक्याध्यास आत्मनि युज्यते ।
द्व्यंशत्त्वेनाहमित्यस्य चिदंशे कर्तृतादिवत् ॥ ९० ॥
ब्राह्मणोऽहं मनुष्योऽहं काणोहऽमिति भासतः ।
तत्तदात्मविशिष्टैक्याध्यास आवश्यको मतः ॥९१॥
देहेन्द्रियादितद्धर्माध्यास आत्मनि चिद्घने ।
सिद्धो न तं विना कश्चिद्व्यवहारः प्रसिध्यति ॥ ९२ ॥

---

चेन्नेत्याह— "अत इति" । कर्तृत्वादेश्चेतनगतत्वेनैवानर्थत्वं शुद्धस्य भोक्तृत्वाद्यनर्थानाश्रयत्वेप्युपहितस्य शुद्धात्स्वाभाविकभेदाभावेन बन्धमोक्षसामानाधिकरण्योपपत्तेरिति सिद्धं मनस. कर्तृत्वमात्मन्यारोप्यत इति भावः ॥ ८९ ॥ नन्वहमर्थस्यानात्मत्वेऽहं ब्राह्मणोऽहं काण इत्यादि प्रत्यक्षं देहेन्द्रियादौ आत्मैक्याध्यासे प्रमाणं न स्यात् ऐक्यबुद्धावात्मनोऽविषयत्त्वादिति चेन्नेत्याह— " तथेति " । अहमित्यस्य द्व्यंशत्वेन चिदंशे कर्तृत्वादिविशिष्टान्त.करणैक्याध्यासवद् ब्राह्मणत्वकाणत्वादिविशिष्टदेहेन्द्रियाद्यैक्याध्यासेनात्मैक्याविषयत्त्वसम्भवात् तथा चात्मनि देहेन्द्रियाद्यैक्याध्यासो युज्यत एवेति न काचिदनुपपत्तिरित्यर्थः ॥९०॥९१॥

तस्मादाभीरसाधारणादहं गौर इत्यादि प्रत्ययादात्मन्यन्तःकरणैक्याध्यासाद्देहादितद्धर्माध्यासोऽपीति सिद्धमित्याह–" देहेति " ॥ ९२ ॥

आत्मन्यध्यासोपपादनम् ।

नन्वेवमविद्यायां तन्निबन्धनाध्यासे च सिद्धेऽपि न तस्या-

RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

अविद्यायां तदध्यस्ते कार्येऽध्यासेऽखिले मतं।
मानलक्षणसद्भावादनिर्वाच्यत्वमेव हि ॥ ९३ ॥
सतः सति विभिन्नत्वे भिन्नत्वेऽप्यसतः सति।
तथा सदसद्भिन्नत्वमनिर्वाच्यत्वलक्षणं ॥ ९४ ॥
सत्वासत्त्वाख्यधर्माभ्यां विचारं सहते न यत्।
तथैव सदसत्वेन तदेवास्त्वस्य लक्षणं ॥ ९५ ॥
सत्त्वावच्छिन्नभेदस्य सन्नेति प्रत्यये ध्रुवं।
सद्वैलक्षण्यमेवास्ति सिद्धान्ते हि प्रयोजकं ॥ ९६ ॥
नैकत्रोभयभिन्नत्वं व्याहतं चेति सांप्रतं।
अतात्विकत्त्वस्वीकारान्निषेधसमुच्चये ॥ ९७ ॥

---

मनिर्वाच्यत्त्वसिद्धिः लक्षणप्रमाणयोरभावादित्याशङ्क्य लक्षणप्रमाणसद्भावान्नेत्याह—"अविद्यायामिति" ॥ ९३ ॥ सद्विलक्षणत्वे सत्यसद्विलक्षणत्वे सति सदसद्विलक्षणत्वं सत्वासत्त्वाभ्यां विचारासहत्त्वे सति सदसत्त्वेन विचारासहत्त्वं वा प्रतिपन्नोपाधौ बाध्यत्त्वं वा इत्यादिलक्षणां निरवद्यत्त्वसम्भवादित्याह—" सत इति " द्वाभ्यां ॥ ९४ ॥ ९५ ॥ ननु सतोऽपि सदन्तरविलक्षणत्वात्सिद्धसाधनं स्यादिति नेत्याह—" सत्त्वेति " । न हि सति सदन्तरभेदेऽपि सन्नेति प्रतीतिरतो न सिद्धसाधनमित्यर्थः ॥ ९६ ॥ एवं च सत्त्वराहितत्त्वे सति असत्वराहितत्त्वे सति सदसत्त्वराहितत्वमपि साधु निषेधसमुच्चयस्यातात्त्विकत्वाङ्गीकारान्न व्याहतिरित्याह—" नैकत्रेति " ॥ ९७ ॥ तर्हि सदादिवैलक्षण्योक्ति· क-

www.astrology-tantra.com RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )

स्वरूपाद्दुर्निरूप्यस्य किं चिद्रूपं न वास्तवं ।
अतः सदादिभिन्नत्त्वमनिर्वाच्यत्वलक्षणम् ॥ ९८ ॥
न ह्यतात्त्विकरूपे द्वे प्रतिषेधसमुच्चये ।
सत्त्वासत्वे विरुद्ध्येते दृष्टस्तद्गोचरो विधिः ॥ ९९ ॥
उभयातात्त्विकत्त्वं नाप्येकत्रेदं विरोधभाक् ।
यथा स्यात्तात्त्विकत्वे वाऽप्युभयस्य विरोधिता ॥ ३०० ॥
वल्मीकादौ यतो दृष्टं स्थाणुत्त्वपुरुषत्वयोः ।
अतात्त्विकत्वमेकत्र नैवं तात्त्विकरूपयोः ॥ १ ॥

---

थमित्यपेक्षाया माह—“ स्वरूपादिति ” । तत्तत्प्रतियोगिदुर्निरूपतामात्रप्रकटनाय तदुक्तिरिति भावः ॥ ९८ ॥

अतात्त्विकविधिसमुच्चयापत्तिरिष्टैवेत्याह—“ नहीति ” । न ह्यतात्त्विकसत्त्वासत्त्वे निषेधसमुच्चयेऽपि विरुद्ध्येते अतात्त्विकत्वादेव भ्रान्तेर्बाधस्य सत्त्वप्रतिषेधस्याप्रतिक्षेपात् सत्त्वस्यातात्त्विकत्त्वाच्च तदुपपत्तेरित्यर्थः ॥ ९९ ॥ उभयातात्त्विकत्वादेव निषेधसमुच्चयस्यातात्त्विकत्वं न चोभयतात्त्विकत्ववत् उभयातात्त्विकत्वमप्येकत्र विरुद्धमित्याह—“ उभयेति ” । ननु निषेधसमुच्चयस्यातात्त्विकत्वं किमुभयातात्त्विकत्वाद्वा, एकैकातात्त्विकत्वाद्वा, नाद्यः उभ(१)यतात्त्विकत्त्ववदुभयातात्त्विकत्वस्यापि विरुद्धत्वात् विधिसमुच्चयस्य तात्त्विकत्वापाताच्च एकैकप्रतियोगिनात्त्विकत्वापत्तेरेव न द्वितीयोऽपि, तात्त्विकात्यन्ताभावप्रतियोगिन एवातात्त्विकत्त्वादिति चेन्नाह—“ वल्मीकादाविति ” । न च परस्परविरहरूपयोरेकत्रोभयोः तात्त्विकत्वं विरुद्धं एकत्र तन्त्वादौ घटतत्प्रागभावयोरुभयोरपि अतात्त्विकत्वदर्शनादिति भावः ॥ ३०१ ॥ सत्वा-

---

(१) मिथो विरुद्धयोरेकधर्मिणि तात्त्विकतयैवातात्त्विकतयाऽपि स्थितिर्विरुद्धेति भाव ।



RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

सत्त्वादिना विचारैकासह-त्वं द्विविधं मतम् ।
स-त्वादिसर्वकालीनाभावाधार-त्वमादिमम् ॥ २ ॥
सद्रूप-त्वाद्यभावोऽन्यो नातिव्याप्तिरताश्चिति ।
निर्विशषैकसद्रूपतया कोपोऽन्यथाश्रुतेः ॥ ३ ॥
न सत्यादिगिरा साक्षाद्वक्तुं शक्यं चिद्द्वयं ।
लक्षणाऽङ्गीकृता तस्मादनिर्वाच्यत्त्वमक्षतं ॥ ४ ॥
प्रत्यक्षमनुमानं चागमोऽर्थापत्तिरिष्यते ।
प्रमाणं तावदत्रास्ति प्रत्यक्षमविपर्ययम् ॥ ५ ॥

---

दिना विचारासहत्वं सत्वाद्यत्यन्ताभावाधिकरणत्वं, न चातिव्याप्तिर्ब्रह्मणि सत्ववत्तदत्यन्ताभावस्याप्यभावात् अन्यथा निर्विशेषत्वादिश्रुतिविरोधापत्तेरित्यभिप्रेत्याह— " सत्वेति " द्वाभ्यां। यद्वा सत्त्वादिना विचारासहत्वं सद्रूपत्वाद्यभावः सत्वरूपधर्माभावेपि यथा ब्रह्मणः सद्रूपत्वं तथोपपादितमधस्तादित्यतो न तत्रातिव्याप्तिरित्यभिप्रेत्याह—" नातिव्याप्तिरिति " ॥ २ ॥ ३ ॥

नन्वेवं सद्रात्मके ब्रह्मणि श्रौतसत्यपदादौ लाक्षणिकत्त्वं न स्यादिति तत्राह—" नेति " । सत्वधर्मविशिष्टवाचकस्य तस्य निर्द्धर्मके लक्षणाया आवश्यकत्त्वात् न हि निर्द्धर्मकस्वरूपमात्रवाचकत्वं कस्य(१)चिदपि पदस्यास्ति तस्मान्न शुक्तिरूप्यप्रपञ्चसाधारणानिर्वाच्यत्वलक्षणानुपपत्तिरित्याभिप्राय ।

॥ अनिर्वाच्यत्त्वलक्षणोपपत्तिः ॥

लक्षणमुक्त्वा प्रमाणमाह-" प्रत्यक्षमिति " । तत्र प्रत्यक्षं तावदाह—" प्रत्यक्षमिति " ॥ ५ ॥ न च मिथ्याशब्दोऽसत्पर्यायः व-

---

( १ ) यद्यपि विशिष्टवाचकस्य शुद्धेऽपि शक्तिरेव तथाऽपि विशिष्टबोधकत्वस्यौत्सर्गिकस्य बाधेन लक्षणेति व्यपदेश आकाशादिपदस्याऽपि शुद्धे शक्तिर्न सर्वसम्मतेति भाव ।

www.astrology-tantra.com RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )

अभान्मिथ्यैव रजतमित्यनिर्वाच्यगोचरं ।
न ख्यायमानरूप्यादौ नृशृङ्गसदृशं मृषा ॥ ६ ॥
विमतं सत्वशून्यत्वे सत्यसत्वविलक्षणम् ।
सत्वासत्वविनिर्मुक्तं बाध्यत्वाद्रजतं ध्रुवं ॥ ७ ॥
दोषप्रयुक्तभानत्वाद्यन्नैवं स्यान्न तत्तथा ।
यथा ब्रह्मेति नात्र स्या दप्रसिद्धविशेषणं ॥ ८ ॥
सामान्यतो ऽपि तत्सिद्धेर्नांशतः सिद्धसाधनं ।

---

क्ष्यमाणयुक्त्या नृशृङ्गादिसाधारण्यासत्वस्य ख्यायमानरूप्यादौ वक्तुमशक्यत्वात् । न चैतावन्तं कालमसदेव रजतमभादित्यनुभवविरोधः अनिर्वाच्यत्वैकदेशसत्वव्यतिरेकविषयत्वेनैवोपपत्तेरिति तात्पर्यार्थः ॥ ६ ॥ अनुमानमाह—"विमतामिति" । सत्वरहितत्वे सति असत्वरहितत्वे सति सत्वासत्वरहितं बाध्यत्वात् दोषप्रयुक्तभानत्वाद्वा यन्नैवं तन्नैवं यथा ब्रह्म, न चाप्रसिद्धविशेषणत्वं सत्वासत्वे समानाधिकरणात्यन्ताभावप्रतियोगिनी धर्मत्वाद्रूपरसवत्, सत्वमसत्वानधिकरणानिष्ठं असत्वं वा सत्वानधिकरणानिष्ठं धर्मत्वाद्रूपवायुवदिति सामान्यतस्तत्सिद्धेरिति द्वयोस्तात्पर्यार्थः ॥ ७ ॥ ८ ॥

मिथ्यात्वे यथा मिथ्यात्वसाधकदृश्यत्वादेर्न व्यभिचारस्तथाऽस्यापि वादिविशेषं प्रति एकदेशसाधनेन साध्याप्रसिद्धशङ्काऽपि, यथा हि सत्ख्यातिवादिनं प्रति असद्विलक्षणं विमतं सद्विलक्षणं बाध्यत्वात् शुक्तिरजतसंसर्गवत्, असत्ख्यातिवादिनं प्रति सद्विलक्षणं विमतमसद्विलक्षणं अपरोक्षधीविषयत्वात् घटवत्, पक्षधर्मताबलादनिर्वचनीयत्वसिद्धिरिति भावः । ननु सत्वासत्वयोः परस्परविरहरूपतया साध्यं व्याहतं स्यादिति चेन्नेत्याह— " ने "त्य- .

RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

न साध्यं व्याहतं वा स्यात्समाहिततया पुरा ॥ ९ ॥
नार्थान्तरं भवेद्बाधान्नाभाससमता तथा ।
न वा सत्प्रतिपक्षश्च ख्यातिबाधाद्यभावतः ॥ १० ॥
ख्यातिबाधान्यथासिद्ध्याऽप्यनिर्वाच्यत्वमक्षतं ।
ततोऽनुमानमप्यत्र प्रमाणमिति साधितं ॥ ११ ॥
ख्यातिबाधान्यथासिद्धिरूपार्थापत्तिरप्यमु ।
प्रमाणं साधयत्यर्थं तथैवात्र निदर्श्यते ॥ १२ ॥
रूप्यं सच्चेन्न बाध्येत न प्रतीयेत यद्यसत् ।

---

द्वैतेन । अनात्त्विकत्वेन परस्परविरहानात्मकत्वेन च समाहितत्वादित्यर्थः ॥ ९ ॥ ननु ब्रह्मवत्सत्वराहित्येऽपि सद्रूपत्वेनानिर्वाच्यत्वाभावोपपत्त्या अर्थान्तरमित्याशङ्क्य सत्वरहितस्य प्रपञ्चस्य सद्रूपत्वे मानाभावेन बाधाद्ब्रह्मणि च शून्यतापत्तिरव सद्रूपत्वे प्रमाणमित्यभिप्रेत्याह—" नार्थान्तरमिति "। ननु विमतं सदसदात्मकं बाध्यत्वात् व्यतिरेके ब्रह्मवदित्याभाससाम्यं, विमतं असत्सत्त्वानधिकरणत्वान्नृशृङ्गवदिति सत्प्रतिपक्षश्चेत्याशङ्क्य ख्यातिबाधान्यथानुपपत्तिलक्षणविपक्षबाधकतर्कस्य वक्ष्यमाणत्वेनाभाससाम्यसत्प्रतिपक्षयो रभावादित्यभिप्रेत्याह–"नाभाससमते"त्यादि॥१०॥

॥ अनिर्वाच्यत्वसाधकानुमानोपन्यासः ॥

ख्यातिबाधाद्यभावत इत्युक्तं विवृणोति—" बाधे " त्यादि ॥११॥

वक्ष्यमाणमेव दर्शयति—" ख्यातीति " ॥ १२ ॥

RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

प्रतीयतेऽतो निर्वाच्यं सदसद्भिन्नमिष्यते ॥ १३ ॥
प्रामाणिकत्वं सत्वं स्यात्तत्वावेदकता प्रमा ।
सा च शुद्धपरब्रह्मबोधकश्रुतिवाक्यगा ॥ १४ ॥
ब्रह्मणः स्वप्रकाशत्वेऽप्यज्ञानविनिवृत्तये ।
साफल्यं स्यात्प्रमाणस्य प्रवृत्तेर्न क्षतिस्ततः ॥ १५ ॥
अतत्वावेदकत्वेऽपि रजताद्यप्रमात्वके ।
बाध्यं प्रयोजकत्वं स्याद्बाधके न्यूनसत्त्वतः ॥ १६ ॥

---

अर्थापत्तिस्वरूपमाह—"रूप्यमिति" ॥ १३ ॥ सत्त्वं किं स्वरूपमित्यत आह—" प्रामाणिकत्वमिति " । तच्चापि तत्त्वावेदकत्वमेव, तत्वावेदकता शुद्धब्रह्मबोधकवेदान्तवाक्ये न तु निर्विशेषत्वादिधर्मप्रतिपादके अतो न तत्र व्यभिचार इत्यर्थः । ननु ब्रह्मणि स्वतो भासमाने चिन्मात्रे वैयर्थ्येन प्रमाणाप्रवृत्त्या प्रामाणिकत्वाबाध्यत्वयोर्व्याप्तिग्रहो न स्यात् प्रत्युत ब्रह्मभिन्न एव प्रामाणिकत्वसत्वेन तस्य बाध्यत्वेनैव सह व्याप्ति. स्यादित्याशङ्क्य ब्रह्मणः स्वप्रकाशत्वेऽपि व्यवहारप्रतिबन्धकाज्ञाननिवृत्त्यर्थं प्रमाणप्रवृत्तेः सफलत्वमित्याह—" ब्रह्मण " इति । अत एव न बाध्यत्वेन सह प्रामाणिकत्वस्य व्याप्तिः ब्रह्मणि व्यभिचाराद्विरोधाच्च न हि तत्वावेदकतया वेद्यमतत्त्वं नामेति भाव ॥ १५ ॥ ननु रूप्यादिबाधकस्य तत्त्वावेदकत्वेऽद्वैतहानि' अतत्त्वावेदकत्वे तन्निबन्धनं रूप्यादेरप्रामाणिकत्वं न स्यादिति चेन्नेत्याह—" तत्वेति " । बाधकस्यातत्वावेदकत्वेऽपि रूप्याद्यप्रामाणिकत्वे प्रयोजकतैव बाध्यान्यूनसत्ताकत्वस्यैव बाधकत्वे तन्त्रत्वादित्यर्थ' ॥ १६ ॥ यद्वा ऽबाध्यः

DR.RUPAK NATH RUPNATHJI (DR.RUPAK NATH)
www.astrology-tantra.com

अबाध्यत्वं हि वा सत्वं न चापाद्या विशिष्टता।
त्रैकालिकनिषेधस्याप्रतियोगित्वमेव तत् ॥ १७ ॥
प्रतीत्यभावेऽप्यसतोऽसन्नृशृङ्गमितीष्यते।
तत्र सर्वोपपत्तिः स्याद्विकल्पेनैव शब्दतः ॥ १८ ॥
शब्दज्ञानानुपाती स्याद्वस्तुशून्यो विकल्पकः।
विकल्पस्याऽपि ज्ञानान्यवृत्तित्वे बाधकं न हि ॥ १९ ॥
प्रवृत्तिविषयत्वस्याऽन्यथासिद्धिरपि प्रमा।

---

त्वमेव सत्वमिति पक्षान्तरमाह—"अबाध्यत्व" मिति। न च तर्ह्यापाद्यावैशिष्ट्यं अबाध्यत्वं हि त्रैकालिकनिषेधाप्रतियोगित्वं तेन च विपरीतप्रमाविषयत्वाभाव आपाद्यत इति नापाद्यावैशिष्ट्यं व्यवहारस्यापाद्यत्वेन वा नापाद्यावैशिष्ट्यमित्यर्थः ॥ १७ ॥

नन्वसत्त्वं चेन्न प्रतीयेतेत्युक्तं तदयुक्तं असन्नृशृङ्गमित्यादिवाक्यादसतोऽपि प्रतीतेः अन्यथाऽसद्वैलक्षण्यज्ञानायोग. असत्प्रतीतिनिरासायोगश्च असत्पदस्यानर्थकत्वे प्रयुक्तपदानां सम्भूयकारित्वायोगे बोधकत्वानुपपत्ति. असतोऽसत्त्वेनाप्रतीतौ असद्व्यवहारानुपपत्तिः तदुक्तं 'असद्विलक्षणज्ञप्तौ ज्ञातव्यमसदेव हि। तस्मादसत्प्रतीतिश्च कथं तेन निवार्यते' इत्याशङ्क्य परिहरति—"प्रतीत्यभाव" इति द्वाभ्यां। विकल्पस्य ज्ञानान्यवृत्तित्वे बाधकाभावात् शशविषाणमनुभवामीत्यप्रत्ययात् वस्तुशून्यता च सोपाख्यधर्मानुल्लेखित्वं अतो न कोऽपि दोषः विकल्पस्य ज्ञानत्वे तु तदन्यज्ञानविषयत्वाभाव आपाद्य. शुक्तिरूप्यादेरसत्त्वे च प्रतीतिविषयत्वं विकल्पान्यप्रतीत्यविषयत्वं वाऽनुपपन्नमित्यनिर्वाच्यत्वं सिद्धमिति भावः ॥ १८ ॥ १९ ॥ एवं प्रवृत्तिविषयत्वाऽन्यथाऽनुपपत्तिरपि तत्र प्रमाणमित्याह—"प्रवृत्तीति"। इदमंशस्यासद्रू-

RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

मानसत्त्वेन चासत्त्वे सदसत्वे भवेद्यतः ॥ २० ॥
ख्यातिबाधान्यथासिद्ध्याऽनिर्वाच्यत्वं मतं दृढं ।
बाध्यत्वमप्यनिर्वाच्ये न सत्ये नासतीष्यते ॥ २१ ॥
एवं च सत्यनिर्वाच्यभाव एव प्रयोजकः ।
प्रतियोगित्त्वमुख्येऽपि न सत्वादिविकल्पकः ॥ २२ ॥
असत्वं निःस्वरूपत्त्वं तद्भिन्नाः सस्वरूपताः ।
सस्वरूपत्वमेतस्माद्भाति निष्प्रतियोगिकं ॥ २३ ॥
नासति प्रतियोगित्वं शशशृङ्गादिवस्तुनि ।

---

ण्यात्मना प्रतीतौ सामग्रीविरहस्योपपादनादित्यर्थ. ॥ २० ॥

ख्यातिबाधान्यथाऽनुपपत्त्युपन्यास' ।

केचित्तु बाध्यत्वं सत्यसति चानुपपन्नमित्यनिर्वाच्यत्त्वमित्याहुरित्याह—" बाध्यत्त्वमिति " ॥ २१ ॥

एवं च सत्यनिर्वाच्यत्त्वमेव प्रतियोगित्वादौ प्रयोजकमिति स्थितमित्याह—" एवमिति " ॥ २२ ॥ नन्वसद्वैलक्षण्यापेक्षया लघुत्वात्तस्यैव प्रतियोगित्वादौ प्रयोजकमस्तु तथा चानिर्वाच्यत्वेऽपि प्रतियोगित्वादिकमनुपपन्नमेवेत्याशङ्क्य सत्त्वमेव यत्किञ्चित्कालावाध्यत्वरूपं तत्र प्रयोजकं न तु त्रिकालाबाध्यत्वरूप गौरवात्तथा चानिर्वाच्यत्वपक्षे नानुपपत्तिः असत्व तावन्निःस्वरूपत्वं तद्वैलक्षण्यं सस्वरूपत्वं तच्च निष्प्रतियोगिकमेव तथा च नासति प्रतियोगित्त्वप्रतिपत्तिरित्यभिप्रेत्याह—" सत्वमिति " ॥ २३ ॥ ननु शशशृङ्गं नास्तीति प्रत्यक्षत एवासति निषेधप्रतियोगित्वमनुभूयते इति चेन्नेत्याह—" नासतीति " । योग्यानुपलब्धिस्ताव-

DR.RUPAK NATH
www.astrology-tantra.com

न योग्यानुपलब्धिः स्यादसत्युक्तं तदप्यतः ॥२४॥
दुष्टोपल(१)म्भसामग्री शशशृङ्गादियोग्यता।
तस्यां नाऽनुपलम्भोऽस्ति नास्ति साऽनुपलम्भने॥२५॥
न च योग्यतया व्याप्ता शशशृङ्गाऽस्तिता क्वचित्।
यद्बलादुपलम्भस्त आपाद्येत कथं चन ॥ २६ ॥
नासदासीन्नो सदासीदित्याद्याः श्रुतयोऽखिलाः।
प्रमाणं स्युरनिर्वाच्यभाव एव विवादतः ॥ २७ ॥
नचाऽत्र सदसच्छब्दौ पञ्चभूतपरौ मतौ।

---

दभावग्राहिका योग्यता च शशश्टङ्गादीनां दोषघटिना वाच्या तस्यां नानुपलम्भअनुपलम्भेच न स्ति योग्यानुपलब्धेरसम्भव इत्यर्थ ॥ ॥२४॥ तत्र वृद्धसंमतिमाह—"दुष्टेति" ॥२५॥ ननु प्रतियोगिसत्वविरोध्यनुपलब्धिरेव तद्ग्राहिका सा प्रकृतेऽस्त्येवेत्याशङ्क्य निराचष्टे—" नचेति "। स्तम्भात्मनि योगत्वप्रसिद्ध्या पिशाच उपलम्भापादनं सम्भवति शशश्टङ्गास्तित्वं न योग्यनया व्याप्तं यद्बलात्तेन उपलम्भ आपद्येत तथा च नात्र प्रतियोगिसत्वविरोधिनी अनुपलब्धिरित्यर्थः ॥ २६ ॥

'ना(२)सदासीन्नो सदासी'दित्यादिश्रुतयोऽप्यनिर्वाच्यत्वे प्रमाणं न चात्र सदसच्छब्दौ पञ्चभूतपरौ 'न(३)सत्तन्नासदुच्यत' इत्यादौ भूते प्रयोगात् 'यदन्यद्वायोरन्तरिक्षाच्चैतत्सद्वायुरन्तरिक्षं च त्यदिति'श्रुतेश्चेति वाच्यं। प्रसिद्धपरत्वे सम्भवति अप्रसिद्धपरताया अयुक्तत्वात् न हि भूते सदसच्छब्दौ प्रसिद्धौ किन्तु पारमार्थिका-

---

(१) कुसुमाञ्जलौ ४ स्तबके। (२) तै० ब्रा० २।८।८।
(३) भगवद्गीता १३ अ० श्लो० १२।

RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

प्रसिद्धपरतां त्यक्त्वा नाप्रसिद्धगतिर्नयः ॥ २८ ॥
न भूते सदसच्छब्दौ प्रसिद्धौ वस्त्ववस्तुगौ ।
श्रुत्यन्तराऽविरोधाय सदेकं ब्रह्म चिद्घनं ॥ २९ ॥
सदासीत्तन्न चासीद्वा सदसद्भ्यां विलक्षणं ।
नासदासीदिति श्रुत्या ऽनिर्वाच्यं सिद्ध्यतीत्यतः ॥ ३० ॥
प्रमाणसम्भवादेवानिर्वाच्यख्यातिरिष्यते ।
न चाऽसदन्यथाख्यातिः प्रमाणविरहोज्झिता ॥ ३१ ॥
असदेवमभाद्रूप्यमित्येवं सद्विलक्षणं ।
विषयीकुरुते मानं नासद्बाधकसम्भवात् ॥ ३२ ॥
नानुमानमसज्ज्ञाने बाधायुक्त्या पुरोक्तया ।
तथाऽङ्गीकारतस्ते स्यात्प्रवेशः सौगते मते ॥ ३३ ॥

---

पारमार्थिकयोरेवेति सार्थयोजना ॥ २८ ॥ २९ ॥ नो सदासीदित्यत्र सच्छब्दस्य परमार्थसत्परत्वे व्यावहारिकसतो रजप्रभृतेर्निषेधस्य ततः प्राप्त्यभावात् 'आनीदवातं स्वधया तदेक'मितिवाक्यशेषाद्ब्रह्मणोऽप्यनिर्वाच्यत्वप्रसङ्गः 'तम आसीदिति' वाक्यादविद्यायामस्त्वेति चेत् नेत्याह—" श्रुत्यन्तरे " ति सार्द्धेन । सदेकं ब्रह्मैव सदासीन्न सदसद्विलक्षणमासीदित्यर्थपर्यवसानादित्यर्थः ॥ ३० ॥ तस्मादनिर्वाच्यख्यातिरेव प्रमाणसम्भवात् न त्वसदन्यथाख्यातिः प्रमाणविरहात् न चाऽसज्ज्ञाने असदेव रजतमभातीति प्रत्यक्षं मान अनन्तरोक्तबाधकेन सद्वैलक्षण्यविषयत्वादित्याह—" प्रमाणेत्यादि " युग्मेन ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

असज्ज्ञाने नानुमानं प्रमाणमित्याह—" नेति " ॥ ३३ ॥ ननु



DR. RUPAK NATH ( DR. RUPNATHJI )
www.astrology-tantra.com

न वा सदुपरागोऽत्र विशेषः सोऽप्यसन्मतः ।
ततोऽसदन्यथाख्यातिरसाध्वी दुष्टसम्मता ॥ ३४ ॥
न वाऽन्यत्र स्थितस्यैव रूप्यादेर्भानतो भवेत् ।
अन्यथाख्यातिरत्रापि सन्निकर्षाद्ययोगतः ॥ ३५ ॥
संस्कारस्मृतिदोषाणां प्रत्यासत्तित्वमत्र नो ।
रूप्यप्रत्यक्ष एतस्य संयोगः कारणं मतं ॥ ३६ ॥
ततोऽनिर्वाच्यमेवेदं सर्वं विश्वं सहेतुकं ।
तच्चानिर्वाच्यमज्ञानोपादानकमितीरितम् ॥ ३७ ॥
तत्वज्ञाननिवर्त्यत्वात्तथात्वं तस्य साधितं ।

---

बौद्धमतात्सदुपरागो विशेषः स्यादिति नेत्याह—“ नवेति ” । तथाऽप्यसत्ख्यात्यापत्तेस्तदवश्यमिति नासदन्यथाख्यातिरित्यर्थः ॥ ३४ ॥ अन्यथाख्यातिरप्यसाध्वीत्याह—“ नवेति ” । अत्यन्तासत इवान्यत्र सतोऽपि अपरोक्षप्रतीतिप्रयोजकसन्निकर्षानुपपत्तेस्तुल्यत्वादित्यर्थः ॥ ३५ ॥ संस्कारादीनां प्रत्यासत्तित्वं निराकरोति—“ संस्कारेति ” । रजतप्रत्यक्षमात्रे रजतसंयोगत्वेन कारणत्वावधारणात्संनिकर्षान्तरसत्वेऽपि तदभावे रजतप्रत्यक्षोत्पत्तेरक्रमशक्यत्वात् न तेषां प्रत्यासत्तित्वमित्यर्थ ॥ ३६ ॥ फलितमुपसंहरति—“ तत ” इत्यर्द्धेन ।

॥ असत्ख्यात्यादिनिरासः ॥

किमुपादानकं तदित्यत आह—“ तच्चेति ” । नन्वेवं रूप्यमुत्पन्नं नष्टं चेति धीप्रसङ्ग-त्रैकालिकनिषेधप्रतीतिश्च न स्यादिति तत्राह— “ तत्वज्ञानेति ” । फलबलेनात्यन्ताभावधीसाम-

DR. RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

यद्वाऽस्य न स्वरूपेण त्रैकालिकनिषेधने ॥ ३८ ॥
प्रतियोगित्वमपि तु तात्त्विकत्वेन सम्मतं ।
प्रतीतं तात्त्विकत्वं तत्प्रातीतिकमिहेष्यते ॥ ३९ ॥
लोके वा तात्त्विकत्वेन प्रसिद्धरजतस्य तत् ।
त्रैकालिकनिषेधैकप्रतियोगित्वमिष्यते ॥ ४० ॥
नेह नानेति वेदान्ते किं चनेति पदेरणात् ।
सर्वस्याऽपि निषिद्धत्वान्न प्रपञ्चान्तरोत्थितिः ॥ ४१ ॥

---

ख्या एव बलवत्त्वेन तथात्वमनिवर्त्यत्वं तत्त्वज्ञानैकनिवर्त्यत्वं प्राक्प्रसाधितमित्यर्थः ॥ ३८ ॥

पक्षान्तरेणापि तद्दर्शयति—" यद्वेति " । न च पारमार्थिकत्वस्यापि प्रतिभासमये प्रतीतत्वेन त्रैकालिकनिषेधप्रतियोगित्वं न सम्भवति रजतप्रतियोगित्वेनानुभवविरोधश्चेति वाच्यम् । प्रतीतिकालप्रतीतं पारमार्थिकत्वमपि प्रातीतिकमेवेति न तन्निषिध्यते किं तु अन्यत्र दृष्टं तदिति तेनाकारेण रजतस्यैव निषेध इति न तत्प्रतियोगित्वेऽनुभवविरोधोऽपीति भावः ॥ ३९ ॥ यद्वा लौकिकपरमार्थरजतस्यैव तत्र त्रैकालिकनिषेधः न च तर्हि नेह नानेति निषेधस्यापि तात्त्विकप्रपञ्चान्तरोरीकारापत्तिः नेह नानेति निषेधस्थले किञ्चनेति पदसंदंशात् सर्वनिषेधे प्रतीयमाननिषेधस्यावश्यकतया निषेध्यत्वेन प्रपञ्चान्तरकल्पनाया गौरवकरत्वात् प्रकृते तु सर्वत्वेन प्रतियोग्यनुल्लेखात् आपणस्थरूप्यनिषेधस्य इदम्यावश्यकत्वेनाप्रतीतनिषेधकल्पनैव युक्तेति हृदि निधायाह—" लोक " इति द्वाभ्यां ॥ ४० ॥ ४१ ॥ नन्वेवमपि रूप्यस्य कथमज्ञानमुपादानं

RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

अन्वयव्यतिरेकाभ्यां शुक्त्यज्ञानेऽस्ति हेतुता।
उपादानं तदेवास्तु नोपादानान्तरं भवेत् ॥ ४२ ॥
सर्वधीप्रत्ययानां हि स्वस्वगोचरशूरता।
प्रतीतिकाले रूप्यस्य सत्वं सिद्धमितीष्यते ॥ ४३ ॥
अध्यस्तत्त्वेऽपि द्वैरूप्यं नेदन्त्वस्य प्रसज्यते।
स्वप्रकाशतयेदन्त्वाधिष्ठानस्य चिदात्मनः ॥ ४४ ॥
इदं रूप्यमिति ज्ञानं त्र्यात्मकं नात्र दृष्यते।
स्वप्ने तु न चतूरूपं ज्ञानं शङ्क्यं कथं चन ॥ ४५ ॥

---

तदनुविद्धतया अप्रतीतेः इदमंशानुविद्धतया प्रतीतेरिदमंश एव सत्यविकाराविरोधेन मिथ्याविकारात्मना विवर्तते इत्यङ्गीक्रियता-मित्याशङ्क्य परिहरति—"अन्वयेति"। तत्कल्पनाया एवा-भ्यर्हितत्वादुपादानान्तरासिद्धेरिति भाव. ॥ ४२ ॥

फलितमाह—"सर्वेति" ॥ ४३ ॥

॥ आविद्यकरजतोत्पत्त्युपपत्ति ॥

नन्वेवमिदमंशस्याऽप्यध्यस्तत्वेन इदमिति द्यात्मकं इदं रूप्यमिति च त्र्यात्मकं स्वप्ने इदं रूप्यमिति ज्ञानं चतुरात्मकं स्यादिति चेन्नेत्याह-"अध्यस्तत्वेऽपीति" द्वाभ्यां। इदन्त्वस्याध्यस्तत्वेऽपि नेदमिति द्यात्मकं इदन्त्वाधिष्ठानस्य स्वप्रकाशत्वात् न हि वयं सर्वत्राऽध्यासे द्यात्मकतां ब्रूमः अपित्वन्तःकरणवृत्तिसव्यपेक्षाधिष्ठानप्रकाशे अत एवेदं रूप्यमिति न त्र्यात्मकं स्वप्ने तु चतुरात्मकत्वशङ्का सर्वथाऽनुपपन्नेति द्वयोर्योजना ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ तत्रोपपत्तिमाह—"द्वयो-

DR.RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

द्वयोरध्यसनीयत्वादिदंरजतयो रपि ।
स्वप्रकाशतयाऽविद्याधिष्ठानस्य चिदात्मनः ॥ ४६ ॥
चाक्षुषेदंमनोवृत्त्यवच्छिन्नचितिगाऽस्ति या ।
अविद्या तद्विवर्तत्वे चाक्षुषत्वोपचारतः ॥ ४७ ॥
स्वत एवास्त्युपाधित्त्वमविद्यावृत्तिभासके ।
चैतन्येऽस्मिन्नविद्याया वृत्तेर्नान्यदपेक्षणम् ॥ ४८ ॥
साक्षिवेद्यतया वृत्तौ नाज्ञानं यद्यपीष्यते ।
तथाऽपि तदवच्छिन्ने शुक्त्यवच्छिन्नगं तमः ॥४९॥

---

रिति" । अविद्यावच्छिन्नचैतन्यरूपाधिष्ठानस्य स्वप्रकाशत्वादित्यर्थः ॥ ४६ ॥ ननु रूप्यज्ञानस्याचाक्षुषत्वे रूप्यं पश्यामीति चाक्षुषत्वानुभवविरोध इति नेत्याह—" चाक्षुषेति "। चाक्षुषेदंवृत्त्यवच्छिन्नचैतन्यस्याविद्यापरिणामत्त्वेन चाक्षुषत्वोपचारादित्यर्थः ॥ ४७ ॥ ननु रूप्यज्ञानस्याऽविद्यावृत्तित्वेन प्रातिभासिकतया प्रतिभासावश्यम्भावित्वादध्यस्तविषयज्ञानस्य चाध्यस्तत्वनियमेनाविद्यावृत्तेरपि अविद्यावृत्तिप्रतिविम्बितचैतन्यवेद्यत्त्वं एवं तस्य तस्यापि इत्यनवस्थेति चेन्नेत्याह—" स्वत " इति । सत्यमेतत् न पुनरनवस्था अविद्यावृत्तिप्रातिभासिकचैतन्ये अविद्यावृत्तेः स्वत एवोपाधित्वेन वृत्त्यन्तरानपेक्षत्वादित्यर्थः ॥ ४८ ॥

नन्विदं वृत्तेर्ज्ञातैकसत्त्वेन तदवच्छिन्नचैतन्यगताज्ञानमेव नास्तीति चेन्नेत्याह—" साक्षीति " । वृत्ते. साक्षिवेद्यत्त्वेन यद्यपि तद्गोचराज्ञानं नास्ति तथाऽपि तदवच्छिन्ने चैतन्ये शुक्त्यवच्छिन्नगोचराज्ञानस्य सत्त्वात् तथा चेदंवृत्तिराश्रयावच्छेदिका न तु विषयावच्छेदिकेति वस्तुस्थितिरिति तात्पर्यार्थः ॥४९॥ ननु त्वन्मते ये-

RUPNATHJI (DR. RUPAK NATH)
www.astrology-tantra.com

नाज्ञाननाशिकाऽविद्यावृत्तिः किं त्विदमाकृतिः ।
धीवृत्तिस्तदभिव्यक्तचैतन्यं रूप्यभासकं ॥ ५० ॥
नह्यवच्छेदकान्यत्वं फलभेदकरं मतं ।
किं तु व्यञ्जकभिन्नत्वं तथा च परमार्थसत् ॥ ५१ ॥
चैतन्यं स्यादधिष्ठानमध्यस्तस्य च तद्द्विधा ।
व्यावहारिकसच्चैकं द्वितीयं प्रातिभासिकं ॥ ५२ ॥
स्वप्नजागरयोस्तुल्या प्रतिभासैकसत्यता ।
अधिष्ठानमविद्यावच्छिन्नचैतन्यमेव हि ॥ ५३ ॥

---

था कममिदं रूप्याकारान्त करणवृत्त्यविद्यावृत्तिप्रतिबिम्बिताभ्यां वा तदभिव्यक्ताभ्यां वा इदमंशावच्छिन्नतदनवच्छिन्नाभ्यां वा इदमंशरूप्याधिष्ठानचैतन्याभ्यां वा वेद्यत्वेनावच्छिन्नफलस्य भेदात्कथं फलैक्यमनवच्छिन्नफलीभूतचिन्मात्राभेदस्य सर्वत्र समानत्वात् न हीदमंशेऽपि तदवच्छिन्नमेव चैतन्यमुपादानं आत्माश्रयात् न वा रूप्ये इदमंशानवच्छिन्नमुपादानं इदं रूप्यमिति प्रतीत्यनुपपत्तेरित्याशङ्क्य परिहरति—" नाज्ञानेति " त्रिभि. ॥५०॥५१॥५२॥

भ्रमस्य वृत्तिद्वयस्त्वोपपत्ति. ।

नन्वेवं सत्त्वद्वैविध्यविभागो नोपपद्यते प्रातिभासिकादप्यपकृष्टस्य स्वाप्नरूप्यस्य व्यावहारिकादप्युत्कृष्टाया अविद्यानिवृत्ते. सद्भावादिति चेत्याह—" स्वप्नेति " । स्वप्ने प्रातिभासिकनिकृष्टत्वे प्रमाणाभावात् तथा हि प्रातिभासिकत्वं हि प्रतिभासमात्रसत्वं तच्च स्वप्नजागरयो समानं । ननु जागरे अधिष्ठानतावच्छेदकेदमंशस्याधिकसत्ताकत्वं स्वप्नकाले तस्याऽपि प्रातिभासिकत्वमित्येव निकृष्टत्वमिति चेन्न । स्वप्ने हि इदमो नाधिष्ठानावच्छेदकत्वं तुल्यवदारोप्यत्वात् तत्राधिष्ठानमविद्यावच्छिन्नमेव चैतन्यमित्यर्थः ॥ ५३ ॥

RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

ब्रह्मरूपाऽस्तु वाऽविद्यानिवृत्तिरथ वाऽस्तु सा ।
अनिर्वाच्येति नैवास्ति विभागान्न्यूनता मनाक् ॥५४॥
ब्रह्मभिन्नं मृषा सर्वमित्येवं वदतो विदः ।
विभागातात्त्विकत्त्वस्यापीष्टत्वामिति न क्षतिः ॥५५॥
सत्त्वत्रैविध्यमप्यत्र व्यावहारिकमीरितं ।
तात्त्विकत्वं न कस्याऽपि ब्रह्मभिन्नस्य वस्तुनः ॥५६॥
अबाध्यत्वं स्वकालेऽस्त्यनध्यस्ताध्यस्तयोः समं ।

---

यद्वाऽविद्यानिवृत्तेः सत्वाभावेन सत्वविभागे न तदसङ्ग्रहनिबन्धनो दोषः वस्तुतस्तु अविद्यानिवृत्तिर्ब्रह्मस्वरूपा अनिर्वचनीया वेति न विभागन्यूनता न च विभागस्य तात्त्विकत्त्वे अपसिद्धान्तः अतात्त्विकत्वे त्रिविधत्वं गतमेवेति वाच्यं । ब्रह्मातिरिक्तमतात्त्विकमिति वदतो विभागातात्त्विकत्वस्येष्टत्वादित्यभिप्रेत्याह—" ब्रह्मरूपेति " श्लोकार्थः । बाधबोध्यत्वं न तात्त्विकत्त्वे प्रयोजकं किं त्वबाध्यत्वं तच्च न ब्रह्मातिरिक्तवृत्ति नेहनानेत्यादिना बाधादिति भावः ॥ ५४ ॥ ननु तर्हि तात्त्विकत्रैविध्यहानिः स्यादित्याशङ्क्य को हि त्रैविध्यस्य तात्त्विकत्वं ब्रवीति किं तु व्यावहारिकत्वमेवेत्याह—" सत्त्वेति " । न च त्रिविधसत्वाङ्गीकारे ब्रह्मैव सदिति स्वमतविरोधः तस्य परमार्थं सद्ब्रह्मैवेत्येतत्परत्वादिति न कश्चिद्विरोध इत्यर्थः ॥ ५६ ॥ व्यावहारिकसत्वप्रातिभासिकसत्वयोरवान्तरभेदमादायैव त्रैविध्यकथनमित्याह—" अबाध्यत्व " मिति । यथा प्रातिभासिके रजते ज्ञातैकसदेकं रजतत्वं लौकिकपरमार्थर-

DR.RUPAKNATH
www.astrology-tantra.com

अतोऽवान्तरभेदेन सत्वत्रैविध्यमिष्यते ॥ ५७ ॥
सप्रकारकज्ञानादिबाध्यत्वेनैव तद्भिदा।
तात्त्विकं सदधिष्ठानं शुद्धं निर्द्धर्मकं मतं ॥ ५८ ॥

---

जते चाज्ञातं सद्रूपं रजतत्वं तदुभयानुगतं चारोपितानारोपित-साधारण रजतत्वं रजतशब्दालम्बनं एवमाकाशादावारोपितैका सत्यता चिदात्मनि चानारोपिताऽपरा तदुभयसाधरणी चान्या व्यावहारिकी सत्यता सत्यशब्दालम्बनमित्यर्थः तदुक्तं ' आकाशादौ सत्यता(१)तावदेका प्रत्यङ्मात्रे सत्यता का चिदन्या। सत्संपर्कात्सत्यता तत्र चान्या व्युत्पन्नो ऽयं सत्यशब्दस्तु तत्रेति '। आरोपितानारोपितयोरेकसामान्याभावे प्रवृत्त्याद्यनुपपत्तेरुक्तत्वादिति सद्विशेषत्वेऽपि व्यावहारिकस्य प्रपञ्चस्य नानारोपितविशेषत्वमपीति भावः ॥ ५७ ॥

ननु व्यावहारिकप्रातिभासिकयोर्बाध्यत्वाविशेषे भेदः किं निबन्धन इत्यत आह—" सप्रकारकज्ञानादीति "। सप्रकारकनिष्प्रकारकज्ञानबाध्यत्वाभ्यां शुद्धब्रह्मधीबाध्यत्वतदन्यधीबाध्यत्वाभ्यां वा महावाक्यार्थजन्यधीबाध्यत्वतदन्यधीबाध्यत्वाभ्यां वा स्वबाधकधीबाध्यत्वतदन्यधीबाध्यत्वाभ्यां वा भेदसम्भवोऽस्तीत्यर्थः। सच्छब्देन निर्द्धर्मकाधिष्ठानमात्रमेवात्र विवक्षितमित्याह—" तात्त्विक "मिति । निर्द्धर्मकं यद्वस्तुगत्या तन्मात्रगोचरज्ञानस्य विवक्षितत्वात् निर्द्धर्मकत्वादस्तद्बुद्धावुपायत्वमात्रं न तु तद्बुद्धौ विषयत्वमिति भावः ॥ ५८ ॥

॥ सत्त्वत्रैविध्योपपत्तिः ॥

---

(१) सङ्क्षेपशारीरके । अ० ।

DR. RUPAK NATH
www.astrology-tantra.com

तदेवं दृश्यमिथ्यात्वं सिद्धं ब्रह्माद्वयं तथा ।
अखण्डार्थपरं वाक्यं तत्वावेदकमित्यतः ॥ ५९ ॥
अविद्यातत्कृतं बन्धमपबाध्य स्वया दृशा ।
भजन्ते यं महान्तोऽपि तं भूमानं हरिं श्रये ॥३६०॥
इति सिद्धान्तसारे श्रीसदानंदविदा कृते ।
जगन्मिथ्यात्वनिष्ठोऽयं प्रथमः पूर्णतां गतः ॥ १ ॥

अद्वैतसिद्धिसिद्धान्तसारसङ्ग्रहे प्रथमः परिच्छेदः ।

---

तदेवं दृश्यस्य प्रपञ्चस्य मिथ्यात्वात्तदतिरिक्तब्रह्मरूपाखण्डार्थनिष्ठवेदान्तवाक्यं परं तत्त्वविदकं सखण्डार्थविषयकं सर्वमतत्त्वावेदकमेवेत्याह—“ तदेव ”मिति ॥ ५९ ॥ प्रकरणान्ते भगवन्तमनुसन्धत्ते— “ अविद्ये ”ति ॥ ३६० ॥

इति श्रीमन्मुकुन्दपदारविन्दमकरन्दरसाभिलाषिश्रीसदानन्दविदा कृते अद्वैतसिद्धिसिद्धान्तसारसङ्ग्रहे जगन्मिथ्यात्वनिरूपणं नाम प्रथमः
परिच्छेदः ॥ १ ॥



RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH)
www.astrology-tantra.com

॥ श्रीः ॥

# अद्वैतसिद्धिसिद्धान्तसारसङ्ग्रहे ।

## द्वितीयः परिच्छेदः प्रारभ्यते ।

आनन्दैकरसं ब्रह्म वेदान्तैकप्रमाणकम् ।
मुकुन्दमनिशं वन्दे हृदि स्थितमनामयम् ॥ १ ॥
हेयं निरूप्य बन्धाख्यं तन्निवृत्तेर्निबन्धनम् ।
यज्ज्ञानं तदखण्डार्थमादेयमधुनोच्यते ॥ २ ॥

---

विशुद्धं सर्ववेदान्तप्रमेयं ब्रह्म चिद्घनम् ।
वन्दे स्वानन्दमद्वैतं कृष्णमद्भुतसुन्दरम् ॥ १ ॥

एवं दृश्यमिथ्यात्वं सपरिकरमुपवर्ण्येदानीं ब्रह्मतत्त्वं निरूपयिष्यन्भगवन्तं मङ्गलमूर्तिं वेदान्तप्रमेयं श्रीकृष्णतत्वमनुसन्धत्ते— “ आनन्दे ” इति ॥ १ ॥ पूर्वोत्तरपरिच्छेदयोः सङ्गतिं प्रदर्शयन् चिकीर्षितं प्रतिजानीते—“ हेयमिति ” । अविद्यामूलकं कर्तृत्वाद्यनर्थजातं सर्वथा हेयत्वेन शास्त्रे प्रदर्शितं दृश्यबन्धं श्रुत्यनुकूलतर्कैर्मिथ्यात्वेन निर्णीतं तत्वज्ञानैकनिवर्त्यं सम्यङ्निरूप्येदानीं तन्निवृत्त्येकहेतुं ‘सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्मे’त्याद्यवान्तरवाक्यसहकृततत्त्वमस्यादिमहावाक्यप्रमाणकमखण्डब्रह्मात्मैक्यविषयं ज्ञानं तद्विषयतत्त्वम्पदार्थतत्त्वतदैकवाक्यार्थभूतमखण्डतत्त्वं सपरिकरं निरूप्यत इत्यर्थः ॥ २ ॥ निरूपणप्रकारमेवाह—“ अखण्डार्थ ” मिति।

RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

अखण्डार्थं द्विधा तच्च श्रौतलौकिकभेदतः ।
पुनः पदार्थवाक्यार्थनिष्ठत्वेन द्विधा मतम् ॥ ३ ॥
तत्त्वम्पदार्थनिष्ठं तद्द्विविधं वैदिकं मतम् ।
सत्यं ज्ञानमिति श्रौतं तत्पदार्थपरं मतं ॥ ४ ॥
योऽयं प्राणेषु हृद्यंतरित्यादि त्वम्पदार्थगं ।
महाप्रकाश इत्यादि लौकिकं स्यात्पदार्थगं ॥ ५ ॥
तत्त्वमस्यादिवाक्यं तु श्रौतं वाक्यार्थतत्परं ।
सोऽयमित्यादिवाक्यार्थनिष्ठं तल्लौकिकं मतं ॥ ६ ॥
तत्रापर्यायशब्दानामखण्डार्थत्वमाश्रितं ।

---

तच्चाखण्डार्थं द्विविधं एकं पदार्थनिष्ठमपरं वाक्यार्थनिष्ठं एकैकं च पुनर्वैदिकलौकिकभेदेन द्विविधमिति योजना ॥ ३ ॥ पदार्थनिष्ठं वैदिकमपि द्विविधं तत्पदार्थनिष्ठं त्वम्पदार्थनिष्ठं च तत्र 'सत्यं ज्ञानमनन्त'मित्यादि तत्पदार्थनिष्ठं, 'योऽयं विज्ञानमयः प्राणेषु हृद्यन्तर्ज्योतिः पुरुष' इत्यादि त्वम्पदार्थनिष्ठं, प्रकृष्टप्रकाश इत्यादि तु लौकिकं पदार्थनिष्ठमित्याह—" तत्व " मितिद्वाभ्यां ॥ ४ ॥ ५ ॥

वाक्यार्थनिष्ठमपि द्विविधं दर्शयति—" तत्त्वमसीति " ॥ ६ ॥

ननु किमखण्डार्थत्वं न तावन्निर्भेदार्थत्वं यतो निर्भेदत्वस्य शब्दबोध्यत्वे विशेषणतायामुपलक्षणतायां च निर्धटं भूतलमिति वाक्याखण्डार्थत्वमेव स्यात्तच्छब्दाबोध्यत्वे तु वस्तुगत्या यन्निर्भेदं ब्रह्म तत्परकसगुणवाक्यानामप्यखण्डार्थत्वापत्तिरित्यादिदूषणं पर्यालोच्य स्वाभिमतं लक्षणमाह—" तत्रेति " । अपर्यायशब्दानां पदवृत्तिस्मारिताऽतिरिक्तागोचरप्रमाजनकत्वमखण्डार्थत्वं तथा च प्रसयोः प्राप्तिः संयोग इत्यादि संयोगलक्षणवाक्ये नाव्याप्तिः स्व

DR.RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

पदवृत्तिस्मारितार्थातिरिक्तागोचरप्रमा ॥ ७ ॥
याऽस्तितज्जनकत्त्वं तन्नातिव्याप्त्याऽतिदूषितं ।
संसर्गासङ्गिसम्यग्धीहेतुता या गिरामियं ।
उक्ताऽखण्डार्थता यद्वा तत्प्रातिपदिकार्थता ॥ ८ ॥
अविशिष्टमपर्यायानेकशब्दप्रकाशितं ।
एकं वेदान्तनिष्णाता अखण्डं प्रतिपेदिरे ॥ ९ ॥

---

पदवृत्तिस्मारितत्वात् नापि विषदत्तभोजननिषेधकेऽतिव्याप्तिः तत्राऽनिष्टसाधनत्वसंसर्गस्य पदवृत्त्यस्मारितस्य प्रतिपाद्यत्वात् अत्र घटः कलशः इत्यादौ संसर्गाज्ञापके एकार्थपरेऽतिव्याप्तिवारणायापर्यायशब्दानामित्युक्तं, पदज्ञाप्येत्युक्तेऽर्थापत्त्या पदज्ञाप्यमनिष्टसाधनत्वमादाय विषं भुङ्क्ष्वेति वाक्येऽतिव्याप्तिः स्यात्तद्वारणायवृत्तीति । तथाऽप्यन्विताभिधानवादिमते शक्त्याऽभिहितान्वयवादिमते लक्षणया वाक्यार्थभूतसंसर्गस्य वृत्तिज्ञाप्यत्वात् सर्वत्र प्रमाणवाक्येऽतिव्याप्तिः स्यात्तद्वारणायोक्तं स्मारितेति सार्द्धतात्पर्यार्थः ॥ ७ ॥ अपर्यायशब्दानां संसर्गागोचरप्रमितिजनकत्वं वा तेषामेकप्रातिपदिकार्थमात्रपर्यवसायित्वं वा ऽखण्डार्थत्वमित्यभिप्रेत्य तत्त्वप्रदीपिकाकृद्वचनं तल्लक्षणपरमुदाहरति—" संसर्गेति " तत्राप्येकत्वं प्रातिपदिकार्थस्यैकधर्मावच्छेदेन वृत्तिविषयत्वं नत्वेकव्यक्तित्वं अत एकदेशस्था वृक्षा वनमित्यादौ नाव्याप्तिः तदुक्तं पञ्चपाद्यां 'पदानां परस्परानवच्छिन्नार्थानामन्याकाङ्क्षाणामव्यतिरिक्तैकरसप्रातिपदिकार्थमात्रान्वय' इति तात्पर्यार्थः ॥ ८ ॥

अत्र कल्पतरुकृद्वचनमाह—"अविशिष्टेति" ॥ ९ ॥ ननु

RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH
www.astrology-tantra.com

प्रवृत्तिहेतुभेदं हि स्वीकृत्यैवोच्यते नयात् ।
अनन्तादिपदानां च शुद्धब्रह्मैकनिष्ठता ॥ १० ॥
शुद्धे तात्विकसम्बन्धाभावादपि हि लक्षणा ।
सिद्ध्येदतात्त्विकेनैव सम्बन्धेन श्रुतेर्गिरां ॥ ११ ॥
अखण्डार्थपरं वाक्यं सत्यं ज्ञानमिति श्रुतेः ।
तत्प्रातिपदिकार्थैकनिष्ठं लक्षणवाक्यतः ॥ १२ ॥
तन्मात्रस्योत्तरत्वाद्वा तत्प्रकृष्टप्रकाशवत् ।
तत्वमस्यादिकं वाक्यमखण्डार्थपरं मतं ।

---

प्रवृत्तिनिमित्तभेदेऽपर्यायत्वं स चानन्तादिपदेषु न सम्भवति शुद्धब्रह्ममात्रनिष्ठत्वादतो वेदान्तेषु लक्षणाव्याप्तिरिति चेन्नेत्याह—“ प्रवृत्तीति ” ॥ १० ॥ शुद्धे सम्बन्धाभावात्कथं लक्षणेत्यत आह—“ शुद्धे ” इति । अतात्विकसम्बन्धेनैव लक्षणोपपत्तेः भ्रमप्रतीतरजतत्वेन शुक्तौ रजतपदलक्षणावत् शुद्धस्यैव सर्वकल्पनास्पदत्वेन शुद्धे न कल्पितसम्बन्धाऽनुपपत्तिः यथा चानन्तादिपदानां लाक्षणिकत्वेपि नान्तवत्वादिप्रसङ्गस्तथा वक्ष्यते इति ॥ ११ ॥

अखण्डार्थत्वलक्षणकथनम् ।

एवं लक्षणसम्भवे प्रमाणसम्भवोऽपीत्याह—“अखण्डार्थेति” सत्यादिवाक्यमखण्डार्थनिष्ठं ब्रह्मप्रातिपदिकार्थमात्रनिष्ठं वा लक्षणवाक्यत्वात्तन्मात्रप्रश्नोत्तरत्वाद्वा प्रकृष्टप्रकाशश्चन्द्र इत्यादिवाक्यवदिति पदार्थविषयाखण्डार्थत्वानुमानमिति सार्द्धयोजना ॥१२॥

तत्वमस्यादिवाक्यमखण्डार्थनिष्ठमिति वाक्यार्थविषयाखण्डार्थत्वानुमानमित्याह—“ तत्वमस्यादीति ” सार्द्धद्वाभ्यां ॥ १३ ॥

RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

आत्मस्वरूपमात्रैकनिष्ठं वेत्येव साध्यते ॥ १३ ॥
अकार्यकारणद्रव्यनिष्ठत्वे सति वस्तुतः ।
सामानाधिकरण्याद्या तन्मात्रस्योत्तरत्वतः ॥ १४ ॥
सोऽयमित्यादिवन्त्वित्थं मानमत्रानुमानकं ।
सत्यादिवाक्ये तन्मात्रप्रश्नोत्तरतया मतं ॥ १५ ॥
ब्रह्मवित्परमाप्नोतीत्यत्र ब्रह्मात्मवेदनं ।
इष्टसाधनभावेन बुभुत्सा तत्र यद्भवेत् ॥ १६ ॥
तत्वमस्यादिवाक्येऽपि तन्मात्रप्रश्न उत्तरं ।
कोऽहमित्यात्मरूपस्य प्रश्नोत्तरतया भवेत् ॥ १७ ॥
यद्यप्येकं परं लक्ष्यं सत्यादिकगिरां मतं ।

---

॥ १४ ॥ १५ ॥ ननु सत्यादिवाक्ये तन्मात्रप्रश्नोत्तरत्वमसिद्धमित्याह— "ब्रह्मवि" दिति । तन्मात्रस्यैव प्रश्नविषयत्वादित्यर्थः ॥ १६ ॥ एवं तत्त्वमस्यादिवाक्येऽपि तन्मात्रप्रश्नोत्तरत्वं नासिद्ध मित्याह–" तत्त्वमिति " कोऽहमित्यात्मस्वरूपस्यैव प्रश्नविषयत्वेन तदभिकप्रत्युत्तरत्वादुक्तेरित्यर्थः ॥ १७ ॥ यद्यपि सत्याद्यन्यतमपदं स्वरूपलक्षणपरं ब्रह्मणोऽन्यस्य तदाभासत्त्वात् तथाऽपि परैरपि सत्वस्य सत्वे सति ज्ञानत्वस्य सत्यत्वे सति आनन्दत्वस्य शून्यवादिनाऽपि सत्वरहितज्ञानानन्दात्मकत्वस्य ब्रह्मणोऽन्यत्राङ्गीकारान्मिलितं विना न निर्विचिकित्सब्रह्मसिद्धिरिति मिलितं लक्षणं, यद्यपि सर्वेषां सत्यादिपदानां लक्ष्यमेकमेव निर्विशेषं ब्रह्म तथाऽपि निवर्तनीयांशाधिक्येन

DR.RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

तथाऽपि विनिवर्त्त्यांशाधिक्येनेष्टं पदान्तरं ॥ १८ ॥
अतो वाच्यार्थवैशिष्ट्येऽखण्डसिद्धावुपायता ।
स्वरूपलक्षणस्थातावविरोधित्त्वादखण्डिते ॥ १९ ॥
अभेदेऽपि धियो वृत्तिप्रयुक्ताकारभेदतः ।
लक्ष्यलक्षणभावोऽपि सिध्येदावृततादिवत् ॥ २० ॥
शुद्धब्रह्मैकताकारा धीवृत्तिर्निष्प्रकारिका ।
शुद्धब्रह्मैकविषयाज्ञानस्य विनिवर्तिका ॥ २१ ॥

---

न पदान्तरवैयर्थ्यमित्याह—“ यद्यपीति ” ॥ १८ ॥ अतो वाच्यार्थवैशिष्ट्यस्याखण्डसिद्धावुपायत्वाच्च तद्विरोधितेत्याह—“ अत इति ” ॥ १९ ॥

अभेदे कथं लक्ष्यलक्षणभाव इत्यत्राह—“अभेदेऽपीति” । आवृततादिवत्-आवृतत्वानावृतत्ववत् अन्यथा स्वरूपलक्षणतटस्थलक्षणविभागो न स्यादित्यर्थः ॥ २० ॥ अज्ञानविषयश्च शुद्धं ब्रह्म अज्ञानकल्पितस्य तदितरस्याज्ञानविषयत्वायोगात् तथा च शुद्धब्रह्माकारा चित्तवृत्तिर्निष्प्रकारिकैवाज्ञाननिवर्त्तिका प्रकारमात्रस्याऽप्यविद्याकल्पितत्वेन तद्विषयाया वृत्तेरविद्यासमविषयत्वाभावादित्यभिप्रेत्याह—“ शुद्धब्रह्मेति ” । यथा चाविद्यातत्कार्यविषयं ज्ञानं तदनिवर्तकं तथा व्युत्पादितं प्रागिति भावः ॥ २१ ॥

नन्वस्तु सत्प्रतिपक्षस्तथाहि सत्यादिवाक्यतात्पर्यविषयः संसृष्टरूपः संसर्गरूपो वा प्रमाणवाक्यतात्पर्यविषयत्वात्संमतवत् सत्यादिवाक्यं स्वतात्पर्यविषयज्ञानाबाध्यसंसर्गपरं स्वतात्पर्यविषयज्ञानाबाध्यस्वकरणकप्रमाविषयपदार्थनिरूप्यसंसर्गपरं वा प्रमाणवाक्यत्वादग्निहोत्रादिवाक्यवत् विषं भुङ्क्ष्वेत्यादौ वाक्यार्थसं-

RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

न वा सत्प्रतिपक्षोऽत्र शङ्क्योऽखण्डार्थसाधने।
प्रतिकूलो यतस्तर्कः सर्वेषु प्रतिहेतुषु ॥ २२ ॥
दृष्टान्ते साध्यवैकल्यं न शङ्क्यं लक्षणेष्यते।

---

सर्गपरत्वाभावेऽपि स्वकरणकप्रमाविषयपदार्थसंसर्गपरत्वाच्च व्यभिचारः खं च्छिद्र कोकिलः पिक इत्यादौ चान(१)तिभिन्नार्थत्वे सामानाधिकरण्यायोगेन छिद्रकोकिलादीनां खपिकादिशब्दवाच्यत्वसंसर्गपरत्वान्नव्यभिचार इत्याशङ्क्य निरस्यति—" न वेति "। आद्यानुमाने संसृष्टरूप इति साध्ये संसर्गे [illegible]रूप इति साध्ये च संसृष्टरूपे पदार्थे व्यभिचारात् तयोरपि प्रमाणवाक्यतात्पर्यविषयत्वात् द्वितीयानुमाने प्रमाणवाक्यत्वस्याबाध्यपरत्वमात्रेण प्रमितिविषयपरत्वमात्रेण वोपपत्तौ विशिष्टसाध्यस्य तन्त्रातन्त्रत्वेनाप्रयोजकत्वात् अलक्षणवाक्यत्वस्योपाधित्वाच्च नाऽत्र सत्प्रतिपक्षः सम्भवतीत्यर्थः। ननु वेदान्तजन्या प्रमा सप्रकारिका विचारजन्यत्वात् संशयनिवर्तकत्वाद्वा कर्मकाण्डजन्यज्ञानवत् वेदान्तजन्या प्रमा ब्रह्मप्रकारविषया ब्रह्मधर्मिकसंशयविरोधित्वाद्ब्रह्मविचारजन्यत्वाद्वा यदेवं तदेवं यथा कर्मकाण्डविचारजन्यो विनिश्चय इति प्रतिसाधनमस्त्वित्याशङ्क्य निरस्यति—" प्रतिकूल " इति। त्वन्मते ज्ञानमात्रस्य सप्रकारत्वेन विचारजन्यत्वसंशयविरोधितयोर्व्यर्थत्वात् अप्रयोजकत्वात् निष्प्रकारकज्ञानादपि संशयादिनिवृत्तिसम्भवात् लक्षणवाक्याजन्यत्वस्योपाधित्वाच्च अत एव द्वितीयानुमानमप्यपास्तम्। ब्रह्मनिष्ठप्रकारविषयत्वसाधने दृष्टान्ताभावात् सर्वेषु च प्रतिसाधनेषु प्रश्नोत्तरयोर्वैयधिकरण्यापत्तिः प्रतिकूलतर्कोऽवसेय इत्यर्थः। ॥ २२ ॥

॥ सत्प्रातिपक्षनिरासः ॥

ननु दृष्टान्ते साध्यवैकल्यं तथा हि प्रकृष्टप्रकाशादिवाक्यं न तावदभिधेयाखण्डार्थनिष्ठं प्रकृष्टादिपदस्याखण्डेऽभिधाया अभावात् त्वयाऽनङ्गीकाराच्च, नाऽपि लक्षणया प्रकृष्टप्रकाशस्य द्रव्यस्य गुणस्य

---

(१) भिन्नमत्यन्तभिन्नमतिक्रान्तोऽतिभिन्नो भेदाभेदवान् तादृशार्थत्वाभावे इत्यर्थः।

DR. RUPAK NATH
www.astrology-tantra.com

तत्राखण्डपरत्वेऽतोऽप्युत्तरस्योचितत्वतः ॥ २३ ॥
प्रश्नोत्तरे उभे युक्त्या ते प्रातिपदिकार्थगे ।
चन्द्रव्यक्तिस्ततो लक्ष्या सामानाधिकरण्यतः ॥ २४ ॥
दार्ष्टान्तिकेऽपि किं ब्रह्मेत्येवं वाक्ये प्रकल्पिते ।
सत्यंज्ञानमिति श्रौतमखण्डार्थपरं भवेत् ॥ २५ ॥

---

वा चन्द्रेऽन्वयोपपत्तेरन्वयानुपपत्तिरूपलक्षणाबीजाभावादित्याशङ्क्याह—" दृष्टान्ते " इति । यष्टीः प्रवेशयत्यादौ 'लोकेतरसमयाः पुरोडाशा भवन्ती'त्यादौ वेदे च यथाश्रुतान्वयसम्भवेऽपि यथा तात्पर्यविषयीभूतान्वयानुपपत्त्या याष्टिकपुरुषेषु सवनीयहविर्मात्रे च यष्टिपुरोडाशशब्दयोर्लक्षणाऽऽश्रिता तथैवेह तात्पर्यविषयीभूतान्वयानुपपत्तिनिमित्तया लक्षणया अखण्डार्थपरत्वोपपत्तेः कश्चन्द्र इति चन्द्रस्वरूपे पृष्टे तन्मात्रस्यैवोत्तरस्योचितत्वादिति तात्पर्यार्थः ॥२३॥ प्रश्नोत्तरे तावच्चन्द्रप्रातिपदिकार्थमात्रविषये चन्द्रप्रातिपदिकार्थश्च प्रकृष्टप्रकाशाश्रयीभूतासाधारणी विशेष्यभूता व्यक्तिः न तु प्रकृष्टप्रकाशविशिष्टा प्रकृष्टप्रकाशश्चन्द्र इति सह प्रयोगानुपपत्तेः विशेष्यव्यक्तिश्चाखण्डेत्यखण्डार्थतैवेत्यभिप्रेत्याह— " प्रश्नोत्तर " इति । तथा च दृष्टान्ते न साध्यवैकल्यमित्यर्थः ॥ २४ ॥

'ब्रह्मविदाप्नोति परं' 'एकधैवानु द्रष्टव्य'मित्यादि वाक्यबलात्सत्यत्वादिवैशिष्ट्याविषयकस्यैव ब्रह्मविषयकवेदनस्य मोक्षजनकत्वात् कश्चन्द्र इति वत्किं ब्रह्मेत्येव वाक्यं कल्प्यते इत्याह— " दार्ष्टान्तिक " इति ॥ २५ ॥ ननु सत्यादिवाक्ये सत्सु विशेषणेषु सस्तु(१)तिकविधिवाक्ये प्राशस्त्य इव विशेषणार्थस्याका-

(१) सस्तुतिकेति स्तुत्यर्थवादसहितेत्यर्थः । अस्तुतिके विधौ बलवदनिष्टासाधनत्वरूपप्राशस्त्यस्याक्षेपलभ्यत्वेऽपि सस्तुतिके विधौ प्राशस्त्ये शाब्दी आकाङ्क्षेति भाव. । *



DR. RUPNATHJI (DR. RUPAK NATH)
www.astrology-tantra.com

सत्यज्ञानादिवाक्यैऽत्र यद्यप्यस्ति विशेषणं ।
नाकाङ्क्षाकल्पनं तत्र ब्रह्मव्यक्तिपरत्वतः ॥ २६ ॥
निष्प्रकारकबोधस्याधिष्ठानप्रत्ययत्त्वतः ।
भ्रमादिविनिवृत्त्या स्यान्मोक्षहेतुत्वमञ्जसा ॥ २७ ॥
एकधैवानुद्रष्टव्यमित्यनेकत्त्ववारणात् ।
नाऽल्पमप्यन्तरं कुर्यादिति भेदनिषेधनात् ॥ २८ ॥
केवलो निर्गुणश्चेति गुणानां प्रतिषेधनात् ।
एकमेवाद्वितीयं सदिति द्वैतनिषेधनात् ॥ २९ ॥

---

ङ्क्षोत्था(१)पनीयेत्याशङ्क्य सत्यादिवाक्य विशेषणे सत्यपि न तद्वोचराकाङ्क्षाकल्पनं प्रकृष्टप्रकाशश्चन्द्र इत्यत्र विशेषणे सत्यपि कश्चन्द्र इति स्वरूपमात्राकाङ्क्षादर्शनात् व्यावृत्तिविशेषबोधश्च विशेषणपरत्वाभावेऽपि तदुद्धारकस्वरूपज्ञानमात्रेणैवोपपद्यते इत्यभिप्रेत्याह— " सत्यज्ञानादीति " ॥ २६ ॥ ननु सप्रकारकज्ञानस्यैव मोक्षहेतुतया 'ब्रह्मविदाप्नोति परं' 'य एवं विद्वानमृत इह भवतीति' श्रुत्या 'यो वेद निहितं गुहाया' मित्युत्तरवाक्येन च मुमुक्षोः सप्रकारक एव धर्मिज्ञाने साध्ये बुभुत्सोचितेत्याशङ्क्य निष्प्रकारकज्ञानस्यैव स्वरूपोपलक्षणोपलक्षिताधिष्ठानज्ञानत्वेन भ्रमादिनिवृत्त्या मोक्षहेतुनाथ श्रुत्यादितत्वेन तदनुरोधाद्ब्रह्मविदित्यादेः सप्रकारकब्रह्मज्ञानपरतायां मानाभावात् य एवं विद्वानित्यस्याप्येवं प्रकारत्वं नार्थः किन्त्वेवं प्रकारोपलक्षिततत्वमेकधैवेत्याद्यनुसारादित्यभिप्रेत्याह— " निष्प्रकारकेति " ॥ २७ ॥ यथोक्त एवार्थे सर्वश्रुतिसामञ्जस्यं चान्यथेत्याह—" एकधेत्यादि " युग्मेन ॥ २८ ॥ ॥ २९ ॥

---

( १ ) यथा रक्त पटोऽस्तीत्यादौ रक्तान्वय विना वाक्यार्थसमाप्तिसम्भवे ऽपि रक्तपदवैयर्थ्यपरिहाराय रक्तवैशिष्ट्याशीऽप्याकाङ्क्षा कल्प्यते तथा सत्यत्वादन्वय विना तत्स्यभवेऽपि सत्यादिपदवैयर्थ्याय तत्र सा कल्प्यतामित्यर्थं ।

www.astrology-tantra.com
RUPNATHJI (DR.RUPAK NATH)

सर्वतोऽप्यनवच्छिन्नवस्तुमात्रपरौ मतौ ।
अनन्तब्रह्मशब्दौ तद्वाक्यं चाखण्डतत्परम् ॥ ३० ॥
एकत्वभेदाभावादेः स्वरूपत्वेन वस्तुतः ।
न विशिष्टपरत्वं स्यादुक्तवाक्यस्य कर्हिचित् ॥ ३१ ॥
संसर्गाविषयेऽप्यस्त्याकाङ्क्षादीनां सुसम्भवः ।

---

अनन्तादिशब्दसामञ्जस्यमप्येवमेवेत्याह—" सर्वत " इति। ननु तेषामैक्यभेदाभावादिविशिष्टार्थपरत्वे वेदान्तमात्रस्याखण्डार्थत्वासिद्धिः सत्यशुद्धानन्यमिथ्याविशिष्टार्थपरत्वे प्रामाण्यायोग इत्याशङ्क्यैक्यभेदाभावादीनां स्वरूपत्वेन विशिष्टपरत्वस्यैवाभावात् भेदाभावादेः कल्पितप्रतियोगितया कल्पितत्वे सत्यादिपदवद्विशिष्टार्थाभिधानद्वारा स्वरूपपरत्वेन प्रामाण्योपपत्तेरित्यभिप्रेत्याह— " एकत्वेति " ॥ ३१ ॥

॥ दृष्टान्ते साध्यवैकल्यादीनां परिहारः ॥

नन्वखण्डार्थसाधका हेतवः प्रतिकूलतर्कपराहताः तथा हि पक्षदृष्टान्तलक्षणमैक्यपरवाक्यं यदि संसृष्टार्थं न स्याद्वाक्यमेव न स्यादाकाङ्क्षायोग्यतासत्तिमत्त्वाभावात् आकाङ्क्षा हि अभिधानापर्यवसानं तच्च येन विना यस्य न स्वार्थान्वयानुभावकत्वं तस्य तदेवापर्यवसानं, सन्निधिस्त्वव्यवधानेनान्वयप्रतियोग्युपस्थितिः योग्यता चैकपदार्थसंसर्गे अपरपदार्थनिष्ठात्यन्ताभावप्रतियोगितावच्छेदकधर्मशून्यत्वं नैतत्त्रयं संसर्गाविषये सम्भवतीत्याशङ्क्य परिहरति—" संसर्गेति "। एतदुक्तं भवति अखण्डार्थेऽप्येतत्त्रितयसम्भवोऽस्ति तथा हि निराकाङ्क्षयोरपि यत्किञ्चिदन्वयानुभावकतया तात्पर्यविषयान्वयाननुभावकत्वमेवाकाङ्क्षा वाच्या तथा चान्वयांशो व्यर्थः येन विना यस्य तात्पर्यविषयाननुभावकत्वमि॰

DR. RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

न वाक्यत्वक्षतिर्दोषो वेदान्तेऽखण्डबोधके ॥ ३२ ॥
यद्यप्यखण्डवाक्यार्थचिद्धातोः स्वप्रकाशतः ।
स्वतः सिद्धत्वमेवेष्टं तथाऽप्यस्यप्रमाणजां ॥ ३३ ॥
विना वृत्तिमविद्याया विनिवर्त्तकता न हि ।
मानवृत्तिरविद्यैकनिवृत्तिफलभागिनी ॥ ३४ ॥
निष्प्रकारमपि ज्ञानं निर्विकल्पकमिष्यते ।

---

त्येतावन्मात्रस्यैव सामञ्जस्यात् तात्पर्यविषयश्च क्वचित्संसृष्टः क्वचिदखण्ड इति न विशेषः अत. सा तात्पर्यविषयाऽखण्डार्थानुभवजननात् प्राग् वेदान्तवाक्येऽप्यस्त्येव आसत्तिरप्यव्यवधानेन शाब्दबोधानुकूलार्थोपस्थितिमात्रं न त्वन्वयप्रतियोगित्वविशेषितपदार्थोपस्थितिः गौरवात् सा च संसर्गाबोधकेऽप्यस्त्येव योग्यताऽपि तात्पर्यविषयाबाध एव न त्वेकपदार्थससर्ग इत्याद्युक्तरूपेति न वाक्यत्वानुपपत्तिलक्षणप्रतिकूलतर्कपराहतिरिति ॥ ३२ ॥

ननु संसृष्टार्थत्वं न चेत्तदा वेदान्तानां निर्विषयत्वापत्तिरखण्डवाक्यार्थस्य स्वप्रकाशचिन्मात्रस्याविद्याद्यध्यासाधिष्ठानत्वेन तत्साक्षित्वेन च नित्यसिद्धत्वादिति तत्राह—" यद्यपीति " । अनाद्यविद्योपहितत्वेनादोषात् स्वतः सिद्धस्यापि प्रमाणवृत्तिमन्तरेणाविद्यानिवर्त्तकत्वाभावात्प्रमाणवृत्तेश्चाविद्यानिवृत्तिफलोपहितत्वान्न कापि अनुपपत्तिरिति द्वयोरर्थ. ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ननु वेदान्तवाक्यजन्यं ज्ञानं निष्प्रकारकं चेत् ज्ञानमेव न स्यात् ज्ञानस्येच्छादितुल्यतया सविषयत्ववत्सप्रकारकत्वस्यापि नियमात्कांचित्प्रकारं विना वस्तुनो बुद्धावनारोहाच्चेद्यापत्त्यासिद्धेर्मैवमित्याह—" निष्प्रकारक " मिति । तार्किकादिभिरपि निर्विकल्पकज्ञानाभ्युपगमात् शब्दवाच्यं तु कं चित्प्रकारमन्तरेण सम्भवति न वेति वादिनो

DR. RUPNATHJI( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

तार्किकैरपि किं वाच्यं वेदान्तैर्निर्विशेषगम् ॥ ३५ ॥
विचारस्याऽपि वेदान्ततात्पर्यैकविनिश्चये ।
फलवत्त्वेन निर्विघ्नब्रह्मज्ञानार्थता भवेत् ॥ ३६ ॥
आपातदर्शनं यस्मान्नाज्ञानविनिवर्त्तकम् ।
अतो विचारशास्त्रस्य प्रारम्भः सफलो मुनेः ॥३७॥
व्यावृत्ताकारतो ब्रह्माज्ञातत्वाद्विषयो मतः ।
स्वरूपनिश्चयाधीनं प्रयोजनमपीष्यते ॥ ३८ ॥
निश्चयो मुक्तिफलकोऽखण्डार्थज्ञानमेव सः ।
सिद्धान्तपूर्वपक्षौ द्वौ कल्पितत्वावलम्बिनौ ॥ ३९ ॥

---

विवदन्ते तच्चास्माभिर्ब्रह्मणो नाऽपेक्ष्यते आकाशादिपदवत्कश्चित्प्रयोगोपाधिमादाय तदपि सम्भवत्यवेत्यभिप्रायः ॥ ३५ ॥ विचारविधिसम्भवोऽप्यस्तीत्याह—“ विचारस्येति ” द्वाभ्यां । विचारस्य वेदान्ततात्पर्यनिश्चयादिफलकतया निष्प्रत्यूहनिष्प्रकारकब्रह्मज्ञानार्थत्वोपपत्तेः आपातदर्शनस्य प्रतिबद्धत्वेनाज्ञानानिवर्त्तकत्वात् विचारशास्त्रस्या‘थातो ब्रह्मजिज्ञासे’त्यादिरूपस्य प्रारम्भो मुनेः व्यासस्य सफलोऽभिमत इति द्वयोःसमुदितोऽर्थः ॥ ३६ ॥ ३७ ॥

शुद्धब्रह्मविषयाणामधिकरणानामप्यारम्भो नाऽनुपपन्न. विषयादिपञ्चकसम्भवादित्याह—“ व्यावृत्तेति ” । व्यावृत्ताकारेणाज्ञातो हि विषयः ब्रह्म च तथा भवत्येव विषयस्वरूपनिर्धारणाधीनं च प्रयोजनं न निर्धारणे सप्रकारकत्वमपेक्षते निष्प्रकारे वस्तुनि स्वरूपनिर्द्धारणत्वाव्याघातात् अद्वैताद्युपलक्षिताखण्डार्थज्ञानं च निर्द्धारणं तदधीनं च प्रयोजनं मुक्तिरेव पूर्वपक्षसिद्धान्तौ च कल्पितप्रकारालम्बिनौ संशयोऽपि कल्पितसमानधर्मधीजन्मैवेति नानुपपत्तिः अत एव विषयादिपञ्चकं निर्विशेषे कथं स्यादिति परास्तम् । उक्तरीत्योपपत्तेरिति त्रयाणां समुदितोर्थः ॥ ३८ ॥ ३९ ॥

DR.RUPAK NATH (DR.RUPNATHJI) www.astrology-tantra.com

संशयोऽध्यस्तसामान्यधर्मधीजननो मतः ।
तस्मात्सम्यग्धियः सिद्धै शास्त्रारम्भादिसम्भवः ॥४०॥
स्वरूपस्य प्रमेयत्वादुद्देश्यन्त्वविधेयते ।
सत्यादिद्वारतो ज्ञानादसाधारणनिश्चयः ॥ ४१ ॥
लक्षणा शक्यसम्बन्धस्तात्पर्यानुपपत्तितः ।
बीजत्वान्नान्वयासिद्धेः प्रकृते सैव सम्मता ॥ ४२ ॥

---

॥ प्रतिकूलतर्कनिराकरणम् ॥

॥ ४० ॥ एकस्मिन्नपि कल्पितोद्देश्यविधेयभावसम्भवादप्राप्तविधेयमात्रपरत्वाद्वाक्यस्य नाखण्डार्थत्वव्याघात इत्याह—" असाधारणेति "। असाधारणस्वरूपस्य प्रमेयतया विधेयत्वात्सत्यत्वादिद्वारकस्वरूपज्ञानेनासाधारणज्ञापनपर्य्यवसानात् द्वारफलाभ्यामप्राप्तप्रापणसम्भवात् तथा चोद्देश्यता विधेयता च स्वरूपमात्रपर्यवसन्नैवेत्यर्थः ॥ ४१ ॥

नन्वेवं सत्यादिपदानां लक्षणा न स्यात् अशक्यासहशान्वयप्रतियोग्युपस्थितिरूपायास्तस्या असम्भवात्तद्बीजस्यान्वयानुपपत्तेश्चात्राभावादित्याशङ्क्याह—" लक्षणेति "। वृत्त्या हि पदार्थोपस्थितेर्न तु सैव वृत्तिरतो नोक्तरूपा लक्षणा किं तु शक्यसम्बन्धः स एव प्रकृतेऽप्यस्त्येव उपस्थितिरूपत्वेऽपि लक्षणायास्तात्पर्यानुकूलोपस्थितिरेव सा नोक्तोपस्थितिरूपा अतात्पर्यविषयतादृगुपस्थितौ गतत्वात् नाऽपि बीजानुपपत्तिस्तात्पर्यानुपपत्तेरेव बीजत्वादित्याह—" तात्पर्येति "। तात्पर्यानुपपत्तितः षष्ठ्यर्थे तसू नान्वयासिद्धेरेव बीजत्वं प्रकृते तात्पर्यानुपपत्तिरेव बीजत्वेन संमतेत्यर्थः॥४२॥

DR.RUPAK NATH ( DR.RUPNATHJI )
www.astrology-tantra.com

वाच्यार्थभेदात्सत्यादिगिरां पर्यायता न हि।
आदायाध्यस्तधर्मत्वं ब्रह्मव्यक्तिपरत्वतः॥ ४३॥
त्रिकालाबाध्यताद्यैश्चानृतत्वादेरपोहनात्।
व्यावर्तकत्त्वं प्रत्येकं सत्यादीनां गिरां भवेत्॥ ४४॥
न पदान्तरवैयर्थ्यं स्वरूपैक्यपरत्त्वतः।
व्यावृत्तिभेदबोधित्त्वात्प्रामाणिकतया तथा॥ ४५॥
स(१)त्तादीनां तु जातीनां व्यक्तितादात्म्यकारणात्।

---

सत्यादिपदानां पर्यायतापत्तिं निरस्यति—"वाच्यार्थभेदादिति"। सत्यत्वं ह्यस्मन्मते त्रिकालाबाध्यत्वं परमते कुम्भादिसाधारणी परजातिः सत्यपदप्रवृत्तिनिमित्तं ज्ञानानन्दपदयोरपि अस्मन्मते अन्तःकरणवृत्त्युपधानलब्धभेदचिदानन्दविशेषानुगते ज्ञानत्वानन्दत्वे परमते तु स्वभावलब्धभेदज्ञानानन्दनिष्ठे अपरजाती प्रवृत्तिनिमित्ते तथा च लक्ष्यार्थाभेदेऽपि न पर्यायताशङ्का। ननु कुम्भाद्यनुगतसत्तायां ब्रह्मलक्षणत्त्वायोगः मिथ्यासत्त्यानुगतसामान्याभावात् तथा चानृताद् व्यावृत्त्यसिद्धेः त्रिकालाबाध्यत्त्वं ब्रह्मणि श्रौतमिति स्वमतहानापतेश्चेदित्याशङ्क्याह—"आदायेति"।

ब्रह्मणः सर्वाधिष्ठानतया तद्रूपसत्तायाः सर्वानुस्यूतत्वेन जातित्वव्यपदेशात् कल्पितधर्मत्वमादाय ब्रह्मव्यक्तिकत्त्वाच्च सत्वं त्रिकालाबाध्यत्त्वपर्यवस्यति न तस्य श्रौतत्वहानिः तस्यानृतं प्रत्यधिष्ठानत्त्वेऽपि अनृताश्रितत्वाभावेन तद्व्यावर्त्तकत्त्वसम्भवात् आनन्दत्त्वादिकल्पितजातिसाहित्येन लक्षणोक्तिः परास्तेत्यपि तात्पर्यार्थः॥ ४३॥ ४४॥ स्वरूपमात्रपरत्वेऽपि न पदान्तरवैयर्थ्यं व्यावृत्तिभेदबोधनेन पदसमुदायात्मकस्य वाक्यस्य प्रामाणिकत्वेन च साफल्यमित्यर्थः॥ ४५॥

नन्वेवं निर्द्धर्मकत्वव्याकोपः व्यावहारिकस्य धर्मस्य सत्वेऽपि

---

(१) कस्तबरी १।१।२।

RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

लक्ष्यव्यक्तिरपि ब्रह्म सत्तादि न जहाति नः ॥ ४६ ॥
तात्पर्याविषयत्वेन धर्मा वेदप्रकाशिताः ।
अतात्त्विका यतो वेदप्रामाण्यं तात्विकं मतं ॥ ४७ ॥
सत्यमिथ्यात्त्वभेदोऽपि लोकेऽवान्तरभेदतः ।
वस्तुमात्रपरत्वेऽपि बाधकत्त्वं श्रुतेर्मतं ॥ ४८ ॥
दोषाप्रयुक्तभानत्वं सत्यत्वे हेतुतां भजेत् ।

---

स्वसमानसत्ताकधर्मविरहेण तदुपपत्तेरित्यभिप्रेत्य कल्पतरुकृद्वचनमुदाहरति—" सत्तादीना " मिति । गौर्नित्यो गौरनित्य इत्युभयत्राप्येकदेशान्वयार्थं लक्षणाऽभ्युपगमेपि जातिव्यक्त्योरुभयोरपि तार्किकैर्गोपदार्थत्वाभ्युपगमात्कोति भाव ॥ ४६ ॥ नन्वौपनिषदे पुरुषे धर्मा न प्रत्यक्षेण प्राप्ताः किं तु तत्वावेदकेन वेदेन तथा च कथं व्यावहारिका इति चेन्नेत्याह—" तात्पर्येति " । वेदादापाततः प्रतीतानामपि वेदतात्पर्यविषयत्वाभावादतात्विकत्त्वोपपत्ते. तात्पर्यविषये एव वेदस्य प्रामाण्यं यत्र च तस्य प्रामाण्यं तदेव तात्विकमिति नियम इत्यर्थः ॥ ४७ ॥ वेदतात्पर्याविषयत्वेनातात्विकत्वे स्थिते तत्वावेदकबाध्यत्वव्यावहारिकावेदकबाध्यत्त्वाभ्यां व्यावहारिकप्रातिभासिकव्यवस्थोपपत्तेः न च तत्वावेदकस्य विशेष्यमात्रपरत्वान्न बाधकत्वं विशेषणबुद्धिद्वारकत्त्वेन तन्मात्रपरस्याऽपि बाधकत्वसम्भवात् विशेषणेऽप्यवान्तरतात्पर्याभ्युपगमाद्वेति हृदि निधायाह—" सत्येति " ॥ ४८ ॥

॥ सत्यादिपदानां लक्षणयाऽखण्डार्थपरत्वे ऽनुपपत्तिनिरासः ॥

ननु व्यावृत्तय. सत्या मिथ्या वा नाद्यः व्यावर्त्तकानामपि सत्यत्वापत्तेः व्यावहारिकाणां पारमार्थिकव्यावृत्त्यसाधकत्त्वात् नान्त्यः 'शुक्तेः शुक्तितो व्यावृत्तेर्मिथ्यात्वे शुक्तित्वस्य शुक्तिसमसत्ताकत्व-

RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

बोध्यबोधकयोस्तुल्यसत्ताकत्त्वं न तां व्रजेत् ॥ ४९ ॥
व्यावृत्तिसमसत्ताकं नैव व्यावृत्तिबोधकं ।
स्वप्नस्त्रियाः स्वजानन्दापेक्षयापि सुखान्तरे ॥ ५० ॥
व्यावृत्तिबुद्धिहेतुत्वं हेतोर्व्यावर्त्तकत्वतः ।
व्यावृत्तिस्तात्त्विकी सा ते मन्मते व्यावहारिकी ॥ ५१ ॥
ब्रह्माभिन्नतया साऽस्तु सत्या मिथ्या न वा क्षतिः ।

---

यदनृतव्यावृत्तेर्ब्रह्मणि मिथ्यात्वेऽनृतस्य ब्रह्मसमसत्ताकत्वापत्तेरिति चेदुभयथाऽप्यदोषान्नैवमित्याह—" दोषेति "। व्यावृत्तेर्ब्रह्माभिन्नतया पारमार्थिकत्वेऽपि व्यावर्त्तकं पारमार्थिकमिति कुतः न हि यत्पारमार्थिकबोधकं तत्पारमार्थिकमिति नियमोऽस्ति बोध्यबोधकयोः समसत्ताकत्वस्य घटतदर्थादौ व्यभिचारेण प्रागेव निरस्तत्वात् दोषाप्रयुक्तभानत्वस्य सत्यत्वप्रयोजकत्त्वात् नाऽपि व्यावृत्तिबोधकं व्यावृत्तिसमसत्ताकमिति नियमः स्वप्नाङ्गनादेरपि स्वजन्यसुखापेक्षया सुखान्तरव्यावृत्तिबुद्धिजनकत्वात् कारणस्य कार्यव्यावर्त्तकत्त्वात् सा च व्यावृत्तिस्तव मते पारमार्थिक्येव मम तु मते व्यावहारिकी सर्वथाऽपि प्रातिभासिकव्यावर्त्तकापेक्षयाऽधिकसत्ताकैवेति त्रयाणां योजना ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ नन्वेवं सत्यत्वज्ञानत्वादिधर्माणामपि व्यावृत्तिवद्ब्रह्माभिन्नतया पारमार्थिकत्वं स्यादिति शङ्कामिष्टापत्त्या परिहरति—" ब्रह्मेति "। तदेवं व्यावृत्तेः सत्यत्वे न कोऽपि दोषः। व्यावृत्तेर्मिथ्यात्त्वपक्षेऽपि नानृतस्य ब्रह्मसमसत्ताकत्त्वापत्तिः एकबाधकबाध्यत्वस्योभयत्रापि तुल्यत्वात् व्यावृत्तिबाधकाबाध्यस्यैव प्रतियोगिनो व्यावृत्त्यधिकसत्ताकत्त्वं न त्वेकबाधकबाध्यस्यापीत्यर्थः। स्थूलारुन्धतीन्यायेन पूर्वपूर्वभ्रमनिवृत्तये काल्पनिकोपदेशस्य पञ्चकोशफले दर्शनायेत्याह—।

उपायो बोधसिद्धौ स्यात्सर्वभ्रान्तिनिवृत्तये ॥ ५२ ॥
सत्ये ब्रह्मणि सत्यादिशब्दा व्यावृत्तिद्वारतः ।
पर्यवस्यन्ति तात्पर्यं श्रुतीनां ब्रह्मणि ध्रुवं ॥ ५३ ॥
ब्रह्मबोधोपयोगित्वं सत्यादेर्भावरूपतः ।
अस्थूलत्वादिशब्दानामभावद्वारतो हि तत् ॥ ५४ ॥
वादिनां कुमतप्राप्तातिव्याप्तिविनिवृत्तये ।
सत्यज्ञानादिशब्दानां स्यादपेक्षा समुच्चये ॥ ५५ ॥

---

" उपाय " इति ॥ ५२ ॥

तथा च मीमांसकमते अभूतस्याप्यर्थवादार्थस्य सत्ये प्राशस्त्य इव मिथ्याभूतानामपि व्यावृत्तीनां सत्ये ब्रह्मणि द्वारत्वेन बोधनं युक्तमित्यभिप्रेत्याह—" सत्ये " इति ॥ ५३ ॥ प्रधानस्य ब्रह्मणः प्रतिपत्त्युपयोगिनामानन्दादीनां भावरूपाणा'मा(१)नन्दादयः प्रधानस्ये'त्यनेन स्थूलत्वादीनामभावरूपाणा'मक्ष(२)रधियां त्ववरोधः सामान्यतद्भावाभ्यामौपसदवत्तदुक्तिमित्यनेन च सूत्रेण निर्गुणब्रह्मप्रतिपत्तावेव सर्वशाखासूपसंहारस्य प्रतिपादितत्वेन द्वारसमुच्चयस्यैवेष्टत्वमित्यभिप्रेत्याह—" ब्रह्मबोधेति" "हीति" । श्रुतिसूत्रप्रसिद्धं तत् ब्रह्मबोधोपयोगित्वमित्यर्थः ॥ ५४ ॥ ननु सगुणे ब्रह्मण्युपासनार्थं भवतु शाखान्तरीयगुणोपसंहारो निर्गुणब्रह्मप्रमितौ तु किं शाखान्तरीयगुणोपसंहारेण सत्यादिपदानां प्रत्येकं लक्षकत्वेन लक्ष्यब्रह्मबोधने प्रत्येकमेव समर्थत्वात् सत्यत्वादेश्च प्रत्येकं लक्षणत्वात् न हि प्रकृष्टत्वादिकमिव सत्यत्वादिकमतिव्याप्तमित्याशङ्क्य प्रकृष्टप्रकाशयोरिव सत्यादिपदानामपि कुमतप्राप्तातिव्याप्तिनिवृत्त्यर्थं समुच्चयापेक्षणादित्यभिप्रेत्याह—" वादिनामिति " ॥५५॥

---

(१) ब्र० सू० ३ । ३ । ११ । (२) ब्र० सू० ३ । ३ । ३३ ।

DR. RUPAK NATH
www.astrology-tantra.com

सत्येनानृतव्यावृत्तब्रह्मबोधनमन्तरां ।
ब्रह्म विज्ञानमानन्दं न सिद्ध्येच्छून्यतः पृथक् ॥५६॥
एवमेकैकशब्दस्याभावेऽतिव्याप्तितर्कणं ।
व्यावृत्तिस्त्वार्थिकी ज्ञेया न शाब्दी द्वारभावतः ॥५७॥
लक्ष्यार्थभेदाभावेऽपि व्यवच्छेद्यविभेदतः ।
विज्ञानानन्तपदयोः पर्यायव्यर्थते न हि ॥ ५८ ॥
एवं समाहितं सम्यक्पदे स्वीकृत्य लक्षणां ।
के चित्तु लक्षणां वाक्ये प्राहुर्नैव पदे तु सा ॥५९॥
यथा घोषो गभीरायां नद्यामित्यत्र च द्वयोः ।

---

तत्प्रकारमाह— " सत्येनेति " ॥ ५६ ॥

एतत्प्रकारमन्यथाऽप्यतिदिशति— " एव मिति " । तथा च सत्यत्वादिकमनृतादिव्यावृत्तिद्वारा शून्यवादादिव्यावृत्तब्रह्मसिद्धेरुपाय इति भावः । ननु व्यावृत्तिः किं ब्रह्मविशेषणत्वेन बोध्या स्वतन्त्रा वा आद्ये सखण्डार्थत्वं द्वितीये ब्रह्मजिज्ञासुं प्रति तदुपदेशोऽनर्थक इत्याशङ्क्य व्यावृत्तिर्यद्यपि विशेषणतयैवार्थिकबोधे भासते तथाऽपि न शाब्दबोधे सखण्डार्थत्वं 'यश्चार्थादर्थो न स चोदनार्थ' इति न्याया'न्मानान्तरादपोहस्तु न शाब्दस्तेन स स्मृत' इति वार्तिकोक्तेश्चेत्यभिप्रेत्याह— " व्यावृत्तिरिति " ॥ ५७ ॥

आनन्दबोधाचार्यसंमतिमाह— " लक्ष्यार्थेति " ॥ ५८ ॥ उक्तमनूद्य लक्षणायां पक्षान्तरमाह— " एवमिति " ॥ ५९ ॥ तत्प्रकारं प्रदर्शयति— " यथेति " । यथा गभीरायां नद्यां घोष •

RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

गभीरनद्योरन्योन्यमन्वयज्ञानतः परः ॥ ६० ॥
विशिष्टार्थैकसम्बन्धि तीरं वस्त्वेव लक्ष्यते ।
तथैव प्रकृतेऽन्योन्यविशिष्टार्थधियः परं ॥ ६१ ॥
तत्सम्बन्धि परं ब्रह्माखण्डं वस्त्वेव लक्ष्यते ।
एकस्मिन्ब्रह्मणि द्वारीभूताया अपि तद्धियः ॥ ६२ ॥
मिलित्वा जननाच्छब्दैर्लक्षणातोऽप्यखण्डधीः ।
तात्पर्यज्ञापकाभावात्प्रत्येकं न पृथक्पदे ॥ ६३ ॥
लक्षणा समुदाये स्यात्तस्माद्वाक्येऽपि लक्षणा ।
एवं पदार्थे तात्पर्यान्वयासिद्धिकृता पदे ॥ ६४ ॥
लक्षणा तद्द्वयासिद्ध्या वाक्यार्थे वाक्य इष्यते ।

---

इत्यत्र गभीरनद्योः परस्परमन्वयबोधानन्तरं विशिष्टार्थसम्बन्धि तीरं लक्ष्यते तथा प्रकृते परस्परविशिष्टार्थबोधानन्तरं तत्सम्बन्ध्यखण्डं लक्ष्यते तथा च न वैयर्थ्यं न च तत्राऽपि प्रत्येकं लक्षणा तथा सति गभीरतीरनदीतीरादिलाभेन विशिष्टतीरबुद्धिर्न स्यात् । न च तत्र गभीरनदीपदयोरिवेह सत्यादिपदानां परस्परमन्वयबोधकत्वं त्वन्मते नास्तीति वाच्यम् । एकस्मिन्ब्रह्मणि द्वारीभूतस्य परस्परान्वयबोधस्य सत्यादिपदैर्मिलित्वा जननात् उत्तरकालं लक्षणयाऽखण्डबोधस्याभ्युपगमादिति सार्द्धद्वयतात्पर्यार्थः ॥ ६० ॥ ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ तथा च समुदाये एव लक्षणा न प्रत्येकं तात्पर्य ज्ञापकाभावादित्याह—“ तात्पर्येति ” ॥ ६३ ॥ पदार्थे तात्पर्यान्वयानुपपत्तिभ्यां लक्षणा पदे वाक्यार्थे तद्द्वयानुपपत्त्या वाक्ये इत्युभयत्र फलितमाह—“ एव ” मिति ॥ ६४ ॥

॥ वाक्ये लक्षणोपपत्तिः ॥

ननु सर्वपदानां लक्षकत्वे वाक्यार्थानुभवो न स्याल्लाक्षणिक-

DR.RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

वाक्यं लाक्षणिकत्वेऽपि भवेदेवानुभावकम् ।
अज्ञातज्ञापकत्वाच्च वेदान्ता अनुभावकाः ॥ ६५ ॥
एवं च तत्वमस्यादिमहावाक्यानुमानकम् ।
निर्दोषं सोऽयमित्यादिदृष्टान्तोऽत्रानुकूलकृत् ॥ ६६ ॥
तत्र तद्देशकालादिविशेषणविवर्जनात् ।
विशेष्यमात्रमेकं हि बोध्यतेऽखण्डितार्थकम् ॥ ६७ ॥
प्रत्यभिज्ञा पदार्थोत्थभेदभ्रमनिवर्तिका ।
नाभिज्ञा स्यात्पदार्थैक्यविषयत्वेऽपि सा प्रमा ॥ ६८ ॥

---

स्याननुभावकत्वादिति तत्राह—“ वाक्यमिति ” । एवं च पदशक्तेः पदार्थोपस्थितौ पर्यवसानात्, लक्षणयाऽपि उपस्थितानां च पदार्थानामन्वयानुभावकत्वात्सर्वपदलाक्षणिकत्वेऽपि न वेदान्तवाक्यानामन्वयानुभावकत्वानुपपत्तिरिति भावः ॥ ६५ ॥

॥ सत्याद्यवान्तरवाक्याखण्डार्थतोपपत्तिः ॥

एवं च तत्त्वमस्यादिमहावाक्यपक्षकानुमानमपि निर्दोषमित्याह—“ एवं चेति ” । न च सोऽयं देवदत्त इत्ययं दृष्टान्तः साध्यविकलः विशिष्टाभेदस्य बोधयितुमशक्यत्वादित्यत आह—“ सोयमिति ” ॥ ६६ ॥ उभयविशेषणपरित्यागे विशेष्यमात्रमभिन्नं बोध्यते इति सिद्धमखण्डार्थत्वमित्याह—“ तत्रेति ” द्वाभ्यां । तत्तेदन्तोपस्थितिद्वारकाभेदबोधस्यैव भेदभ्रमविरोधितया नान्यतरपदवैयर्थ्यं प्रत्यभिज्ञाप्रत्यक्षस्याऽप्यभिज्ञाद्वयोपस्थितस्वरूपातिरिक्ताविषयत्वेऽप्युभयोपस्थितिद्वारकाभेदबोधनेन भेदभ्रमनिवर्त्तकत्वं तत्समानार्थं च वाक्यमेतदिति न विशिष्टपरमित्यर्थः ॥ ६७ ॥ ६८ ॥

DR. RUPAK NATH ( DR. RUPAK NATH
www.astrology-tantra.com

एवं तत्वमसीत्यस्य सत्यादिपदवाक्यतः ।
प्रमेयैक्येऽपि भेदान्ध्यनाशकत्वेन मानता ॥ ६९ ॥
उ(१)पाधिभेदभिन्नोऽर्थो येनैकः प्रतिपाद्यते ।
तदपि स्यादखण्डार्थं महत्वं कुम्भखं यथा ॥ ७० ॥
तथा तत्त्वमसीत्येवमखण्डार्थावबोधकम् ।
उपाधिभेदभिन्नेऽर्थेऽप्यैक्यस्य प्रतिपादनात् ॥ ७१ ॥
सत्यज्ञानादिगीरेतत्संसर्गव्यतिरेकिणी ।
अर्थे प्रमाणं मानत्वान्नयनादिप्रमाणवत् ॥ ७२ ॥
मानं वेदान्तवाक्यानि निर्गुणाखण्डसाधनात् ।
निर्गुणत्वं च तस्योक्तं श्रुत्या युक्तिसहायया ॥ ७३ ॥

---

एवं तत्वमसीति वाक्यस्य सत्यादिवाक्यात्तत्पदाच्च प्रमेयावैलक्षण्येऽपि धर्मिद्वयपरामर्शित्वेन भेदभ्रमनिवर्त्तकत्वात् प्रामाण्यमित्याह—" एवमिति " ॥ ६९ ॥ कल्पतरुकृद्वचनं तत्रोदाहरति—" उपाधीति " ॥ ७० ॥ प्रकृते फलितमाह—" तथेति " ॥ ७१ ॥ चित्सुखाचार्योक्त्याऽपि तद्द्रढयति—"एव" मिति । सत्यादिवाक्यमेतत्पदार्थसंसर्गव्यतिरिक्त एवार्थे प्रमाणमिति सावधारणं साध्यं विवक्षितं तेन संसर्गातिरिक्तसंसर्गिण्यपि प्रामाण्याङ्गीकारान्न सिद्धसाधनमिति भावः ॥ ७२ ॥ फलितमुपसंहरति—" मान " मिति ॥ ७३ ॥

॥ तत्त्वमसीत्यादिमहावाक्याखण्डार्थत्वोपपत्तिः ॥

(१) कल्पतरौ १ । १ । २ ।

www.astrology-tantra.com
RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )

निर्गुणस्तावदात्माऽस्ति कैवल्यश्रुतिसद्गिरा ।
उपास्त्यै सत्यकामाद्या गुणास्तत्र समर्पिताः ॥ ७४ ॥
अन्यशेषतया तेषां तत्परत्वं न तच्छ्रुतेः ।
निर्गुणप्रकृतस्थाया अद्वितीयपरत्वतः ॥ ७५ ॥
तत्परत्वेन सत्त्वैक्यबोधिनोः श्रुतिवाक्ययोः ।
प्राबल्यान्न निषेध्यत्त्वमसद्भेदादिबोधिभिः ॥ ७६ ॥
न ब्रह्मण्यनुमानं वा सद्धर्मादिप्रमाणकम् ।
सिद्धसाधनदोषेण दूषितत्वान्निरर्थकम् ॥ ७७ ॥

---

कैवल्यश्रुत्या तावदात्मा निर्गुण इत्याह—“ निर्गुण ” इति । ननु ‘बृहन्तोऽस्य धर्मा’ इति श्रुत्या, ब्रह्म धर्मवत् पदार्थत्वादित्याद्यनुमानैश्च, स्वसमानसत्ताकधर्मवद्ब्रह्मेति चेन्नैवं न तावत् श्रुत्या सगुणत्वसिद्धिः सगुणप्रकरणस्थाया उपास्तिविधिविषयविशेषणसमर्पकत्वेन तत्परत्वाभावात्, न चापूर्वत्वात् सत्यकामादौ विशेषणे तात्पर्यं अपूर्वत्वेऽन्यशेषस्य अतत्परत्त्वदर्शनात्, निर्गुणप्रकरणस्थायास्तु अद्वितीयब्रह्मप्रतिपत्त्यनुकूलनिषेधापेक्षितविषयसमर्पकतया अन्यथासिद्धेरिति द्वयोरर्थः ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ असद्वाक्यभेदवाक्ययोस्तु न ब्रह्मसत्वैक्यनिषेधकता सत्वैक्यबोधकयोरेव तत्परत्वेन प्राबल्यादित्याह—“ तत्परत्वेनेति ” ॥ ७६ ॥ ब्रह्म धर्मिसत्तासमानसत्ताकधर्मवत्पदार्थत्त्वाद्भाववद्वा घटवदित्याद्यनुमानमपि न ब्रह्मणि तात्विकधर्मनासाधनायालमित्याह—“ नेति ” धर्मिपदस्य यत्किंचिद्धर्मिपरत्वे समसत्ताककल्पितधर्मत्वेन सिद्धसाधनं ब्रह्मपरत्वं साध्याप्रसिद्धिः घटादिधर्मे ब्रह्मसमानसत्ताकत्वादेरप्रसिद्धेरित्यादिदूषणग्रस्तत्वान्नानुमानं तत्र प्रमाणमित्यर्थः ॥ ७७ ॥

RUPNATHJI (DR.RUPAK NATH)
www.astrology-tantra.com

ईश्वरस्तु सदावाप्तसमस्तशुभसद्गुणः ।
स्वीकृतोऽस्माभिरप्यत्र मायावित्वेन कालतः ॥ ७८ ॥
न निर्द्धर्मकतायां स्यात्कालसम्बन्ध आत्मनि ।
हेत्वसिद्धेर्न शुद्धस्य पक्षीकरणसम्भवः ॥ ७९ ॥
आनन्दादेस्तु नित्यत्वात्तत्प्रेप्सायाश्च तत्र च ।
सामर्थ्यस्य त्वया वक्तुमशक्यत्वान्न साधनम् ॥८०॥
सद्धर्मकानुमाने ते सर्वत्रैवास्ति दूषणम् ।
न ब्रह्मसमसत्ताकधर्मे मानं तवानुमा ॥ ८१ ॥
अपरब्रह्मविषया श्रुतिर्निर्द्धर्मकश्रुतः ।

---

ईश्वरः सदाऽवाप्तसमस्तकल्याणगुणः सदा प्रेप्सुत्वे सति तत्र शक्तत्वात् यो यदा यत्प्रेप्सुर्यत्र शक्तः स तदा तद्वान् यथा चैत्रः ईश्वरः सदा त्यक्तसमस्तदोषः सदा तज्जिहासुत्वे सति तत्त्यागे शक्तत्वात् यश्चैवं स तथैव यथा चैत्रः इत्याशङ्क्य परिहरति— "ईश्वर इति"। ईश्वरः सदाऽवाप्तसमस्तकल्याणगुणः इत्यत्र कालं व्याप्य आप्तगुणत्वस्यास्माभिरप्यङ्गीकारात् न हि निर्द्धर्मिकतायां सत्यां कालसम्बन्धोऽस्ति किं च शुद्धस्य पक्षीकरणे हेत्वसिद्धिः उपहितस्य पक्षीकरणे अर्थान्तरं स्वाभिन्नाप्तसमस्तकल्याणगुणत्वेन सधर्मकत्वायोगाच्च सिद्धसाधनाच्च कल्याणगुणानामानन्दादीनां नित्यत्वेन तत्प्रेप्सायास्तत्र सामर्थ्यस्य च त्वयाऽपि वक्तुमशक्यत्वाच्च सदा त्यक्तसमस्तदोषत्वे साध्ये चरमवृत्तिपर्यन्तं तत्त्यागे सामर्थ्याभावेन हेत्वसिद्धेः यदा तु तत्सामर्थ्यं तदा त्यक्तदोषत्वमिष्टमेवेत्यादिदोषदुष्टत्वात्त्वदुक्तानुमानं न सङ्गच्छते तस्मान्नानुमानं ब्रह्मसमसत्ताकधर्मे प्रमाणमिति च योजना ॥७९॥८०॥८१॥

॥ ब्रह्मणि तात्त्विकधर्मसाधकानुमानानामाभासत्त्वप्रदर्शनम् ॥

सगुणश्रुतिव्यवस्थामाह— "परेति"। ननु सगुणातिरि-

RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

अविरोधितयोपास्त्यै गुणानां स्यात्समर्पिका ॥ ८२ ॥
नि(१)र्विशेषं परं ब्रह्म साक्षात्कर्तुमनीश्वराः।
ये मन्दास्तेऽनुकंप्यन्ते सविशेषनिरूपणैः ॥ ८३ ॥
वशी(२)कृते मनस्येषां सगुणब्रह्मशीलनात्।
तदेवाविर्भवेत्साक्षादपेतोपाधिकल्पनम् ॥ ८४ ॥
सदेवासीदसद्वेति श्रुती कारणकार्ययोः।
विषयीकुरुतः सत्वासत्वे न ब्रह्मतत्परे ॥ ८५ ॥
शून्यत्वस्यापुमर्थत्वादानन्दावाप्तिरिष्यते।
मुक्तिस्तस्मादसन्नेवेत्यादिश्रुतिरतत्परा ॥ ८६ ॥

---

क्तस्य परब्रह्मणोऽद्याप्यसिद्धिः स्वतपक्ष तात्विकगुणवद्यक्त्यन्तरस्याभावार्त्किाविषयत्वं च सगुणश्रुतेरिति चेत्तत्राह—" निर्द्धर्मकश्रुतेरिति "। तात्विकत्वपर्यंतस्य सगुणश्रुत्या अविषयीकरणान्निर्द्धर्मकत्वश्रुत्या शुद्धब्रह्मसिद्धेरित्याशयः ॥ ८२ ॥ तत्र कल्पतरुकृद्वचनद्वयमुदाहरति—" निर्विशेषमिति " ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ ननु 'सदेव सोम्येदमग्र आसीदसद्वा इदमग्र आसीदिति' श्रुती अपि परापरब्रह्माविषये स्यातामिति नेत्याह—" सदेवेति "। तत्रेदमिति प्रपञ्चस्य प्रकृतत्वेन ब्रह्मपरत्वस्य वक्तुमशक्यतया प्रपञ्चस्यैव पूर्वं कारणात्मना सत्वं कार्यात्मना असत्वं विषयीकुरुत इत्यर्थः ॥ ८५ ॥ नन्वेवं 'अ(३)सन्नेव स भवति। असद्ब्रह्मेति वेद चे'दिति श्रुतिरपि नासत्वसिद्ध्यर्था किं तु शून्यनापत्तिरूपपरममोक्षपरेति स्यादिति चेन्नेत्याह—" शून्यत्वस्येति " ॥ ८६ ॥

---

(१) कल्पतरौ १।१।१५। (२) कल्पतरौ १।१।१५।
(३) तै० २।६।१



www.astrology-tantra.com
RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )

ज्ञानादीनां स्वरूपत्वाद् गुणत्वासिद्धिरेव हि ।
तत्स्वरूपातिरिक्तानामाबोधं नित्यता मता ॥ ८७ ॥
औपाधिकगुणोक्त्याऽपि श्रुतिः प्रामाण्यमश्नुते ।
मायाविदर्शिता मायानुवादिन्यो गिरो यथा ॥ ८८ ॥
स्वाभाविकीति वाक्यं तु लोके योग्यर्जिताद् गुणात् ।
पृथक्कोक्त्या न चिद्धातौ स्वाभाविकगुणान्जगौ ॥ ८९ ॥

---

ननु 'ज्ञानं नित्यं क्रिया नित्या बल नित्यं परात्मन' 'एष नित्यो महिमा ब्राह्मणस्ये'त्यादि श्रुत्या ब्रह्मज्ञानादीनां नित्यत्वप्रतिपादनात्सगुणत्वमित्यत आह—"ज्ञानादीना"मिति । ज्ञानादीनां स्वरूपतया गुणत्वासिद्धि. स्वरूपातिरिक्तानां तु चरमसाक्षात्कारपर्य्यन्तस्थायितया नित्यत्वोपचारात् 'अपामसोमममृता अभूमे'त्यादौ अमृतशब्दस्य 'आभूतसप्लवं स्थानममृतत्वं हि भाष्यत' इति पौराणिकोक्ताभूतसंप्लवपरत्ववदिति तात्पर्यार्थः ॥ ८७ ॥ नन्वौपाधिकत्वस्य सोपाधिकाध्यस्तरूपत्वे श्रुत्यप्रामाण्यापत्ति. सत्यत्वश्रुतिविरोधश्च अन्तःकरणादिरूपोपाधिसृष्टेः प्रागेव ईक्षितृत्वादिश्रुतेरुपाध्यसम्भवश्चेत्याशङ्क्य मायाविदर्शितमायानुवादिवाक्यवत्स्वतो भ्रमजनकत्वाभावेन अप्रामाण्यानापत्ते. सत्यत्वश्रुतिस्त्वन्यथैव सिद्धा सृष्टेः पूर्वमन्तःकरणाभावेऽप्यविद्याया उपाधेः सत्वान्मैवमित्यभिप्रेत्याह—"औपाधिकेति" ॥ ८८ ॥ ननु गुणानामौपाधिकत्वे 'स्वाभाविकी ज्ञानबलक्रिया चे'त्यनेन विरोधः स्यादित्याशङ्क्याह—"स्वाभाविकीति"। अस्मदादाविव भौतिकोपाधिकत्वाभावेन योगिष्विव योगार्जितत्वाभावेन स्वाभाविकत्वोक्तेः । न च सङ्कोचाभावः निर्गुणवाक्यस्यैव सङ्कोचकत्वादित्यर्थः ॥ ८९ ॥ नन्वेवं

DR.RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

सत्यंतत्वमसीत्यादी ब्रह्मसत्वैक्यतत्परे ।
सत्वैक्ये तात्विके ब्रूतः श्रुती प्रामाण्यनिश्चयात् ॥९०॥
न पूर्वतन्त्रवच्चात्र व्यवस्था श्रुतिवाक्ययोः ।
तत्र प्रामाण्यहेतुत्वं समकक्षतया मतम् ॥ ९१ ॥
इह त्वेकतरस्याऽस्तिप्राबल्यं तत्परत्वत ।
इतरस्य तु दौर्बल्यमिति वैषम्यमेतयोः ॥ ९२ ॥

---

'सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म' 'तत्त्वमसी'त्यादिश्रुत्युक्तब्रह्मसत्त्वैक्यादिकमपि तात्त्विकं न स्यादिति चेन्नैवमित्याह—" सत्यमिति " । निर्गुणश्रुतिविरोधस्यात्र तत्त्रामाणाभावादिति भाव ॥ ९० ॥

ननु श्रुत्योर्विरोधे तैकस्यातात्त्विकविषयत्वं शास्त्रविरोधे सङ्कोचविकल्पादिना उभयत्रामाण्यस्य पूर्वतन्त्रे व्याकरणे च निर्णीतत्वात् तथा हि ददामाध्यायस्यप्राप्तबाधे प्रकृतिवत्कुर्यादित्यादिरूपकॢप्तस्य चोदकस्य कृष्णलादाववघातवर्जमित्यादिरुपः सङ्कोच एव एवं तार्तीयेऽपि अप्राप्तबाधे 'गार्हपत्य'मिति द्वितीयाश्रुत्यनुसारेणेन्द्रशब्दयुक्तमन्त्रलिङ्गस्य गार्हपत्ये गौणत्वादिकमेव, व्याकरणेऽपि परेण पूर्वस्य नित्येनानित्यस्येत्यादिबाध उक्तस्तत्रापि सङ्कोच एव तथा चोक्तं को हि मीमांसको ब्रूयाद्विरोधे शास्त्रयोर्मिथ. । एकं प्रमाणान्तरत्त्वप्रमाणं भवेदि'त्याशङ्क्य निरस्यति—" नेति " । तत्र शास्त्रयोः प्रामाण्ये समानकक्षतया एकतरस्यात्यन्तिकबाधायोगात्सङ्कोचेन विकल्पेन वा पाक्षिकं प्रामाण्यमाश्रितं इह त्वेकतरस्य तत्परतया प्रबलत्त्वात् इतरस्य चातत्परत्वेन दुर्बलतया वैषम्यात्पूर्वतन्त्रोत्तरतन्त्रयोर्महद्वैषम्यमिति द्वयोर्योजना ॥ ९१ ॥ ९२ ॥

॥ पूर्वोत्तरतन्त्रयोर्वैषम्यकथनम् ॥

RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

विकारशब्दान्नेत्यादिसूत्ररीत्याऽपि नात्र सा।
व्यवस्था यत एकस्मिंस्तात्पर्यं श्रुतिसद्गिराम् ॥ ९३ ॥
न नत्कासेडितीवात्र शब्दशास्त्रव्यवस्थया।

---

ननु अत्रापि 'विका(१)रशब्दान्नेति चेन्नोभयलिङ्गमप्यविरोधात्' 'गौण्य(२)सम्भवा'दित्यादौ शास्त्रयोर्विरोधे तात्त्विकार्थान्तरपरतोक्ता नत्वारोपितार्थता अन्यथेक्षत्याद्यधिकरणे सिद्धान्तसाधकानामीक्षणादीनां साङ्ख्याद्यभिमतप्रधानादावारोपासम्भवेन प्रधाननिराकरणादि न सिद्ध्येदित्याशङ्क्य विकारशब्द इत्यादौ न विरोधेन तात्त्विकार्थान्तरपरत्वमर्थः किं तु [illegible]प्रधाने ब्रह्मणि अवयवत्वासम्भवेन पुच्छपदमुपचरितमित्यर्थः गौण्यसम्भवादिति पूर्वपक्षसूत्रेऽपि 'आत्मन आकाशः सम्भूत' इति श्रुतिस्तु गौणी आकाशोत्पत्तिः कारणासम्भवादित्यर्थः न तु तात्त्विकार्थान्तरविषयत्वं उपदेशभेदादित्यादौ दिवि दिव इति सप्तमीपञ्चमीभ्यामाधारत्वावधित्वयोः प्रतीतेरुपदेशभेदेन न [illegible]र्दिष्टब्रह्मणः प्रत्यभिज्ञानमस्तीति प्राप्ते एकस्मिन्नपि श्येने वृक्षाग्रे श्येनः वृक्षाग्रात् श्येन इति निर्देशदर्शनात् एकस्मिन्नेव ब्रह्मणि उभयरूपाविरोध इत्यर्थः न तु तात्त्विकार्थान्तरपरत्वं चतनथा च चेतन एवेक्षितृत्वदर्शनाच्चेतने ब्रह्मणि आरोपो युज्यते नाचेतन इति न सिद्धान्तक्षतिरित्याशयेन समाधत्ते—"विकारेति" ॥ ९३ ॥

ननु मृडमृदेत्यादेर्यथा नत्कासेडिति निषेधनिषेधत्वं तद्वत्सगुणवाक्यानामपि निर्गुणवाक्यबाधकत्व किन्नस्यादिति चेन्नेत्याह—"न नेति"। दृष्टान्ते पर्युदासाधिकरणन्यायेन मृडमृदेत्याद्युक्त[illegible]त्वरहितसंदृक्काप्रत्ययकित्वनिषेधपरत्वेनैकवाक्यतायां वाक्यभेदेन निषेधनिषेधकत्त्वाकल्पनात् न च प्रकृतेऽपि पर्युदासार्थत्वं नेति

---

(१) ब्र० सू० १।१।१३। (२) ब्र० सू० २।३।३।

DR. RUPAK NATH
www.astrology-tantra.com

पर्युदासोऽस्ति नेतीति श्रुत्या सर्वं निषिध्यते ॥ ९४ ॥
द्वा सुपर्णेतिवेदार्थो बुद्धिजीवपरत्वतः ।
न जीवब्रह्मणोर्भेदस्तथा पैङ्ग्येऽपि वर्णनात् ॥ ९५ ॥
आत्मैवेदमिति श्रौतं ब्रह्मसार्वात्म्यतत्परं ।
वाक्यं तद्विश्वमिथ्यात्वे पर्यवस्यति सर्वथा ॥ ९६ ॥
मिथ्यात्वब्रह्मसत्वात्मब्रह्मैक्यानां श्रुतेर्गिरा ।
सिद्धत्वान्नाऽत्र कस्याऽपि सामर्थ्यं तन्निषेधने ॥ ९७ ॥
अविद्यासिद्धसाक्षित्वाद्यनुवादेन निर्गुणे ।
श्रुतीनामस्ति तात्पर्यं ताटस्थ्यद्वारतो मतम् ॥ ९८ ॥
अन्यशेषतया नास्ति सार्वज्ञ्यादिनिवेदने ।

---

नेतीति वाप्सायाः प्रसक्तसर्वनिषेधकतया विशेषपरिशेषायोगेन पर्युदासस्याऽऽश्रयितुमशक्यत्वादित्यर्थः ॥ ९४ ॥ द्वा सुपर्णेति वाक्यस्य न भेदपरत्वमित्याह—" द्वेति " ॥ ९५ ॥ 'स एवेदं सर्वं'"मात्मैवेदं सर्वं'मित्यादेस्तात्पर्यमाह—"आत्मेति" ॥९६॥ विश्वमिथ्यात्वब्रह्मसत्त्वादीनां ज्ञाननिवर्त्यत्वादिनाऽऽक्षिप्तानां न केनापि निषेद्धुं सामर्थ्यमित्याह—" मिथ्यात्वेति " । सत्यस्य ज्ञानादनिवृत्ते असत्यस्याधिष्ठानत्वायोगात् भेदे सार्वात्म्यायोगाच्चेत्यर्थः ॥ ९७ ॥ नन्वौपनिषदस्य ब्रह्मण. सार्वज्ञ्यादिकमनुमानादिसिद्धमित्याशङ्क्याविद्यासिद्धसाक्षित्वाद्यनुवादेन तटस्थलक्षणद्वारकब्रह्मपरतया गुणपरत्वाभावाद् गुणनिषेधतोकपपत्तेर्मैवमित्याह—" अविद्येति " ॥ ९८ ॥

www.astrology-tantra.com
DR. RUPNATHJI (DR. RUPAK NATH)

तात्पर्यं वाक्यभेदः स्यादन्यथा श्रुतिमौलिषु ॥ ९९ ॥
'यः सर्वज्ञ'इति श्रुत्या ब्रह्मतत्वं निवेदितम् ।
तटस्थलक्षणद्वारा तात्पर्यान्नाप्युपासनम् ॥ १०० ॥
न च ज्ञाने विधिः शङ्क्योऽप्यग्रे तस्य निषेधनात् ।
आत्मप्रावण्यसिद्ध्यै तत्कथनं कुत्र चिन्त्यताम् ॥ १ ॥
अथ योऽन्यामिति श्रुत्या भेददर्शननिन्दया ।
नोपास्तिरुच्यते तत्र न सवेदेति निन्दनम् ॥ २ ॥
आनन्दाद्या इति न्यायेऽखण्डवाक्यार्थसिद्धये ।
वाच्यार्थस्योपसंहारान्नोपास्यत्वस्यसम्भवः ॥ ३ ॥

---

विपक्षे बाधकमाह—"अन्यथेति" ॥ ९९ 'यः सर्वज्ञः स सर्ववि'दित्यादावुपासनाप्रकरणस्थत्वाभावेऽपि तटस्थलक्षणद्वारा ब्रह्म प्रतिपादने तात्पर्येण विशेषणे अतात्पर्यात् अन्यथा एकविज्ञानेन सर्वविज्ञानप्रतिज्ञाविरोधापत्तिः स्यादित्याह—" यः सर्वज्ञ " इति ॥ १०० ॥ न च ज्ञाने विधि स्तस्य निराकरिष्यमाणत्वान्न च विधिश्रुत्यानर्थक्यं बाह्यविषयात्परावर्त्य चित्तस्य प्रत्यगात्मप्रवणतासम्पादकत्वादित्याह—" न चेति " ॥ १ ॥ ' अथ योन्यां देवतामुपास्ते' इत्यादेर्न स वेदेत्त्युत्तरवाक्यपर्यालोचनया भेददर्शननिन्दापरतयोपास्तिपरत्वशङ्कैव नास्तीत्याह—" अथेति " ॥ २ ॥ ' आनन्दादयः प्रधानस्येति ' सूत्रेण लक्ष्याखण्डवाक्यार्थसिद्ध्यर्थं वाच्यवाक्यार्थोपसंहारस्य क्रियमाणत्वेनोपास्यत्त्वानुपपत्तिरित्याह—" आनन्दाद्या " इति ॥ ३ ॥ व्यतिहारसूत्रे च

RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

उपास्तिविषयत्वेऽपि तात्त्विकत्त्वं न चैक्यवत् ।
सत्यकामत्वमुख्यानां न चैक्यस्याऽप्यवस्तुता ॥ ४ ॥
विशिष्टविषयोपास्तिर्निर्विशेषे न सम्भवेत् ।
आनन्दादेरतो ब्रह्मरूपत्वादेव वस्तुता ॥ ५ ॥
भ्रमत्वं सगुणोपास्तेर्विशिष्टविषयत्वतः ।
न निर्गुणाद्युपास्तेस्तन्निर्विशेषास्पदत्वतः ॥ ६ ॥

---

तद्योऽहं सो ऽसौ ऽयो सो सौऽहम्' मित्युक्तस्य जीवे ईश्वराभेदध्यानस्येश्वरे वा जीवाभेदध्यानस्योपासनाप्रकरणपठितश्रुत्युक्तस्य जीवेश्वराभेदः सगुणोपासनरूपेणापि दृढीकर्त्तव्य इत्येवं परतया ऐक्यस्योपासनाविषयत्वेऽपि न सत्यकामत्वादिवदतात्त्विकत्वं न चैक्यवत्सत्यकामत्वादीनां तात्त्विकता वा अनुपासनाप्रकरणस्थतत्परवाक्यबोधितत्वाबोधितत्वाभ्यां विशेषादित्यभिप्रेत्याह—"उपास्तीति" ॥ ४ ॥

नन्वानन्दादिवाक्यसत्यकामादिवाक्ययोर्मानान्तराविरोधे तदप्राप्तौ च उपासनाविध्यश्रवणे निर्गुणश्रुतिविरोधे च तुल्ये ऽपि आनन्दादयस्तात्त्विकाः सत्यकामत्वादयस्त्वतात्त्विका इति कथं व्यवस्थेति तत्राह—" विशिष्टेति "। आनन्दादीनां ब्रह्मरूपत्वेन निर्गुणश्रुताविरोधाभावस्य व्यवस्थापकत्वमित्यर्थः ॥ ५ ॥ ननु सगुणोपास्तेर्भ्रमत्वे निर्गुणोपास्तेरपि भ्रमतया सम्यक्फलासिद्धिर्ब्रह्मासिद्धिश्च स्यादिति नेत्याह—"भ्रमत्वमिति"। स्वयं भ्रमोऽपि संवादी यथा सम्यक् फलप्रद.। ब्रह्मतत्त्वोपासनाऽपि तथा मुक्तिफलप्रदेत्युक्ते निर्गुणोपास्तेः सम्यक्फलप्रदत्वं नाऽपि ब्रह्मासिद्धिरुपास्तेर्भ्रमत्वेऽपि शब्दाज्जायमानस्य ज्ञानस्य प्रमात्वादित्यर्थः ॥ ६ ॥

DR.RUPAKNATH JI (DR.RUPAKNATH
www.astrology-tantra.com

विशेष्यांशस्य सत्वेऽपि न सत्यत्वं विशेषणे ।
अतः सगुणवाक्यं नो गुणानां वस्तुतापरम् ॥ ७ ॥
त्रिमात्रालम्बनोपाधिविशिष्टस्यैव वस्तुनः ।
ध्येयत्वोक्त्या न शुद्धे सा नेक्षतेःस्याद्विरोधिता ॥ ८ ॥
य आत्मा ध्वस्तपाप्मेति गुणाः सन्ति स्वरूपगाः ।
जिज्ञास्या न बहिर्भूताः सत्यकामाद्यो गुणाः ॥ ९ ॥

---

सगुणवाक्यस्य विशेष्यांशसत्यविषयत्वेऽपि विशेषणांशासत्यविषयत्वान्न गुणादितात्विकत्वपरत्वमित्याह—"विशेष्यांशस्येति" ॥ ७ ॥ नन्वीक्षतिकर्मेति सूत्रे ईक्षतिध्यानयोरेकः कार्यकारणभूतयोः । अर्थ आत्सर्गिकं तत्वविषयत्वं तथेक्षते'रितिभामत्यां 'परात्परं पुरि शयं पुरुषमीक्षते' इतीक्षतिकर्मणः परब्रह्मण एव 'परं पुरुषमभिध्यायीते'ति अभिध्यातव्यत्वेनोक्त्या तद्विरोध इत्याह—" त्रिमातेति " । त्रिमात्रोंकारालम्बनोपाधिविशिष्टस्यैव ध्येयत्वोक्त्या-शुद्धविषयत्वाभावेन विरोधाभावात् विशेष्यांशमादायेक्षतिसमानकर्मत्वोपपत्तिरित्यर्थ ॥ ८ ॥

ननु 'यआत्मा अपहतपाप्मे'त्यारभ्य 'सत्यकामः सत्यसंकल्पः सोऽन्वेष्टव्यः स विजिज्ञासितव्य' इति सत्यकामत्वादीनामपहतपाप्मत्वादिभिः सह जिज्ञास्यत्वश्रवणाज्ज्ञेयत्वमित्याशङ्कापहतपाप्मत्वादीनां स्वरूपतया जिज्ञासाकोटिप्रवेशेऽपि सत्यकामत्वादीनां स्वरूपबहिर्भावेन जिज्ञास्यत्वायोगात्तच्छब्देन तेषामपरामर्शात् यश्चित्रगुर्लम्बकर्णश्च तमानयेत्यादौ योग्यविशेषणस्यैव तच्छब्देन परामर्शदर्शनान्नैवमित्याह—" अपहतेति " । अस्वरूपत्वे तेषामप्यपरामर्शो विशेष्यांशमात्रपरामर्शः यश्चित्रगुर्बहुधनस्तमानयेत्यादिवदिति भावः ॥ ९ ॥ धर्माणामपि व्यावहारिकसत्यत्वोक्तेर्ब्रह्म-

DR.RUPAK NATH (DR.RUPAK NATHJI) www.astrology-tantra.com

व्यावहारिकसत्वं स्याद्धर्माणां न तु धर्मिणः ।
अधिष्ठानतया सत्वं पारमार्थिकमात्मनः ॥ १० ॥
पृथगात्मानमित्यादिश्रुतिर्योमामिति स्मृतिः ।
कैवल्यहेतुधीसिद्ध्यै सगुणोपासनं जगौ ॥ ११ ॥
निर्गुणज्ञानतो मुक्तिं तत्परत्वाज्जगौ श्रुतिः ।
सगुणागुणयोर्ज्ञाने महद्वैषम्यमिष्यते ॥ १२ ॥

---

णोऽपि सत्यत्त्व तथाऽस्त्विति चेन्नेत्याह—“ व्यावहारिकेति ” । ‘सत्यस्य सत्य’मिति निरतिशयसत्यप्रतिपादनविरोधादधिष्ठानत्त्वानुपपत्तेश्च न ब्रह्मणो व्यावहारिकसत्यत्वोपपत्तिरित्यर्थ. ॥ १० ॥

ननु ‘ पृथगात्मान’मित्यादिश्रुतिषु ‘ यो मामशेषदोषोत्थगुणसर्वस्ववर्जितं।जानात्यस्मै प्रसन्नोऽहं ददामि मुक्तिं न चाऽन्यथा ’।भोक्ता(१)रं यज्ञतपसां सर्वलोकमहेश्वरं । सुहृदं सर्वभूतानां ज्ञात्वा मां शान्तिमृच्छती’त्यादिस्मृतिषु च सविशेषज्ञानादेव मोक्षोक्तेः सप्रकारकज्ञानस्यैव मोचकत्वमित्याशङ्क्य निरस्यति—“ पृथगिति ” । परममुक्तिहेतुनिर्गुणसाक्षात्कारोपयोगिसत्वशुद्ध्युपायसगुणोपासनविध्यर्थवादतया साक्षान्मुक्तिहेतुत्वाप्रतिपादकत्वात् श्रुतिस्मृत्योः नैवं परत्वमित्यर्थः ॥ ११ ॥

न च निर्गुणज्ञानान्मुक्तिश्रुतिरपि तथा तत्परत्वातत्परत्वाभ्यां वैषम्यादित्याह—“ निर्गुण ” इति । यद्यपि ‘ नास्याब्रह्मवित्कुले भवती’त्यादि फलान्तरश्रवणं निर्गुणज्ञानेऽपि स्तुत्यर्थतयोपपादनमपि समानं, संयोगपृथक्त्वन्यायेनोभयफलत्वोक्तिरपि समाना, तथाऽप्यधिष्ठानत्वावगाहित्वानवगाहित्वाभ्यां निर्गुणसगुणज्ञानयोर्विशेषात् सगुणज्ञानजन्यमुक्तेरवान्तरमुक्तित्वाच्चेति तात्पर्यम् ॥ १२ ॥

RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

अनन्तत्वादिरद्वैतस्वरूपपर इष्यते ।
उपास्तिप्रकृतस्थोऽपि वस्तुमात्रपरत्वतः ॥ १३ ॥
वाग्धेनुत्वादिवन्नात्र सत्यकामादयो गुणाः ।
अध्यस्ता ईश्वरान्नैतेऽन्यत्र सन्ति श्रुतेर्मताः ॥ १४ ॥
नाम ब्रह्मेत्युपासीत सैषा नामाभिमानिनी ।
स्मरेत्तस्यां हरिं ब्रह्मेत्येवमारोपतत्परा ॥ १५ ॥
शाखेन्दुन्यायतो ब्रह्मोपदेष्टुं स्याद्गुणास्तिगाः ।

---

स्वरूपपर 'सत्यं ज्ञानमनन्त'मित्यादिवाक्ये अनन्तत्वादेः स्वरूप एव सत्त्वेन वस्तुतत्त्वमात्रपरत्वमेव युक्तं क्वचिद्बुद्धीथाद्युपास्तिप्रकरणस्थस्यापि 'स एवानन्त' इति वाक्यस्योभयपरत्वेऽपि निर्गुणश्रुतिविरोधेन सगुणवाक्यस्योभयपरत्वाभावात् अनन्तत्वादेस्तात्त्विकत्वमेवेत्यभिप्रेत्याह—" अनन्तत्वादिरिति " ॥ १३ ॥

नन्वेवं सार्वज्ञ्यादीनां वाग्धेनुत्वादिवत्प्रातीतिकत्वापत्तिरिति नेत्याह—" वागिति " । वाग्धेनुत्वादेर्बुद्धिपूर्वकारोपविषयतया प्रातीतिकत्वेऽपि सत्यकामत्वादेरीश्वरादन्यत्रासम्भवेन बुद्धिपूर्वकारोपविषयत्वाभावान्न तथात्वमित्यर्थः ॥ १४ ॥ नामब्रह्मेत्यत्रारोपेण मुख्यत्वाभावे गौणत्वस्यान्याय्यत्वमित्याह—" नामेति " । एवं प्रतिमादावपि देवतात्वारोपेण मुख्यत्वे गौणत्वमन्याय्यमेवेति द्रष्टव्यम् ॥ १५ ॥

अनात्मोपास्तेस्तु भूमाख्यब्रह्मोपदेष्टुमेव शाखाचन्द्रन्यायेनावतारितत्वात् 'तदेव(१)ब्रह्मत्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते' इति गुणविशिष्टस्योपास्यस्य ब्रह्मत्वनिषेधोऽपि सुसंपन्न इत्याह—" शाखेति "

(१) केनोपनिषद् १।

DR. RUPAK NATH JI
www.astrology-tantra.com

नोपास्तौ श्रुतितात्पर्यमुपास्यत्त्वनिषेधतः ॥ १६ ॥
अन्यदेवेति गीः श्रौती प्रमेयादप्रमेयतः ।
घटादेः शशशृङ्गादेरन्यद्ब्रह्मेति तत्परा ॥ १७ ॥
तस्मात्साधकसद्भावान्निर्गुणं ब्रह्म सम्मतम् ।
सगुणत्वे तु बहुधा बाधकस्यापि सत्त्वतः ॥ १८ ॥
तत्परत्वात्पुमर्थैकफलत्वान्निर्गुणश्रुतिः ।

---

॥ १६ ॥ नन्व 'न्यदेव(१)तद्विदितादथो अविदितादधी'ति श्रुतौ अश्रौतज्ञानस्याकार्त्स्न्येन ज्ञानस्य वा निषेध इति तदेव ब्रह्मेत्यादाव-श्रौतध्यानस्याकार्त्स्न्येन ध्यानस्य वा निषेधन नोपास्यस्य ब्रह्मत्वनिषेधः अन्यथा तस्याभिध्यानादित्यादिश्रुतिविरोध इति चेन्मैवमित्याह—"अन्यदेवेति" । अन्यदेवेत्यादौ विदितात्प्रमेयाद् घटादेरविदितादप्रमेयात् शशविषाणादेर्वैलक्षण्येन स्वप्रकाशत्वप्रतिपादनपरतया त्वदुक्तार्थाप्रशस्तत्वात् उपास्ये ब्रह्मत्वनिषेधेऽपि न 'तस्याभिध्यानादिति' श्रुतिविरोधः अभिध्यानशब्दस्य निदिध्यासनवाचकत्वात् ध्यानपरत्वेऽपि क्रममुक्त्यर्थत्वेन विरोधाभावादिति तात्पर्यार्थः ॥ १७ ॥ फलितमाह—" तस्मादिति " । न चासिद्धिः मिथ्यात्वश्रुतेनिर्गुणश्रुतेश्च बाधकत्वादिति भाव. ॥ १८ ॥

॥ ब्रह्मण. सगुणत्वे बाधकम् ॥

ननु निर्गुणवाक्यं सगुणवाक्यं बाधते न तु सगुणवाक्यं तदितिकिमत्र नियामकं । न च निषेधकतया निर्गुणवाक्यं प्रबलं 'असद्वा इत्यादिवाक्यस्य सदेवेत्यादिवाक्यात्प्राबल्यापत्तेरिति चेन्न । अपच्छेदन्यायेन प्राबल्यस्य प्रागेवोक्तेः निषेध्यत्वाच्च प्राबल्यं असद्वा इत्यत्र सच्छब्दस्यानभिव्यक्तपरत्वेनानिषेधत्वात् नैतन्न्यायेन प्राबल्यमित्याह—" तत्परत्वादिति " । निर्गुणवाक्यस्य पुरुषार्थ-

---

www.astrology-tantra.com
RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )

प्रबलास्यानुसारित्वमिष्यते सगुणश्रुतेः ॥ १९ ॥
सगुणश्रुतिबाहुल्यं प्राबल्ये साधकं न हि।
नेक्षते शतमन्धानामिति न्यायस्य सम्भवात् ॥ २० ॥
युक्तोऽयुक्तश्च यत्रार्थ आगमस्य प्रतीयते।
स्यात्तत्र युक्त एवार्थ इत्यप्यस्मन्मते भवेत् ॥ २१ ॥
अन्तरित्यादिसूत्रेषु न तात्त्विकगुणोक्तयः।

---

पर्यवसायितया तत्परत्वेन प्राबल्यात् सगुणवाक्यस्य तत्सन्निधिपतितस्य 'फलवत्सन्निधा'विति न्यायेन तद्गुणतया नेयत्वादित्यर्थ (१) ॥ १९ ॥ बहुत्वादपि न प्राबल्यमित्याह—" सगुणेति "। तथा च सर्वथा निर्गुणश्रुतेरेव प्राबल्यमिति तात्पर्यं ॥ २० ॥ साक्ष्यादिशब्दानां द्रष्टृत्वादिद्वारकब्रह्मरूपार्थतैव युक्ता आगमस्य तत्रैव प्रामाण्यसम्भवादित्यभिप्रायेनाह—"युक्त इति"। नन्व 'न्त(२) स्तद्धर्मोपदेशात् 'अन्त(३)र्याम्यधिदैवादिषु तद्धर्मव्यपदेशा'दित्याशादिसूत्रेषु धर्माणां तत्तदधिकरणसिद्धान्तसाधकतया आदृतत्वात्सगुणत्वसिद्धिरित्याशङ्क्याह—"अन्तरिति"। आरोपितब्रह्ममात्र-

---

(१) न च सगुणज्ञानस्य मोचकत्वं तस्य प्रागेव निरासात् अत एव सगुणनिर्गुणत्वयोर्विरोधेन समुच्चयायोगात् अनुष्ठान इव च वस्तुनि विकल्पायोगात् एकस्य प्रतीतार्थत्यागरूपे बाधे वक्तव्ये निर्गुणवाक्यस्यैव स युक्तो न तु प्रबलस्य सगुणवाक्यस्येति निरवकाशप्राबल्यासिद्धं न चोपक्रमाधिकरणन्यायेन अनुपजातविरोधित्वात निर्गुणश्रुतेः प्रतियोगिज्ञानापेक्षया विलम्बितत्वेन लिङ्गाच्छ्रुतेरिव शीघ्रगामित्वात् पदैर्जुहोतीतिवद्विधिविषयत्वाच्च सगुणवाक्यस्य प्राबल्यमिति वाच्यम् उपक्रमाधिकरणन्यायस्याऽन्यथासिद्धोपसंहारविषयत्वात प्रकृते च तदभावात सगुणवाक्यस्य प्रतियोग्युपस्थापकतया शीघ्रगामित्वेन प्राबल्ये बहुगुणवाक्यस्याऽपि प्राबल्यापत्त्या विकल्पाभावप्रसङ्गात् सामान्यविषयप्रमाणसमानकक्षस्यैव विशेषविषयस्य प्राबल्यात इति भाव।

(२) ब्र० सू० १।१।२०। (३) ब्र० सू० १।२।१८।

RUPNATHJI( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

आरोपितगुणैरेव सिद्धान्ते सिद्धिसंभवात् ॥ २२ ॥
दुःखधीर्वृत्तिरूपत्वादानन्दस्तु चिदात्मकः ।
ब्रह्मण्यध्यस्तविश्वस्य न सत्त्वं स्यात्ततः पृथक् ॥ २३ ॥
निर्विशेषत्वरूपेण विशेषप्रतिषेधनम् ।
अद्वितीयतया द्वैतनिषेध इव सम्भवेत् ॥ २४ ॥

---

सम्बन्धिगुणोपादानेन सिद्धान्तसिद्ध्युपपत्तेः गुणतान्त्रिकत्वौदासीन्याच्च सगुणत्वसिद्धिरित्यर्थः । तस्मान्निर्गुणवाक्यबाधात्सगुणवाक्यमतत्परमिति भावः ॥ २२ ॥

नन्वेवमानन्दस्य ज्ञानमात्रत्वे दुःखज्ञानमप्यानन्दः स्यात् भिन्नत्वेऽखण्डत्वहानिः एवमेव ब्रह्मणो जगदभिन्नत्वे मिथ्यात्वापत्तिः भिन्नत्वे भेदसत्यत्वमित्यादितर्कबाधात्त्वदभिमतं ब्रह्मापि न सिद्ध्येदिति श्रुतिबाधात्तर्काणामाभासत्वं त्वन्मतेऽपि समानमित्याशङ्क्य दुःखज्ञानस्य वृत्तिरूपतया आनन्दस्य नित्यचिन्मात्रानतिरेकेऽतिप्रसङ्गाभावात् आरम्भणाधिकरणन्यायेन ब्रह्मव्यतिरेकेण जगतोऽभावाद्भेदाभेदविकल्पस्यानवकाशात् सगुणश्रुतेरतत्परतया श्रुतिबाधसाम्योक्तिरयुक्तेः निर्गुणश्रुतेस्तु तत्परतया तदनुगृहीततर्के शुष्कत्वाभावान्न त्वन्मतसाम्यमिति तात्पर्यमनुसृत्याह— " दुःखधीरिति " ॥ २३ ॥ ननु निर्विशेषत्वस्य भावाभावाभ्यां मूकोऽहमितिवत्स्वव्याघातः यदि निर्विशेषत्वरूपनिषेधोऽप्यनेनैव निषिध्यते तर्ह्ययमपि वचनक्रिया मूकोहमित्यनेनैव निषिध्यत इति सममित्याशङ्क्य निरस्यति—" निर्विशेषत्वेति " । निर्विशेषत्वस्य विशेषरूपत्वे निर्विशेषत्वेनैव रूपेण तन्निषेधस्याद्वितीयवाक्ये द्वितीयाभावरूपाद्वितीयनिषेधस्येवोपपत्तेर्मूकोहमित्यत्र वक्तृत्वतदभावयोरेकरूपेण निषेधाभावाद्व्याघातोपपत्तेर्नात्र तथात्वमिति तात्पर्यार्थः ॥ २४ ॥ ननु ब्रह्मणो निर्विशेषत्वे विचारविषय-

DR. RUPAK NATH
www.astrology-tantra.c

विचारसमयेऽध्यस्तंधर्मसम्भवतोऽञ्जसा।
विचारविषयत्त्वं स्याच्चितो विविदिषा फलं ॥ २५ ॥
निर्विशेषं परं ब्रह्म सिद्धं श्रुत्यादिमानतः।
सगुणत्त्वमितोऽध्यस्तं मायया तत्र केवलं ॥ २६ ॥
वेदान्ता निर्विशेषे स्युः प्रमाणं नान्यसम्भवः।

---

त्वानुपपत्तिः 'इदमित्थमिति ज्ञानं जिज्ञासया प्रयोजनं। इत्थम्भावो हि धर्मोऽस्य न चेन्न प्रतियोगिने'त्याशङ्क्य विचारकाले आरोपितधर्मसम्भवात् विचारोत्तरकाले च इत्थमिति व्यवहारस्य स्वरूपव्यावृत्यादेः कल्पितपार्थक्यमाद्यारोपोपपत्तिरिति मैवमित्याह—“विचारसमय” इति। ननु धर्मारोपार्थमेव के चन धर्माः सत्याः स्वीकर्त्तव्या इदन्त्वादिना ज्ञात एव रूप्याद्यारोपदर्शनात् तदुक्तं 'धर्मारोपोऽपि सामान्यधर्मादीनां हि दर्शने। सर्वधर्मविहीनस्य धर्मारोपः क दृश्यते' इति चेन्नेत्याह—“अंजसेति”। इदंत्वादेरपि सत्यत्वासंप्रतिपत्तेः शुद्धेऽप्यध्यासस्योपपादितत्वाच्च आरोप्यविलक्षणधर्मवत्त्वस्यानाद्यविद्यासम्बन्धेनैवोपपत्तेर्न सत्यधर्मकल्पनाऽपीति भावः ॥ २५ ॥

स्वरूपातिरेकिणोऽभावस्यानङ्गीकाराद्धर्ममात्रे प्रामाणिकत्वस्य निराकृतत्वाच्च निर्विशेषं परं ब्रह्मेति सिद्धमित्याह—“निर्विशेषमिति” ॥ २६ ॥

॥ ब्रह्मणो निर्गुणत्वोपसंहारः ॥

ननु निर्विशेषे किं प्रमाणमिति चेत् किं स्फूर्त्यर्थं वा अज्ञाननिवृत्त्यर्थं वा प्रमाणप्रश्न आद्ये स्वप्रकाशतया प्रमाणवैयर्थ्यं द्वितीय उपनिषद एव प्रमाणत्वादत एव प्रत्यक्षमनुमानं चेत्यादिविकल्पानवकाश इत्याह—“वेदान्तानामिति”। ननु

DR. RUPNATHJI (DR. RUPAK NATH)
www.astrology-tantra.com

तेऽपि लक्षणया ब्रह्म बोधयन्ति न मुख्यया ॥ २७ ॥
असन्दिग्धाविपर्यस्तबोधकत्वेन मानतां ।
प्राप्नुवन्त्यत्र वेदान्ता निर्विशेषेऽपि वस्तुनि ॥ २८ ॥
अ(१)गृहीत्वैव सम्बन्धमभिधानाभिधेययोः ।
हित्वा निद्रां प्रबुध्यन्ते सुषुप्तेर्बोधिताः परैः ॥ २९ ॥
जाग्रद्वन्न हि सम्बन्धं सुषुप्तो वेत्ति कश्चन ।
इति वाक्यस्य सम्बन्धं विना प्रामाण्यमीरितं ॥३०॥

---

कथं तत्रोपनिषन्मानं जातिगुणक्रियादिरूपनिमित्ताभावेन मुख्यवृत्तेरयोगात् अस्वीकाराच्च आरोपनिमित्तविषयप्रतीतेर्निर्विशेषे प्रामाण्यायोगात् गौण्याश्च मुख्यार्थगुणयुक्ततयैव लक्षणायाश्च शक्यार्थसम्बन्धितावच्छेदकरूपवत्तया स्वार्थोपस्थापकतया निर्विशेषे वृत्तिमात्रायोगात् पदविषयया वाक्यविषयया चोपनिषन्मानं न निर्विशेषे संसर्गागोचरत्वाच्चेति चेदित्याशङ्क्याह—"तेऽपीति" । मुख्यगौण्यसम्भवेऽपि लक्षणायाः सम्भवात् तत्रोपनिषत्प्रमाणमित्यर्थः ॥ २७ ॥

ननु लक्षकत्वे शक्यार्थसम्बन्धित्वावच्छेदकरूपवत्तया पदमात्रेऽन्वयितावच्छेदकरूपवत्तया चोपस्थितनियमस्तस्याऽत्राऽभावात्कथं लक्षणेत्याशङ्क्य संसर्गबोधकवाक्यस्थपदानामेव तथात्वान्न च संसर्गागोचरत्वे प्रमाणवाक्यत्वानुपपत्तिः असंदिग्धाविपर्यस्तबोधकतया निर्विकल्पकत्वेऽपि प्रामाण्यस्याकाङ्क्षादिमत्तया वाक्यत्वस्य चोपपत्तेर्मैवमित्याह—"असंदिग्धेति" ॥२८॥ वृत्तिमन्तरेणाऽपि सुप्तोत्थापकवाक्यस्येव वेदान्तवाक्यस्य निर्विशेषे प्रामाण्यस्य वार्त्तिककृद्भिरुपपादितत्वान्नानुपपत्तिरित्याह-"अगृहीत्वेति" लक्षणापक्षेऽपि तात्पर्यविशेषग्रहेणैवातिप्रसङ्गभङ्गो वाच्यः शक्यसम्बन्धस्यानेकत्र सम्भवादिति भाव. ॥ २९ ॥ ३० ॥ तात्पर्यविशे-

DR. RUPAK NATHJI (DR. RUPNATHJI)
www.astrology-tantra.com

प्रतिबन्धक्षये पुंसः सन्बन्धग्रहणं विना ।
शब्दाज्ज्ञानं धियोऽशुद्धिः प्रतिबन्ध इहेरितः ॥ ३१ ॥
निष्प्रकारमपि ज्ञानं निर्विशेषात्मगोचरं ।
जायते शंसयोच्छेदि वेदान्तैकप्रमाणजं ॥ ३२ ॥
तस्माद्बाधकसद्भावात्साधकाभावतस्तथा ।
सगुणत्वे परं ब्रह्म निर्गुणं सिद्धमञ्जसा ॥ ३३ ॥

---

षग्रहश्च पुरुषविशेषस्य भवति न सर्वस्य पुरुषगतो विशेषश्चान्तःकरणशुद्धिरूपः प्रतिबन्धाभावः अन्तःकरणाशुद्धिरुपस्य पापस्य च प्रतिबन्धकत्वं 'ज्ञानमुत्पद्यते पुंसां क्षयात्पापस्य कर्मण' इत्यादिशास्त्रसिद्धं तथा च प्रतिबन्धक्षये विनाऽपि सम्बन्धं शब्दादात्मसाक्षात्कार इत्यभिप्रेत्याह—" प्रतिबन्धक्षय " इति ॥ ३१ ॥

ननु निर्धारितैककोटिप्रकारकनिश्चयं प्रत्येव धर्मिज्ञानाधीनविचारस्य जनकत्वात् कथं विचारसध्रीचीनवेदान्तवाक्यजन्यज्ञानस्य निष्प्रकारकत्वं कथं वा तादृग्ज्ञानस्य जनिरित्याशङ्क्याह—" निष्प्रकारमिति "। एतदुक्तं भवति संशयनिवृत्तिक्षमज्ञानस्यैव विचारफलत्वात् तस्याश्च विरोधिकोटिप्रतिक्षेपकोपलक्षितधर्मिज्ञानादप्युपपत्तेर्न तदर्थं सप्रकारकत्वनियमः । न च गौरवं प्रमाणवतो गौरवस्य न्याय्यत्वात् न च निर्विशेषविषयकस्य ज्ञानस्य निष्प्रकारकत्वे निर्विशेषत्वासिद्ध्या तत् सिद्ध्यर्थं विशेषाभावरूपविशेषविषयत्वस्यावश्यकत्वमिति वाच्यं विशेषाभावस्य स्वरूपतया तत्स्फूर्त्तौ प्रमाणानपेक्षत्वात् अखण्डार्थसिद्ध्यनुकूलपृथग्ज्ञातपदार्थोपस्थितिविषयमात्रेण विशिष्टव्यवहारोपपत्तेरिति ॥ ३२ ॥

फलितमुपसंहरति— " तस्मादिति " ॥ ३३ ॥

॥ ब्रह्मणो निर्गुणत्वे प्रमाणोपपत्तिः ॥

RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH)
www.astrology-tantra.com

निराकारं स्वयं ज्योतिस्तमसः परमर्कवत् ।
ज्ञानानन्दैकरूपत्वमृतेनान्याऽऽकृतिर्विभोः ॥ ३४ ॥
उपास्यतत्त्वसिद्ध्यै वा सर्वात्मकतया विभोः ।
नियम्यगानुवादित्वात्तथोक्तेर्नान्यथेष्यते ॥ ३५ ॥

---

नन्वा'दित्यवर्णं तमसः परस्ता''द्यदा पश्यः पश्यते रुक्मवर्णं' 'ऋतं सत्यं परं ब्रह्म पुरुषं कृष्णपिङ्गलं''विश्वतश्चक्षुः' 'सहस्रशीर्षा' इत्यादिश्रुतिभिः 'पश्य मे पार्थ रूपाणि' 'सर्वतः पाणिपादं त'दित्यादिस्मृतिभिः ब्रह्म सविग्रहं श्रुतत्वात् पालयितृत्वादुपदेष्टृत्वादित्याद्यनुमानैश्च विग्रहसिद्धिरित्याशङ्कां परिहरति—"निराकारमिति" द्वाभ्यां । आदित्यवर्णमित्यस्याविद्याविलक्षणस्वप्रकाशस्वरूपप्रतिपादनपरतया उपास्यपरतया चोपपत्तेः न च तमसः परत्वोक्त्योपासनापरत्वानुपपत्तिः उपास्यविग्रहोपलक्षितस्य तमसः परत्वोक्तेः न तु रूपविशिष्टस्य नचै'षोन्तरादित्ये हिरण्मयः पुरुषो दृश्यत' इत्यत्र वर्त्तमाननिर्देशेनापरोक्षज्ञानविषयत्वोक्तेरनारोप्यत्त्वं न हि योषितोऽग्नित्वं दृश्यत इत्युच्यते इति वाच्यं प्रतीकोपासने उपास्यसाक्षात्कारनियमाभावेऽपि सगुणोपासने उपास्यसाक्षात्कारस्य 'स्याद्धीति' श्रुतिसिद्धेन नियतत्वेन तस्यैव दर्शनशब्देनाभिधानात् विश्वतश्चक्षुरित्यादिश्रुतिस्मृतीनां सर्वात्मकतया सर्वान्तर्यामितया च नियम्यजीवशरीरचक्षुःपाणिशिरःप्रभृत्यनुवादित्वोपपत्तेः सर्वतःपाणिपादत्वादेस्तु असम्भवात् त्वयाप्येवमेव वक्तव्यत्वात् अन्यथा देशविशेषावच्छेदेन परममुक्तिप्रतिपादनं गन्तव्यतत्प्रवेष्टृत्वाद्युपपादनं च त्वदीयमसङ्गतं स्यात् अनुमानेऽप्येवमेव सिद्धसाधनं 'विक(१)रणत्वान्नेति चेत्तदुक्त'मिति सूत्रे अविद्यापरिणामस्य करणस्थानीयस्याङ्गीकारादविरोधादिति द्वयोः समुदितार्थः ॥ ३४ ॥ ३५ ॥

---

(१) ब्र० सू० २ । १ । ३१ ।

RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

प्रवेष्टृत्वे च गम्यत्वेऽन्यथासिद्धे न विग्रहः ।
कल्प्योऽथ क्रममुक्त्यै वा तज्ज्ञानं वोपलक्षितं ॥३६॥
चिदानन्दस्वरूपस्य निराकारस्य वस्तुतः ।
विग्रहो मायया भाति नान्यथा तर्क्यतां वृथा ॥३७॥
नारायणादिशब्देन मायोपहितमुच्यते ।

---

ननु 'तदे(१)वानुप्रविश' "ब्रह्म(२)विदाप्नोति पर'मित्यादि श्रुति सिद्धं सर्वगतब्रह्मण. प्रवेष्टृत्वं गम्यत्वं च विग्रहं विना न युज्यत इति शङ्कां निरस्यति—" प्रवेष्टृत्वमिति "। स्वसृष्टकार्याभिव्यक्तत्वस्यैवानुप्रवेशशब्दार्थतया व्यापकस्य मुख्यप्रवेशासम्भवात् अतः प्राप्तस्याप्यविद्यातिरोधाननिवृत्त्यपेक्षया प्राप्यत्वोपचारेण विग्रहानाक्षेपकत्वात् यत्तु 'तमेव विद्वानमृत इह भवति' 'यदा पश्य'इत्यादिश्रुतौ सर्वनाम्ना सविग्रहस्यैव परामर्शात्तज्ज्ञानस्यैव मोचकत्वे सविग्रहत्वमिति तत्राह—" अथेति "। सगुणविद्याया. क्रममुक्त्यर्थत्वेनान्यथासिद्धेः साक्षान्मुक्तिजनकत्वपक्षे तदुपलक्षितात्मज्ञानस्यैव मोचकत्वमित्यर्थ' ॥ ३६ ॥ 'अपाणिपादो' 'नेति नेतीति' श्रुतिविरोधान्मायिकत्वमेव सविग्रहत्वस्य न तात्त्विकत्वमित्याह— " चिदानन्देति " ॥ ३७ ॥ नन्वं'को नानारायण आसीन्न ब्रह्मा न च शङ्कर' इति श्रुत्या महाप्रलये नारायणस्थित्युक्त्या नित्यविग्रहसिद्धिरित्याशङ्क्य निराचष्टे—"नारायणेति" । नारायणशब्दस्य ' सदेव सोम्येदमग्र आसीदिति' श्रुत्यनुसारेण मायोपहितब्रह्मपरत्वेन विग्रहपरत्वाभावात् न चैतावता चेतनान्तरसाधारण्यं

---

(१) तै० उ० २ । ६ । (२) तै० उ० १ । १

DR. RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

चैतन्यं न चिते नास्ति विग्रहस्यापि कल्पना ॥३८॥
ज्ञानानन्दैकरूपत्वप्रतिपादनतत्परा ।
श्रुतिर्न विग्रहं वक्ति तात्पर्येणाद्वितीयगा ॥ ३९ ॥
उपासनादिसंसिद्ध्यै ब्रह्मणो रूपकल्पना ।
वस्तुतस्तु निराकारं निर्गुणं निर्विशेषकं ॥ ४० ॥
ज्ञानमर्थप्रकाशात्म मुक्तावप्यनपायतः ।

---

अखण्डमायोपहितत्वस्यैव व्यावर्तकत्वादिति तात्पर्यार्थः ॥ ३८ ॥

नन्वानन्दरूपममृतं यद्विभाति' 'आप्रणखात्सर्व एव आनन्दः' 'मोदो दक्षिणः पक्षः' 'यदात्मको भगवान् तदात्मिका व्यक्तिः' किमात्मको भगवान् ज्ञानात्मक ऐश्वर्यात्मक' इत्यादि श्रुतेर्भेदाभावेपि अहिकुण्डलन्यायेन विशेषबलाद्विग्रहत्वोपपत्तिरित्याशङ्क्याह— "ज्ञानेति" । आप्रणखादित्यादेश्च लीलाविग्रहावच्छेदेन तु खाद्यभेदकतॄनयोपपत्तेः मोदो दक्षिण इत्यादेरानन्दमयकोशप्रतिपादकतया ब्रह्मपरत्वाभावादिति भाव. ॥३९॥ फलितमुपसंहरति— "तस्मादिति" ॥ ४० ॥

॥ ब्रह्मणो निराकारतासिद्धिः ॥

ननु निर्विशेषं चेद्ब्रह्म ब्रह्मैवैकं ज्ञानात्मकमानन्दात्मकमद्वितीयं नित्यं साक्षि चेति ते नोपपद्यते जातिविशेषाद्यभावादित्याशङ्क्याह— "ज्ञानमिति" । अर्थप्रकाशत्वमेव ज्ञानत्वं मुक्तौ अर्थाभावे तत्संसृष्टप्रकाशत्वस्य कदाचिदर्थसम्बन्धेऽप्यनपायात् आनन्दत्वस्य निरुपाधिकेष्टत्वरूपत्वात् ज्ञानानन्दयोरभेदेपि कल्पितजातिभेदनिबन्धनप्रवृत्तिकतया पदद्वयप्रयोगस्य व्यावृत्तिभेदेन साफल्यात् द्वितीयाभावोपलक्षितस्वरूपत्वमद्वती-

RUPNATHJI(DR.RUPAK NATH)
www.astrology-tantra.com

निरुपाधिकमानन्द इष्टरूपत्वमश्नुते ॥ ४१ ॥
ज्ञानानन्दापृथक्त्वेऽपि साफल्यं स्यात्पदद्वये ।
अद्वितीयस्वरूपं स्याद् द्वैताभावोपलक्षितं ॥ ४२ ॥
उभयावधिराहित्यं नित्यत्वं सम्मतं विदां ।
अविद्यायां तत्कार्ये वा साक्षिचैतन्यबिम्बनं ॥ ४३ ॥
शुद्धब्रह्मातिरिक्तो यो बुद्ध्युपाधिकतः पृथक् ।
साक्षी स एव वेदान्ते स्वीकृतः सर्वसाधकः ॥ ४४ ॥

---

यत्वं उभयावधिराहित्यं नित्यत्वं कालस्याप्याविद्यकत्वेनान्तावधिमत्त्वात् ध्वंसस्याध्वंसप्रतियोगित्वेऽप्याद्यावधिमत्वाच्चाविद्यातत्कार्यान्यतरप्रतिफलितचैतन्यस्यैव साक्षित्वादिति । ननु कथं दृग्रूपस्य ब्रह्मणः साक्षाद्द्रष्टृत्वरूपं साक्षित्वमित्यत आह—“ अविद्यायामिति ” । तथा च दृग्रूपस्यापि उपाधिना द्रष्टृत्वमिति त्रयाणां तात्पर्यार्थः ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥

ननु साक्षी जीवकोटिर्ब्रह्मकोटिर्वा उभयानुगतं चिन्मात्रं वा नाद्यः जीवो बुद्ध्युपाधिकोऽणुरिति पक्षे इदमंशावच्छिन्नचिद्वेद्यस्य शुक्तिरूप्यस्य साक्षिवेद्यत्वायोगाच्चक्रकाद्यापातात् अज्ञानोपाधिकः सर्वगत इति पक्षेऽप्यज्ञानस्यापि साक्ष्यधीनसिद्धिकत्वेनान्योन्याश्रयात् न द्वितीयः ब्रह्मण एव साक्षिवेद्यदुःखादिधीने तु जीवस्येति वैपरीत्यापातात् न तृतीय ईश्वरेणेव चिन्मात्रेणापि संसारे तु स्वस्य तद्गतत्वेन ग्रहणं मुक्तोपप्लवापात इति शङ्कां साक्षिरूपं प्रदर्शयन्निरस्यति—“ शुद्धेति ” । तथा चाविद्यावृत्तिप्रतिफलितं चैतन्यं साक्षी सुप्तावप्यविद्यावृत्तिस्वीकारस्य प्रागुक्तेः नचान्योन्याश्रय. प्रागेव निरासात् शुद्धस्य साक्षित्वाभावेन मुक्तोपप्लवापाताभावादिति तात्पर्यार्थ. ॥ ४४ ॥ साक्ष्यैकत्वेपि न व्यवहारसङ्कर

RUPNATHJI (DR.RUPAK NATH)
www.astrology-tantra.com

साक्षिणः सर्वजीवेषु साधारण्येऽपि सर्वदा ।
तत्तज्जीवादभेदेनाभिव्यक्तस्यैव बोधिता ॥ ४५ ॥
ज्ञानानन्दैकरूपं यदद्वितीयमनश्वरं ।
नित्यं साक्षि परं ब्रह्मेत्येवं सिद्धान्तदिग्जयः ॥ ४६ ॥
चितो विवर्ताधिष्ठानतयोपादानता मता ।
विवर्तकारणाज्ञानगोचरत्वात्तथेष्यते ॥ ४७ ॥
अस्य द्वैतेन्द्रजालस्य यदुपादानकारणं ।

---

इत्याह— " साक्षिण " इति । साक्षिणः सर्वजीवसाधारण्येऽपि तत्तज्जीवचैतन्याभेदेनाभिव्यक्तस्य तत्तद्दुःखादिभासकतया ऽतिप्रसङ्गाभावादित्यर्थः ॥ ४५ ॥ फलितमुपसंहरति— " ज्ञानेत्यादिना " ॥ ४६ ॥

॥ ब्रह्मणोज्ञानानन्दाद्वितीयनित्यसाक्षित्वोपपत्तिः ॥

ननु निर्विशेषं चेद्ब्रह्म कथं तदेव निमित्तमुपादानमित्यभिन्ननिमित्तोपादानकत्त्वं जगतो विकारवत्कारणस्यैवोपादानत्वाद्ब्रह्मणोऽविकारत्वात् अन्यथा 'निर्विकारो हरः शुद्ध'इत्यादिश्रुतिविरोधादित्याशङ्क्याह—" चितइति " । परिणामितयोपादानत्वाभावेपि विवर्ताधिष्ठानतयापादानत्वसम्भवाद्विवर्ताधिष्ठानत्वं च विवर्तकारणाज्ञानविषयत्वमेवेत्यर्थः ॥ ४७ ॥ तत्र वार्तिकवचनमु-

RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

अज्ञानं तदुपाश्रित्य ब्रह्म कारणमुच्यते ॥ ४८ ॥

स्वस्मिन्कार्यजनेरेव हेतुत्वं लक्षणं ध्रुवं ।

उपादानस्य तच्चास्ति विवर्तपरिणामयोः ॥ ४९ ॥

ब्रह्ममाये जगद्योनी नोभयोः परिणामिता ।

---

दाहरति—" अस्येति " ॥ ४८ ॥ उपादानलक्षणमाह—" स्वस्मिन्निति " । आत्मनि कार्यजनिहेतुत्वस्यैवोपादानत्वलक्षणत्वात् तस्य च परिणाम्यपरिणाम्युभयसाधारणत्वादित्यर्थः ॥ ४९ ॥ ननु ब्रह्मैवोपादानमुताज्ञानमपि आद्ये सत्योपादानत्वे सत्यत्वापत्त्या अज्ञानोपादानकत्वकल्पनाविरोधः द्वितीये सूत्रद्वयस्य रज्जुं प्रतीव ब्रह्माज्ञानयोः समप्राधान्येन वाऽन्यथा वा कारणत्वं विवक्षितमित्याशङ्क्याह—" ब्रह्मेति " । उभयापरिणामित्वेन तयोः कारणत्वाङ्गीकारात् न च तत्पक्षोक्तदोषावकाशः उभयोः परिणामितया कारणतानङ्गीकारात् किन्त्वज्ञानस्यैव न ह्यविद्यासाहित्येऽपि ब्रह्म परिणमते किन्तु विवर्त्तते न चाविद्यापरिणामत्वेऽपि सत्यत्वापत्तिः परिणाम्युपादानसमसत्ताकत्वरूपस्य सत्यत्वस्य परिणामनिर्वाहकत्वात् ब्रह्मसमसत्ताकत्वाभावेन तदपेक्षया परिणामत्वाभावात्स्वसमानसत्ताकविकाराहेतुतया निर्विकारत्वोपपत्तेश्च न च सत्योपादानत्वे सत्यत्वापत्तिः परिणाम्युपादानधर्माणामेव मृत्वसुवर्णत्वादीनां कार्ये अन्वयदर्शनात् सत्योपादानत्वेऽप्यस-

DR.RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

तयोर्विकारिणी माया ब्रह्म तत्र विवर्तते ॥ ५० ॥
ब्रह्मणो निर्विकारत्वमसाधारण्यरूपतः ।
विकारित्वं तु मायायाः समसत्ताककार्यतः ॥ ५१ ॥
न ब्रह्मसमसत्ताकं जगत्तस्य विवर्तनं ।
जगत्प्रातीतिकं तस्मात्सत्यं ब्रह्मैव तात्त्विकं ॥ ५२ ॥
मायैव वाऽस्त्युपादानं निमित्तं परमेश्वरः ।
अधिष्ठानं विशुद्धा चिदिति पक्षोऽपि युक्तिभाक् ॥ ५३ ॥
घटादेः कल्पितस्यैव कुलाले कर्तृतेष्यते ।

---

स्यत्वापत्तेरिति(१)त्रयाणां तात्पर्यार्थः ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥

ननु मायोपादानं ईश्वरो निमित्तं शुद्धं ब्रह्माधिष्ठानमिति पक्षे अभिन्ननिमित्तोपादानत्वाभावेन स्वमये तदर्थस्य प्रकृत्यधिकरणादेरनुपपत्तिरिति चेन्मैवमित्याह—" मायेति " । एकस्यैवाविद्योपहितत्वेनोपादानत्वस्य अविद्यापरिणामेच्छाकृत्याद्याश्रयत्वेन निमित्तत्वस्यापि सम्भवात् तस्माद्ब्रह्मणो जगदुपादानत्वं सिद्धं न तत्र दोषकल्पनावकाश इति तात्पर्यम् ॥ ५३ ॥

॥ ब्रह्मणो जगदुपादानत्वोपपत्तिः ॥

नन्वेवं कुलालादिवदुपादानगोचरप्रयत्नादिमत्त्वं कर्तृत्वमुक्तं स्यात् तच्च कार्यस्य कल्पितत्वे न घटते कुलालादेरकल्पितं प्रत्येव कर्तृत्वदर्शनात् कल्पितं च रूप्यादिकं प्रति भ्रान्तस्यान्यस्य वा कर्तृत्वाद-

(१) नच सत्यासत्यधूमानुगतधूमत्वस्येव सत्यासत्यानुगतोपादानकत्वस्यैवासाभावकत्वं साध्यम् । स्वनिष्ठकार्यं कारणहेतुत्वस्योक्तत्वात् न हि सत्यत्वासत्यत्ववैधर्म्यं साधर्म्यविरोधि अन्यथा किञ्चिद्वैधर्म्यस्यैव साधर्म्यविरोधित्वे साधर्म्यं कथमुच्छेदापत्तेः घनाभासविषयसंस्कारजन्यज्ञानविषयत्वादेराभासानाभाससाधारणस्य दृष्टान्तेऽपि सत्वादिति तात्पर्यम् ।

DR. RUPAK NATH
DR. RUPAK NATH
www.astrology-tantra.com

रूप्यादौ कल्पिते साक्षिकर्तृत्वं सम्मतं विदाम् ॥५४॥
जनिकर्तुर्यतो वेति श्रुतिसूत्रप्रमाणतः ।
स्थित्याद्याधारलिङ्गाच्चोपादानत्वं प्रसिद्ध्यति ॥ ५५ ॥
तदैक्षत व्याकरोमीत्यादिश्रुत्या चिदद्वये ।
ईक्षणादिकलाधारतया कर्तृत्वमिष्यते ॥ ५६ ॥
एकविज्ञानतः सर्वविज्ञानश्रुतिमौलिगीः ।
सच्च त्यच्च भवत्येवमित्युपादानता जगौ ॥ ५७ ॥
सर्वं ब्रह्मेदमित्येवं सामानाधिकरण्यगीः ।
अधिष्ठानतया सर्वव्यापित्वे मानमीशितुः ॥ ५८ ॥

---

र्शनादित्याशङ्क्य कुलालकार्यघटादावप्यकल्पितत्वासंप्रतिपत्तेः तं प्रत्येव कर्तृत्वदर्शनात् कल्पितरूप्यादेरपि अकर्तृकत्वासिद्धेश्च तत्रापि साक्षिण एव कर्तृत्वादित्याह—"घटादेरिति"। न ह्यदर्शनमात्रेण कर्त्रपलापः त्वन्मतेऽपि सर्वज्ञकर्तुरसिद्ध्यापत्तेरिति भावः ॥ ५४ ॥ 'यतो(१)वा इमानि भूतानि जायन्त' इति श्रुतौ 'जनिकर्तुः प्रकृतिरिति' सूत्रविहितप्रकृत्यर्थपञ्चमीश्रुत्या 'तत्प्र(२)यन्त्यभिसंविशन्तीति' स्थितिलयाधारत्वलिङ्गाच्चोपादानत्वसिद्धिरित्याह—"यतइति" ॥५५॥

तदैक्षत व्याकरवाणीति ईक्षणाद्याधारतया कर्तृत्वसिद्धिश्चेत्याह—"तदैक्षतेति" ॥ ५६ ॥ एकविज्ञानेन सर्वविज्ञानश्रुतिः 'सच्च(३)त्यच्चाभवदिति' श्रुतिश्चोपादानत्वे मानमित्याह—"एकविज्ञानत" इति ॥ ५७ ॥ 'सर्वं खल्विदं ब्रह्मेति' सामानाधिकरण्यश्रुतिरपि मानमित्याह—"सर्वमिति" ॥ ५८ ॥ श्रुत्यनुगृहीता-

---

(१) तै. उ. २। (२) तै. उ. २। (३) तै. उ. २।

DR.RUPAK NATH
www.astrology-tantra.com

सदुपादानकं विश्वं सत्स्वभावानुरञ्जितं ।
नानाविकाररूपत्वान्मृत्स्नान्याप्तघटादिवत् ॥ ५९ ॥
सुखदुःखादिवत्प्रेक्षापूर्वोत्पादितकार्यतः ।

---

नुमानमप्यत्रविवरणोक्तमध्यवसेयमित्याह—" सदिति " । महाभूतानि सद्वस्तुप्रकृतिकानि सत्स्वभावानुरक्तत्वेसति विविधविकारत्वान्मृदनुस्यूनघटादिवदित्यर्थ. । नच विवर्त्तमते उपादानत्वानुपपत्तिः सत्प्रधानप्रकृतित्वेनार्थान्तरता च आदावेव तदुपादानत्वस्य स्थापितत्वात् प्रकृतेः सत्वाभावस्य प्रसाधितत्वेन अर्थान्तरानवकाशाच्च, न च खण्डो गौर्मुण्डो गौरिति गोत्वानुरक्तखण्डादौ व्यभिचार तदनुरक्तत्वे सति तद्विकारत्वादित्यत्र तात्पर्यात् सदतिरिक्तगोत्वाद्यनभ्युपगमादिति भाव. ॥ ५९ ॥

(१)एवं च जगदभिन्नानिमित्तोपादानकं प्रेक्षापूर्वजनितकार्यत्वात्सुखदुःखादिवदित्यभिन्ननिमित्तोपादानं ब्रह्म सिद्ध्यतीत्याह—" सुखेति " द्वाभ्यां । न च व्यर्थविशेषणत्वं प्रेक्षापूर्वकत्वात् कार्यत्वादिति हेतुद्वये तात्पर्यात् न च त्वन्मते दुःखादीनामन्तःकरणोपादानकत्वेन साध्यवैकल्य मिति वाच्यं अस्मिन्मतेऽन्तःकरणस्य परिणाम्युपादानत्वेपि अन्त.करणरूपेण परिणताज्ञानाधारतया विवर्त्तोपादानत्वस्यानपायात् कार्यत्वादिति हेतौ सर्वकार्यनिमित्तकालघटसंयोगस्योभयवादिसंप्रतिपन्नस्य दृष्टान्तस्य लाभाच्च । न च जगदुपादानं न कर्तृ द्रव्योपादानत्वान्मृद्वत् जगत्क-

---

(१) एतेन सन् घट इतिवदत्रेदानीमसन्घट असन्नष्टृङ्गमित्यादिप्रतीत्यनुसारेण घटशृङ्गादेरसदुपादानत्वापत्तिरितिनिरस्तम् । नापि ब्रह्म न द्रव्योपादान चेतनत्वाच्चैत्रवत् जगन्नानन्दप्रकृतिक यद्यत्स्वभावानुरक्त न तत्तत्प्रकृतिक यथा घटस्वभावानुरक्त घटादि न घटोपादानकमित्यादिना सत्प्रतिपक्षत्व व्याप्तिपक्षधर्मतयोरापातप्रतीत्या सत्त्वेऽपि श्रुत्यनुग्रहेण स्थापनाया बलवत्वात् द्वितीयानुमाने कपालस्वभावानुरक्ते घटे व्यभिचार' कपाल घट इत्यप्रतीते' नच मृत्त्वेन तदनुरक्तत्वमस्तीति वाच्यम् । सत्त्वेनाऽप्यनुरक्तत्वस्य समानत्वादिति भाव ।

RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

अभिन्नहेतूपादानं जगदित्यनुमानतः ॥ ६० ॥

ब्रह्माभिन्ननिमित्तोपादानं सिद्धमितीष्यते ।

न वा सत्प्रतिपक्षोऽत्र श्रुतिमौलिविरोधतः ॥ ६१ ॥

ब्रह्मणः स्वप्रकाशत्वमवेद्यत्वे सति ध्रुवं ।

अपरोक्षार्हतात्यन्ताभावानाश्रयतात्मकं ॥ ६२ ॥

तस्याव्याप्ति र्न मोक्षेपि स्वरूपत्वेन सत्त्वतः ।

---

र्त्ता वा न द्रव्योपादानं कर्तृत्वात्कुलालादिवदित्यादिना सत्प्रतिपक्षत्वं श्रुतिविरोधेन हीनबलत्वात् आद्यानुमाने जडत्वस्य द्वितीयानुमाने सर्वान्तर्यामित्वस्य चोपाधित्वात् बाधोन्नीततया पक्षेतरत्वेपि दोषत्वात् तस्माद्ब्रह्म जगदुपादानं कर्तृ च सिद्धमिति द्वयोस्तात्पर्यार्थः ॥ ६० ॥ ६१ ॥

॥ ब्रह्मणो जगदुपादानत्वे प्रमाणोपपत्तिः ॥

ननु परिणामभिन्नाविद्याधिष्ठानत्वेनोपादानत्वं वाच्यं अधिष्ठानत्वं तु नावेद्यस्य तद्वेदनार्थं प्रमाणापेक्षायामन्योन्याश्रयात् न च स्वप्रकाशतया तदनपेक्षमेवाधिष्ठानमिति वाच्यं स्वप्रकाशताया वक्तुमशक्यत्वात् तथाहि किमिदं स्वप्रकाशत्वं वृत्त्यव्याप्यत्वं वा फलाव्याप्यत्वंवा, अवेद्यत्वे सत्यपरोक्षव्यवहारविषयत्वं वा, तद्योग्यत्वं वा, तद्योग्यत्वात्यन्ताभावानधिकरणत्वं वा, नाद्यः ब्रह्मणोऽप्यावरणभङ्गाय चरमवृत्तिव्याप्यत्वात् न द्वितीयः अतीतादौ नित्यातीन्द्रिये चातिव्याप्तेः न तृतीय. सुषुप्त्यादौ व्यवहाराभावेनाव्याप्तेः न चतुर्थ. योग्यत्वरूपधर्मस्य मोक्षकाले अभावेन तदा ब्रह्मण्यव्याप्तेः नापि पञ्चमः अनधिकरणत्वस्यापि धर्मत्वेन मोक्षदशायां तस्याप्यभावेनाव्याप्तिरित्याशङ्क्य पञ्चमपक्षस्यैव क्षोदसहत्वान्मैवमित्याह—" ब्रह्मण इति " । अवेद्यत्वे सति अपरोक्ष-

RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

स्वरूपत्वेपि तस्यास्ति लक्षणत्वं गुणत्ववत् ॥ ६३ ॥
यद्वाऽत्र योग्यतात्यन्ताभावो ब्रह्मैव तत्त्वतः।
फलाव्याप्यतया त्वस्यावेद्यत्वमपि सम्भवेत् ॥ ६४ ॥
फलव्याप्यत्वमेवेष्टं घटादौ न तु चिद्घने।
साक्षिभास्यत्वमेवेष्टं सुखादौ रजतादिके ॥ ६५ ॥
फलाव्याप्यत्वतुल्याधिकरणत्वस्य सम्भवात्।

---

व्यवहारयोग्यत्वात्यन्ताभावानधिकरणत्वं स्वप्रकाशत्वं ब्रह्मणो-स्तीत्यर्थः। न च मोक्षे अव्याप्तिरित्याह—" तस्येति "। अनधिकरणत्वस्य स्वरूपतया तदापि सत्वात्। न च स्वरूपत्वे लक्षणत्वानुपपत्तिः त्वन्मये ब्रह्माभिन्नानन्दादौ गुणत्वव्यवहारवत् स्वरूपभूतेप्यनधिकरणत्वे लक्षणत्वव्यवहारादिति तात्पर्यार्थः ॥ ६३ ॥

यद्वा व्यावहारिकात्यन्ताभावो विवक्षितः ब्रह्मणि च योग्यत्वात्यन्ताभावस्य ब्रह्मरूपत्वेन तात्विकत्वात् नाप्यवेद्यत्वानिरुक्तिः फलाव्याप्यत्वस्यैव तत्वात् आवरणभङ्गे चित एव फलत्वादित्यभिप्रेत्याह—" यद्वेति " ॥ ६४ ॥ नन्वेवं घटादेरपि वृत्तिवेद्यतया फलविषयत्वाभावाद्रूप्यसुखादेरपि अपरोक्षव्यवहारयोग्यतया विशिष्टलक्षणस्यातिव्याप्तिरित्याशङ्क्याह—" फलव्याप्यत्वमिति "। घटादौ फलव्याप्यत्वस्य समर्थितत्वात् रूप्यसुखादौ साक्षिभास्यतयाऽपरोक्षव्यवहारेऽपि प्रमाणजन्यापरोक्षवृत्तिविषयत्वाभावान्नातिव्याप्तिरित्यर्थः ॥ ६५ ॥ तथा च फलाव्याप्यत्वसमानाधिकरणत्वस्य पर्यवसिततया सकलदोषनिरासादित्याह—" फलेति "। न च ब्रह्मणोऽपि वृत्तिप्रतिबिम्बिताचिद्रूपफल-

RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

ब्रह्मणः फलरूपत्वान्न तद्गोचरतेष्यते ॥ ६६ ॥
स्वस्मिन्स्वाविषयत्वेऽपि व्यवहारैकहेतुता ।
घटादेरप्रकाशत्वाद्विषयत्वं विना न सा ॥ ६७ ॥
चैतन्याविषयत्वं वा स्वप्रकाशत्वमुच्यते ।

---

भास्यत्वेन असम्भवः तस्य फलरूपत्वेन तद्विषयत्वाभावादित्याह— "ब्रह्मण इति"। अयमत्र निष्कर्षः. वृत्तिप्रतिबिम्बितचिज्जन्यातिशययोगित्वं वृत्या तत्प्रतिफलितचिता वाऽभिव्यक्ताधिष्ठानचिद्विषयत्वं वा फलव्याप्यत्वं चिज्जन्यातिशयश्च नावरणभङ्गो-नापि व्यवहारो विवक्षितः किन्तु भग्नावरणाचित्सम्बन्धः स च घटादावस्ति नात्मनि सम्बन्धस्य भेदगर्भत्वात् एवमुक्तचिद्विषयत्वमपि भेदघटितं घटादावस्ति नात्मनीति स्थितं प्रतिकर्मव्यवस्थायामिति ॥ ६६ ॥

नन्ववेद्यत्वे सत्यपरोक्षव्यवहारविषयत्वं तद्योग्यत्वं च व्याहतं तदपरोक्षव्यवहारे तद्विषयकस्फुरणस्य हेतुत्वादित्याशङ्क्यान्यत्र तद्विषयस्य तद्व्यवहारजनकत्वेऽपि स्फुरणस्य स्वाविषयस्य स्वस्मिन् व्यवहारजनकत्वं स्वभावभेदादस्तीत्यभिप्रेत्याह—"स्वस्मिन्निति" न च घटादावपि तथैवास्तु तेषामस्फुरणरूपत्वेन तद्विषयत्वं विना नियामकान्तराभावादित्याह—"घटादेरिति" ॥ ६७ ॥

यद्वा चिदविषयस्वरूपत्वमेव स्वप्रकाशत्वं चिदन्यस्य सर्वस्य चिद्विषयत्वादित्याह—"चैतन्येति" द्वाभ्यां । तुच्छस्य निःस्वरूपत्वेन नातिव्याप्तिशङ्का नाप्यसम्भवः स्वात्मनि वृत्तिविरोधेन

DR. RUPAK NATH (DR. RUPAK NATHJI)
www.astrology-tantra.com

चिदन्यस्य समस्तस्य चैतन्यविषयंत्वतः ॥ ६८ ॥
निःस्वरूपतया तुच्छे नातिव्याप्तिरसम्भवः ।
स्वस्मिन्वृत्तिविरोधेन स्ववेद्यत्त्वं न युज्यते ॥ ६९ ॥
यद्वा स्वव्यवहारे स्वातिरिक्तायाश्च सम्विदः ।
अनपेक्षत्वमेतद्वा स्वावच्छिन्नानपेक्षता ॥ ७० ॥
स्वप्रकाशत्वधर्मस्य स्वरूपत्वमिहेष्यते ।
नाद्वैतहानिर्बाधो वा नेदमिष्टं च वादिना ॥ ७१ ॥
स्वप्रकाशानुभूतिः स्यादनुभूतित्वहेतुना ।

---

छिदाया अच्छेद्यत्ववत्स्वस्य स्ववेद्यत्वायोगादित्यर्थ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ यद्वा स्वव्यवहारे स्वातिरिक्तसंविदनपेक्षत्वं स्वावच्छिन्नसंविदनपेक्षत्वं वा स्वप्रकाशत्वमित्याह—" यद्वेति " ॥ ७० ॥ ननु स्वप्रकाशत्वधर्मस्य तात्विकत्वं अद्वैतव्याघातः अतात्विकत्वे अस्वप्रकाशत्वस्यैव तात्विकत्वापत्त्या तत्साधकानुमानादेर्बाध इति चेन्मैवमित्याह—" स्वप्रकाशत्वेति " । न च परेषामिदमिष्टं वेद्यत्वविरोधिस्वरूपस्य परैरनङ्गीकारादित्यर्थ ॥ ७१ ॥

॥ स्वप्रकाशत्वलक्षणोपपत्ति· ॥

न च प्रमाणाभावः अनुभूतित्वहेतोर्व्यतिरेकिण एव प्रमाणत्वात् । नन्वत्र साध्याप्रसिद्धि· न च वेद्यत्त्वं किञ्चिन्निष्ठात्यन्ताभावप्रतियोगि धर्मत्वादित्यनुमानेन सामान्यतः प्रसिद्धिरिति वाच्यम् । अवेद्यत्वप्रसिद्धावपि विशिष्टसाध्याप्रसिद्धेस्तदवस्थत्वात् नचानुभूतित्वेनापि तावदेवसाध्यं वेद्यत्वस्य वृत्तिव्याप्यत्वरूपत्वे तु तदभावस्य चरमवृत्तिव्याप्यानुभूतौ बाधात् फलव्याप्यत्वरूपत्वे

www.astrology-tantra.com
RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )

यन्नैवं न तदेवं स्यादित्यस्ति व्यतिरेकिमा ॥ ७२ ॥
मानानपेक्षसिद्धेर्हि स्वतः सिद्धिपदार्थता ।

---

तु तदभावस्य मम घटादौ तव धर्मादौ शुक्तिरूप्यादौ च पक्षभिन्ने प्रसिद्धत्वेनासाधारणानैकान्तिकतापत्तिः अस्वप्रकाशस्वरूपत्वे प्रतियोग्यप्रसिद्ध्या ऽप्रसिद्धिरेव किञ्च अत्यन्ताभावप्रतियोगित्वं कुतश्चिद्व्यावर्तते चेत् तत्रैव व्यभिचारः न चेदत्र व्यभिचार इति चेन्न । चिदविषयस्वरूपत्वरूपं स्वप्रकाशत्वं अनुभूतित्वेन यदा साध्यते तदा वेद्यत्व चिद्विषयत्वमेव चिदन्यमात्रवृत्ति पक्षः अत्यन्ताभावप्रतियोगिस्वरूपत्वं साध्यं यथा च वृत्तिप्रतिफलिताचिद्विषयता घटादौ न ब्रह्मणि तथोपपादितमिति नासाधारण्यबाधौ नाप्यत्यन्ताभावप्रतियोगित्वस्य अत्यन्ताभावप्रतियोगित्वेऽपि व्यभिचारः अत्यन्ताभावप्रतियोगित्वस्य मिथ्यात्वेन अत्यन्ताभावप्रतियोगिन्येवात्यन्ताभावप्रतियोगितया यावत्सात्यन्ताभावप्रतियोगित्वं तस्य केवलान्वयित्वाभावात्, न चैवं ब्रह्मणि चिद्विषयत्वेऽपि तदत्यन्ताभावोपपत्त्या अर्थान्तरं घटादावप्येवं साध्यसत्वेनासाधारण्यं चेति वाच्यम् । चिद्विषयत्वविरोध्यत्यन्ताभावप्रतियोगिरूपत्वस्य साध्यत्वात् नार्थान्तरासाधारण्ये घटादौ तयोः सहावस्थित्या अविरोधात् ब्रह्मणि विरोधादिति तात्पर्यं अनुसृत्याह—"स्वप्रकाशेति" ॥७२॥

ननु स्वतःसिद्धानुभूतिरात्मेत्यर्थादुक्तं स्वत इत्यस्य स्वेनैवेत्यर्थे स्वविषयत्वापत्तिः प्रमाणं विनेत्यर्थे उपायान्तरस्यानुपन्यासेनासिद्ध्यापत्तिः अन्यथा नृश्रृङ्गादेरपि सिद्ध्यापात इत्याशङ्क्याह—"मानेति" । मानानपेक्षसिद्धेरेव स्वतःसिद्धिशब्दार्थत्वात् न च नृश्रृङ्गादावेवं प्रसङ्गः तदसत्वव्यावृत्तिफलकप्रमाणाभावात् प्रकृते च वृत्तिविषयतामात्रेण तत्सत्त्वात् सिद्धिरूप आत्मनि सिद्ध

DR. RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

नृशृङ्गादेरसत्त्यत्वान्न मानामानयोग्यता ॥ ७३ ॥
आत्मनः स्वप्रकाशत्वं चिद्रूपत्वादपीष्यते ।
चिद्रूपत्वं श्रुतेर्मानात्स्वयं ज्योतिर्गिरेष्यते ॥ ७४ ॥
आत्मैवास्ययतो ज्योतिः स्वयं ज्योतिस्तदुच्यते ।
स्वातिरिक्तानपेक्षत्वात्स्वप्रकाशत्वमात्मनः ॥ ७५ ॥
दुर्विवेकतया जाग्रदवस्थायामनेकधा ।
आदित्यादेः समावेशात्स्वयं ज्योतिष आत्मनः ॥७६॥
सुविवेकतया स्वप्ने तदन्यस्याखिलस्य हि ।
अभावाज्ज्योतिषोऽत्रेति सफलं स्याद्विशेषणं ॥ ७७ ॥

---

इति व्यवहारस्य सिद्धप्रयुक्तव्यवहारविषयतया गौणत्वमिति तात्पर्यार्थः ॥ ७३ ॥

॥ आत्मनः स्वप्रकाशत्वोपपत्तिः ॥

एवं चिदभिन्नस्यात्मनोऽपि स्वप्रकाशत्त्वं चिद्रूपत्वात्साधनीयमित्याह— " आत्मन " इति ॥ ७४ ॥ 'अत्रायं पुरुषः स्वयं ज्योति'रित्यादिश्रुतिरपि स्वप्रकाशत्त्वे प्रमाणमित्याह— "आत्मैवेति" । 'अस्तमित आदित्ये याज्ञवल्क्ये'त्यादिना किं ज्योतिरयं पुरुष इत्यन्तेन ज्ञानसाधनालोकाद्यभावे जीवस्य कथं स्फुरणमित्युक्ते 'आत्मैवास्य ज्योतिः स्वयंज्योति'रित्यादिना स्वातिरिक्तानपेक्षतया स्वप्रकाशत्वमुक्तमित्यर्थः ॥ ७५ ॥ नन्वात्मनः सदा स्वप्रकाशत्वेन श्रुतावत्रेत्यस्य वैयर्थ्यमित्यत आह—" दुर्विवेकतयेति " द्वाभ्यां ॥ ७६ ॥ ७७ ॥

RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

तथाऽऽत्मा स्वप्रकाशोऽयं स्वसत्तायां प्रकाशतः ।
व्यतिरेकविहीनत्वात्प्रकाशस्याश्रयत्वतः ॥ ७८ ॥
प्रकाशकर्तृभावाच्चेत्युक्तं विवरणे स्फुटं ।
अत एव घटादौ नाप्रकाशेऽतिप्रसङ्गतः ॥ ७९ ॥
निर्द्धर्मकतया ब्रह्मावेद्यत्वेन निरञ्जनं ।
अनन्तादिगिरां लक्ष्यं न वाच्यं हेत्वभावतः ॥ ८० ॥
लक्ष्यत्त्वव्यवहारोऽपि वाच्यत्त्वाभावहेतुकः ।

---

तत्र विवरणोक्तानुमानं प्रमाणमाह—“ तथेति ” द्वाभ्यां । आत्मा स्वप्रकाशः स्वसत्तायां प्रकाशव्यतिरेकविधुरत्वात् प्रकाशाश्रयत्वात् प्रकाशकर्तृत्वात्प्रदीपवत् स्वप्रकाश्यत्वस्य बाधिततया तदप्रकाश्यत्वेन पक्षस्य विशेषिततया वाऽर्थान्तराभावात् सजातीयप्रकाशाप्रकाश्यप्रकाशत्वमेव साध्यं एवं न घटादिवदस्वप्रकाशत्वेनोपपत्तिः स्वाप्रकाश्यसजातीयाप्रकाश्यत्वेनावेद्यत्वस्य लाभात् विजातीयस्याप्रकाशत्वात् ज्ञानप्रभानुगतं च प्रकाशत्वमावरणाभिभावकत्वं एवं च न स्वविषयत्वरूपस्वप्रकाशत्वं किन्त्ववेद्यत्वे सति अपरोक्षव्यवहारयोग्यत्वमिति सिद्धमिति भावः ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ॥ आत्मनः स्वप्रकाशत्वोपपत्तिः ॥

निर्द्धर्मकतया अवेद्यतया च ब्रह्मानन्तादिपदलक्ष्यं न वाच्यं प्रवृत्तिनिमित्ताभावादित्याह—“ निर्द्धर्मकतयेति ” ॥८०॥

नन्ववाच्यशब्देनोच्यते चेत् वाच्यत्वसिद्धिर्लक्ष्यते चेत् अवाच्यत्वरूपमुख्यार्थस्याभावात्कथं लक्षणा भावे वा ब्रह्म न अवाच्य किन्तु तीरवत् अवाच्यत्वरूपमुख्यार्थसम्बन्धिमात्रमिति स्यात् मुख्यार्थहीनस्यापि ब्रह्मलक्षकत्वे घटपदमपि घटलक्षकं स्यादित्याशङ्क्यावाच्यत्वरूपमुख्यार्थाभावेऽपि नञ्समभिव्याहृतवाच्यशब्देन

DR.RUPAK NATH
www.astrology-tantra.com

निर्द्धर्मकतया वृत्तेर्निमित्ताभावतो गिरां ॥ ८१ ॥
सत्यज्ञानादिशब्दास्तेऽध्यस्तधर्मैकवाचिनः ।
लक्षयन्ति परब्रह्माखण्डव्यक्तिं च तात्विकीं ॥ ८२ ॥
वस्तुनः पदलक्ष्यत्वेप्यपदार्थत्वसम्भवात् ।

---

वाच्यत्वात्यन्ताभावबोधनद्वारा स्वरूपलक्षणयैव पर्यवसानात् एवं निर्विशेषपदमपि अखण्डपदलक्षकतायामेव मुख्यार्थावश्यम्भावनियमादित्यभिप्रेत्याह—" लक्ष्यत्वेति " । नन्वेवं लक्ष्यपदेनापि लक्ष्यत्वे तीरस्यागङ्गात्ववद्ब्रह्मणोऽलक्ष्यत्वापत्तिरित्याशङ्क्येष्टापत्त्या समाधत्ते—" निर्द्धर्मकतयेति " । सर्वथा निर्द्धर्मकत्वात् लक्ष्यव्यवहारस्य च वाच्यत्वाभावनिबन्धनत्वं न चैवं लक्ष्यत्वाभावेन वाच्यत्वव्यवहारप्रसङ्गः गौणस्य तस्यापीष्टत्वादित्यर्थः ॥ ८१ ॥ सत्यज्ञानादिपदानां वा कल्पितधर्मवाचिनां ब्रह्मरूपव्यक्तिलक्षकतया सखण्डत्वानापातादित्याह(१)–"सत्येति" ॥८२॥

ननु निर्विशेषादिपदानां समासपदतया लक्ष्यादिपदानां च यौगिकतया वाक्यतुल्यत्वान्न वाचकतेति वक्तुमशक्यं अन्विताभिधानपक्षे तेषामपि वाचकत्वात् अभिहितान्वयपक्षेऽपि वाक्य एवाभिहितान्वयविकारेण प्रकृतिप्रत्यययोरन्विताभिधायकत्वाद्वाक्यतुल्यस्यापि वाचकत्वात् ब्रह्मणः पदार्थसंसर्गरूपत्वे सखण्डत्वापत्त्या पदार्थत्वे वाच्यत्वापरिहारादित्याशङ्क्याह—" वस्तुत इति " ।

---

(१) नच सत्वादिधर्माश्रयतया लक्ष्यत्वाभावे मत्वसम्बन्धित्वमात्रेण लक्ष्यस्य पुंसोऽमत्वत्ववत्सत्त्वादिसम्बन्धित्वमात्रेण लक्ष्यस्य ब्रह्मणोऽसत्त्वाद्यापत्तिरिति वाच्यम् । कल्पितचन्द्रत्वादिजाते परमार्थचन्द्रव्यक्तितादात्म्येनाचन्द्रत्वाभाववद्ब्रह्मणोऽपि सत्त्वाद्यभावानापत्ते यथाऽऽहु लक्ष्यान्वयव्यक्तिरपि ब्रह्म सत्त्वादि न जहाति न इति, अतएव स्वप्रकाशादेरब्रह्मत्वे यद्ब्रह्मेष्ट तत्तदब्रह्मेति साधु समर्थितो ब्रह्मवाद इति निरस्तम् ।

DR. RUPAK NATH (DR. RUPNATHJI)
www.astrology-tantra.com

अखण्डत्वेऽपि वाक्यार्थभावो ब्रह्मणि सिद्ध्यति ॥८३॥
अत्रान्विताभिधानेऽपि स्वरूपे लक्षणेष्यते ।
अन्वितस्य न चावाच्यभावस्य क्षतिरस्ति वा ॥८४॥
अवाच्याशब्दमस्पर्शमखण्डं श्रुतयो जगुः ।
स्वार्थे मानतया तासां न चान्याय्यप्रकल्पना ॥ ८५ ॥
लक्षणास्वीकृतेः शक्तिमात्रस्यैव निराकृतेः ।
निर्द्धर्मकतया वाच्यभावबाधादुपाधितः ॥ ८६ ॥

---

पदलक्ष्यत्वेप्यपदार्थत्वोपपत्तिः अखण्डत्वेपि वाक्यार्थत्वस्योपपादितत्वात् अन्विताभिधानेऽन्वितवाचकस्यापि स्वरूपे लक्षणाङ्गीकाराच्च च तस्यावाच्यत्वासिद्धिः अखण्डब्रह्मसिद्ध्युपायत्वेन प्राप्तस्यावाच्यत्वादेर्निवारकाभावेनानुषङ्गिकतया सिद्धे 'यतो वाचो निवर्तन्त' 'अशब्दमस्पर्श'मित्यादिश्रुतयश्चात्रानुसन्धेयाः अवाच्यशब्दवदशब्दशब्देऽपि व्याघाताभावात् नचेयं श्रुतिरद्भुतत्वाभिप्राया श्रूयमाणार्थे .बाधकाभावादन्याय्यकल्पना तत्रोचितेति त्रयाणां योजना ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ननु यतो वाच इत्यत्रापि मनसा सहेति श्रुतमनोवृत्तेरिवान्तःकरणवृत्तिव्याप्ये ब्रह्मणि वाग्वृत्तेरपि सर्वथा निषेधायोग इति चेन्मैवमित्याह—“ लक्षणेति ” । ननु तात्पर्यविषयो ब्रह्म वाच्यं वस्तुत्वाल्लक्ष्यत्वाच्च तीरवदिति चेन्मैवं निर्धर्मकतया वाच्यत्वबाधात् तदुन्नीतसधर्मकत्वाद्युपाधिसम्भवाच्चेति(२) भावः ॥ ८६ ॥

---

( १ ) परमार्थसदादिकं कस्य चिद्वाचकं पदत्वादित्यपि न, किमत्र पदत्वं न तावत्सुप्तिङन्तत्वं समासपदस्याशक्तत्वेन राजपुरुषादौ व्यभिचारात् नापि शक्तत्वं साधारणविशेषात् अवयवद्वारा समासपदे वाचकत्वं चेदिष्टमेव, नापि सत्यादिवाक्यं वाक्यार्थतात्पर्यकत्वयुक्तं वाक्यत्वादित्यपि, विषं भुङ्क्ष्वेत्यादौ व्यभिचारादिति ।

वेदान्तवाक्यजज्ञाननिवर्त्याज्ञानगोचरं ।
बोधयन्ति प्रमाणत्वाद्वेदान्ता ब्रह्म चिद्घनं ॥ ८७ ॥
दृष्टा गुणक्रियाजातिसम्बन्धाः शब्दहेतवः ।
नात्मन्यतमोह्येषां तेनात्मा नाभिधीयते ॥ ८८ ॥
आरोपितगुणादेस्तु तात्पर्यागोचरत्वतः ।
अवाच्यत्वेऽस्ति तात्पर्यं सर्ववेदान्तसङ्गिरां ॥ ८९ ॥
ब्रह्मण्यवाच्ये योविद्वान्वाच्यतामभिवाञ्छति ।
स निस्त्रपो निमित्तानां विरहैः प्रतिबोध्यतां ॥ ९० ॥

---

नन्वत्रावाच्यत्वे लक्ष्यत्वानुपपत्ति वाच्यार्थसम्बन्धित्वेन ज्ञानस्यैव लक्ष्यत्वात् तज्ज्ञानं च न शब्दभिन्नेन, उपनिषन्मात्रगम्यत्वात् नापि स्वप्रकाशतया, नित्यसिद्धे शब्दवैयर्थ्यात् अवाच्यशब्दस्य च लक्षकस्यैव वक्तव्यत्वात् तत्रापि वाच्यसम्बन्धित्वेन ज्ञेयत्वे अनवस्थेत्याशङ्क्य समाधत्ते—“ वेदान्तेति ” । तथा ज्ञानमुपस्थितौ उपयोग ब्रह्म स्वप्रकाशतया स्वत एवोपस्थितमनि किं तेन नचैवं शब्दवैयर्थ्यं आवरणाभिभावकवृत्त्युपयोगादत एव नानवस्थापि ॥ ८७ ॥ तस्मात्प्रवृत्तिनिमित्तस्य दुर्निरूपत्वादवाच्यत्वमित्यत्र वृद्धसंमतिमाह—“ दृष्टेति ” ॥ ८८ ॥ न चारोपितगुणाश्रयतया वाच्यता तस्य तात्पर्याविषयतया तात्पर्यविषये अवाच्यत्वस्य स्थितत्वादित्याह—“ आरोपितेति ” द्वाभ्यां ॥ ८९ ॥ ॥ ९० ॥ तस्मान्निर्विशेषत्वादेव जीवब्रह्माभेद. सिद्ध.भेदकासम्भ-

घटादीनां मिथो भेदो भेदो जीवेशयोर्मिथः ।
भ्रान्त्या प्रतीयमानत्वान्मिथ्या रज्जुभुजङ्गवत् ॥ ९१ ॥
सत्तर्कैः श्रुतिभिः स्मृत्या भिदाया बाधितत्वतः ।
प्रतीत्येकशरीरस्य न भेदस्यास्ति वस्तुता ॥ ९२ ॥
भेदखण्डनयुक्तीनां तत्त्वतो भेदवारणात् ।
व्यावहारिकभेदस्यावारकत्वान्न दुष्टता ॥ ९३ ॥

---

वात्तथा च जडानां जडचैतन्ययोर्मिथो भेदो जीवेशयोश्च भेदोऽप्रामाणिकत्वान्मिथ्यैवास्ति रज्जुसर्पादिवदित्यभिप्रेत्याह—" घटादीनामिति " ॥ ९१ ॥

॥ ब्रह्मणः शब्दावाच्यत्वोपपत्तिः ॥

ननु भेदस्य प्रमाणसिद्धत्वादपलापो न युक्त इत्यत आह—" नेति " । न हि वयं भेदप्रतीतेः स्वरूपं वा कारणं वाऽपलपामः किन्तु बाधितविषयत्वं ब्रूमः व्याप्तिसध्रीचीनतया अशुष्कैस्तर्कैरद्वयपरया श्रुत्या स्मृत्या च भेदस्य बाधितत्वात् विषयभेदादिना प्रत्यक्षविरोधस्य परिहृतत्वेन श्रुत्यादावुपचरितार्थत्वाभावादिति तात्पर्यार्थः ॥ ९२ ॥

नन्वभेदस्याप्येवं निरासः न चाभेदखण्डनयुक्तीनां स्वस्य स्वाभेदोऽपि न सिद्ध्येदिति स्वव्याघातादाभासता भेदखण्डनयुक्तीनामपि भूषणयुक्त्यभेदेन स्वव्याघातकतायाः समानत्वादिति चेन्नेत्याह—" भेदेति " । तथा च स्वाव्याघातकतोपपत्तिर्भेदखण्डनयुक्तीनामिति भावः ॥ ९३ ॥ ननु भेदबाधकं न भेदविषयमेव

DR.RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

भेदभ्रमाद्यधिष्ठानतत्त्वगोचरबोधतः ।
भ्रमे समूले विध्वस्ते नैव भेदः प्रमाणभाक् ॥ ९४ ॥
अनिर्वाच्यतया भेदो बाध्यत्वेनैव सम्मतः ।
ऐक्यं ब्रह्मस्वरूपत्त्वादबाध्यं श्रुतिबोधितं ॥ ९५ ॥
व्यवहारव्यवस्थापि व्यावहारिकभेदतः ।

---

तत्साधकतापत्तेर्नाप्यभेदविषयं एवं हि तदन्यस्तद्विरोधी तदभावो वा नञर्थो विषयो वाच्यः सर्वथा च भेदो दुष्परिहरः तदनन्यत्वे तद्विरोधितदभावत्वयोरयोगात् भेदाभावग्राहिणाऽपि प्रतियोगिविलक्षणतयैवाभावस्य ग्रहणाच्च औदासीन्येन प्रवृत्तस्येदमितिज्ञानवदबाधकत्त्वाच्चेति चेन्नैवमित्याह—" भेदभ्रमेति " । अयमर्थः । पारमार्थिकत्वाकारेण भेदाभावविषयस्यैव बाधकत्वात् न च भेदस्य दुष्परिहरता व्यावहारिकभेदेनैव व्यावहारिकतद्विरोधित्वतदभावत्त्वयोरुपपत्तिसम्भवात् यक्षानुरूपोबलिरिति न्यायाद्भेदभ्रमाधिष्ठानतत्त्वगोचरं ज्ञानं भ्रमबाधकमित्युपपन्नं उक्तरीत्या भेदवैलक्षण्येन तद्ग्रहणोपपत्तेरिति ॥ ९४ ॥ भास्यमानो यो भेदः स स्वरूपादिपक्षान्तर्भावबहिर्भावाभ्यां वा अन्येन वा धर्मान्तरेणानिर्वाच्य इत्याह—"अनिर्वाच्यतयेति" । नच तर्काभासेन अनिर्वाच्यत्वे ऐक्यस्यापि तत्प्रसङ्ग भेदबाधकस्यानाभासतया उक्तत्वादित्याह—" ऐक्यमिति " । ऐक्यभेदयोः श्रुत्यनुग्रहानुग्रहाभ्यां विशेषाच्चेति भाव ॥ ९५ ॥

तात्त्विकभेदाभावेऽपि कल्पितव्यावहारिकभेदेन व्यवस्थोपपत्तिरित्याह—" व्यवहारेति " । नच कल्पितेन कल्पितकार्य-

RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

सिद्धा न भेदवस्तुत्वमपि साऽपेक्षते स्वयं ॥ ९६ ॥
अभेदे भेदमारोप्य धर्मधर्मिभ्रमावहा ।
माया भ्रान्तिकरी दक्षाऽप्यसम्भावितदर्शने ॥ ९७ ॥
निरपेक्षस्वरूपस्य सापेक्षत्त्वं न सम्भवेत् ।

---

प्रतिबन्धायोगः अविद्यया स्वप्रकाशरूपवस्तुकार्यप्रतिबन्धदर्शनात् कल्पितकान्तया विश्लेषकार्यप्रतिबन्धदर्शनाच्चेति तात्पर्यार्थ. ॥ ९७ ॥ ननु भेदस्य व्यावहारिकसत्वार्थमपि त्वया अन्योन्याश्रयादिकमुद्धरणीयं परस्परमपि सापेक्षेण व्यवहारस्याप्यभावात् न हि व्यावहारिकमृद् स्वजन्यघटसापेक्षमित्याशङ्क्याह—" भेदइति " अस्माकमविद्यासामर्थ्यात्सर्वानुपपत्तिविधूननोपपत्ति. न हि मायायामसम्भावनीयं नाम तथा च परस्पराश्रितमपि इन्द्रजालवद्दर्शयिष्यति न चेश्वरसामर्थ्यात् तादृशमपि सत्यं स्यादिति वाच्यं उभयसिद्धमृषाभूतेन्द्रजालस्थले कारणादिव्यवस्थोल्लङ्घिकार्यादिदर्शनवदन्यत्र तथा अदर्शनात् दर्शने च मृषात्व एव पर्यवसानात् आपादनं च भेदस्तत्प्रतीतिश्च यदि मायिकी न स्यात् सर्वव्यवस्थोल्लङ्घिनी न स्यात् सर्वव्यवस्थोल्लङ्घिनी चेयं तस्मान्मायिकीति विपर्ययपर्यवसानात् मायिके व्यवस्थोल्लङ्घनस्य दर्शनेन व्याप्तिसिद्धेः तस्मात् श्रुत्या स्वव्याघातकयुक्त्या च भेदस्य बाधादभेदस्याबाधाच्च पटे स्वाभेदाभेदयोर्व्यावहारिकत्वे समानेऽपि स्वाभेदं परित्यज्य भेदस्यैव सर्वथा प्रद्वेषो नाकारणक इति तात्पर्यार्थ. ॥ ९७ ॥

॥ सामान्यतो भेदखण्डनम् ॥

ननु निरपेक्षस्वरूपत्त्वे सापेक्षत्वानुपपत्तिरिति यदुक्तं तत्तायदयुक्तं अविद्यानिवृत्तेर्जीवब्रह्मैक्यस्य च तव मते मतद्वयेऽपि स्थितौ व्यक्तिसापेक्षस्य जातिमात्रस्य प्रतीतौ सापेक्षस्य नीलतरत्वादेरर्थप्रकाशात्मकज्ञानस्य ब्रह्मणि ब्रह्माभेदस्य अस्ति ब्रह्मेत्यादौ काल-

DR. RUPAK NATH
RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

क्वचिदाविद्यका सा चेदपेक्षा तेन का क्षतिः ॥ ९८ ॥
अविद्याविनिवृत्तिश्च जीवब्रह्मैक्यमेव वा ।
अपेक्षते प्रतीतौ तत्सापेक्षत्वं हि मायिकं ॥ ९९ ॥
तात्त्विके निरपेक्षत्वे नविरोधोस्ति तावता ।
न हि काल्पनिकं किञ्चिद्वस्तुतत्त्वमपि स्पृशेत् ॥१००॥
चैतन्ये कल्पिताः सर्वे ये विरोध्यनुरोधिनः ।
तेषां सापेक्षताप्येवं कल्पिता चित्पदे ॥ १ ॥

---

सापेक्षस्यास्तित्वस्य निरपेक्षब्रह्मात्मत्वादिरूपताया दर्शनादित्याशङ्क्य समाधत्ते—“ निरपेक्षस्वरूपस्येति ” त्रिभिः । एतदुक्तं भवति अविद्यानिवृत्तिजीवब्रह्मैक्ययोः प्रतीतौ सापेक्षत्वस्याऽऽविद्यकतया तात्त्विकनिरपेक्षत्वविरोधित्वाभावाज्जातिमात्रस्य व्यक्त्यभेदासिद्धिः व्यक्तिसमानसत्ताकघटत्वादावभावात् व्यक्त्यसमानसत्ताकसत्तादिजातौ तु सापेक्षत्वस्य काल्पनिकत्वात् नीलतरत्वादेर्व्यक्तिरूपतासिद्धौ हेतोरभावात् अर्थप्रकाशात्मकज्ञानस्य ब्रह्माभेदस्य च सापेक्षतायाः काल्पनिकत्वात् अस्ति ब्रह्मेत्यादावप्येवमेव तथा च तत्त्वतो निरपेक्षस्य सामानाधिकरण्यासिद्ध्या न तर्काभासता व्याप्तिसिद्धेरत एवैक्यस्यास्वरूपत्वे अद्वैतहानिर्मिथ्यात्वे भेदस्य सत्यत्वप्रसङ्ग(१)इति निरस्तं ऐक्यस्य ब्रह्मभेदानङ्गीकारादिति ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ २०० ॥ सिद्धान्तरहस्यमाह—“ चैतन्यइति ” ॥ १ ॥

---

( १ ) यत्र यद्धर्मस्तत्र तद्विरोधि तज्ज्ञानाबाध्यं यथा शुक्तावरूप्यत्वं यत्र तदैक्यबाधा तत्र तद्भेदस्तज्ज्ञानाबाध्यः यथा दूरस्थवनस्पत्योर्भेद इति वा यत्र यद्धर्मस्तत्र तद्विरोधि तात्त्विकं यथा वृक्षाग्रभूतलस्याधारत्वे सत्यत्वं तात्त्विकमिति वा व्याप्तेरिति शेष ।

www.astrology-tantra.com
DR. RUPAK NATH (DR. RUPNATHJI)

ऐक्यस्य निरपेक्षत्वे भेदभ्रान्तिनिवृत्तये ।
एकवाक्यत्वसद्भावात्स्वरूपपरसद्गिरां ॥ २ ॥
अतः काल्पनिको भेदः सर्वत्र व्यावहारिके ।
वस्तुन्यात्मन्यभेदस्तु तात्त्विकः श्रुतिबोधितः ॥ ३ ॥
सापेक्षत्वात्समावधेश्च तत्त्वे द्वैतप्रसङ्गतः ।

---

नन्वैक्यस्य निरपेक्षत्वे तत्त्वरूपदार्थपराणां 'सत्यं विज्ञानघन' इत्यादीनामैक्यपरमहावाक्यैकवाक्यत्वाभावेन वैयर्थ्यं स्यादित्याशङ्क्य निरस्यति—" ऐक्यस्येति " । ऐक्यस्य स्वप्रकाशब्रह्माभिन्नतया स्थितिप्रतीत्यादौ निरपेक्षत्वेऽपि यथालक्षितार्थभेदभ्रमनिवर्त्तकवृत्तिजनने पदार्थसापेक्षतया स्वरूपपरवाक्यानामेकवाक्यताया सत्त्वात् भेदरूपप्रतियोगिसापेक्षत्वेन तत्र सापेक्षत्वव्यवहारादित्यर्थ ॥ २ ॥ न चैतावता सापेक्षत्वापत्तिरैक्यस्येत्याह— " अत इति " । काल्पनिकस्य सापेक्षत्वस्यापीष्टत्वात् । न च भेदेऽपि एवमेवास्तु भेदस्य निषेधप्रतियोगितया श्रुतत्वेन ब्रह्मरूपत्वाभावात् न च तत्राभेदश्रुतिरस्ति । एतेन स्वरूपेण निरपेक्षस्याप्यभेदस्याभेदत्वेन सापेक्षत्ववत्स्वरूपेण निरपेक्षस्याऽपि घटस्य भेदत्वेन सापेक्षत्वमस्तु अवच्छेदकभेदेन सप्रतियोगित्वाप्रतियोगित्वे अपि तथादिना निरस्तं, भेदस्य स्वरूपतो निरपेक्षत्वे निष्प्रतियोगिकत्वे च परान्प्रतीव स्वमपि प्रत्यविशिष्टतया स्वव्याघातः नचैवमभेदस्यापि स्वान्प्रतीव परान्प्रति तथा सति तथात्वापत्तिरिष्टापत्तेः धर्मत्वादिना भेद परं कल्पितः स्वरूपतस्त्वभेद एव तथासति परत्वं परं व्याहतं न स्वरूपत्वमपीत्यर्थः ॥ ३ ॥

यथैक्यं ब्रह्मणो रूपं न तथा भेदो वस्तुनो रूपमित्यत्राचार्यसंमतिमाह—" सापेक्षत्वादिति " । घटस्य भेदत्वे एकतरप-

DR. RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

एकाभावादसन्देहान्नरूपं वस्तुनो भिदा ॥ ४ ॥
कल्पितो धर्मभेदोऽस्ति ज्ञानानन्दादिगोचरे ।
तदैक्यं श्रुतिसंसिद्धं भेदभ्रान्तिनिवर्तकं ॥ ५ ॥
प्रतियोग्यादिसापेक्षं भेदज्ञानं न तात्विके ।
ऐक्यज्ञाने प्रमाणोत्थे वस्तुतः प्रतिबन्धकं ॥ ६ ॥
अस्वव्याघातकैरेवं जातिभिन्नैः सदुत्तरैः ।
निरस्तं भेदमादाय स्वात्माभेदो निषीदति ॥ ७ ॥

---

रिशेषापत्तिः स्यादिति भावः ॥ ४ ॥ नन्वैक्यस्य ज्ञानस्यानन्दस्य च ब्रह्मस्वरूपत्वे एकतरपरिशेषापत्तिस्तवापि समाना न च वस्तुन एकत्वेनेष्टापत्तिः प्रकृतेऽपि साम्यादिति तत्राह—"कल्पित इति" एकतरपरिशेषापत्त्या घट इति भेद इति विलक्षणव्यवहाराभावस्यापादनात् न च ज्ञानानन्दादावपि विलक्षणव्यवहारो न स्यादिति वाच्यं कल्पितधर्मभेदमादायोपपत्तेरित्यर्थः । अयं भावः भेदस्य हि स्वरूपत्वे इदं भिन्नमस्य भेद इति सम्बन्धित्वेन धीर्न स्यात् नचानन्दो ब्रह्मण इति वदुपपत्तिः प्रमाणसिद्धे ह्यैक्ये भेदव्यवहारस्यौपचारिकत्वं कल्प्यते राहोः शिर इत्यादिवत् न च प्रकृते तथा भेदैक्ये मानाभावाद्बाधकाच्चेति ॥ ५ ॥ ननु त्वन्मतेऽपि बिम्बब्रह्मजीवानां प्रत्यक्षब्रह्माभेदे इदमनेन भिन्नमस्यामुष्माद्भेदः इमे अभिन्ने अनयोरभेद इत्येवं प्रतीतिः स्यात् तथा च धर्मप्रतियोगिभावधर्मित्वावच्छिन्नधीश्च भेदज्ञानाधीनेति तद्विरुद्धाभेदज्ञानानुपपत्तिरित्याशङ्क्याह—" प्रतियोग्यादीति " । काल्पनिकभेदज्ञानस्य धर्मिप्रतियोगिभावद्वित्वावच्छिन्नज्ञाननिर्वाहकस्य तात्त्विकाभेदज्ञानप्रतिबन्धकत्वायोगादित्यर्थः ॥ ६ ॥ तस्मादात्मैक्यं विजयतेतरामित्याह—" अस्वव्याघातकैरिति " ॥ ७ ॥

॥ विशेषतो भेदखण्डनम् ॥

RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

न समानविशेषादिरूपभेदः प्रमाणयुक् ।
अभेदो विजयी तस्माद्वेदान्तैकप्रमाणभाक् ॥ ८ ॥
एवं प्रत्यक्षतः प्राप्तभेदस्यैव निवारणात् ।
असाक्षात्कृतजीवेशभेदादौ का कथा तत्र ॥ ९ ॥
अप्रत्यक्षतयेशस्य तद्धर्मिप्रतियोगिकः ।
भेदोऽशक्यो ग्रहीतुं सोऽन्यथासिद्धस्तु तद्ग्रहः ॥१०॥
भेदानुवादिनी श्रौती गीरवच्छिन्नमार्गगा ।

---

स्वरूपभेदान्योन्याभावभेदादरप्रमाणकत्वान्न भेदगन्धोऽपि प्रमाणपथमवतरतीत्याह—“ नेति ” ॥ ८ ॥ जीवेशभेदनिराकरणं कैमुत्येन प्रतिजानीते—“एवमिति” ॥९॥ “अप्रत्यक्षतयेति” । ईश्वरस्याप्रत्यक्षत्वेन तद्धर्मिकस्य तत्प्रतियोगिकस्य वा भेदस्य ग्रहीतुमशक्यत्वादित्यर्थः ॥ १० ॥ ननु तद्धर्मिकभेदस्य जीवाप्रत्यक्षत्वेऽपि स्वधर्मिकभेदस्तथाऽपि तत्प्रत्यक्षो नाहं सर्वज्ञो नाहं निर्दुःख इत्यनुभवात् न च योग्यप्रतियोगिकत्वमभावे योग्यत्वप्रयोजकमिति वाच्यं स्तम्भः पिशाचो नेत्यादिप्रत्यक्षरूपफलबलेन संसर्गाभावे तथात्वेपि अन्योन्याभावे अधिकरणयोग्यताया एव तन्त्रत्वात् ‘तान्यहं वेद सर्वाणि न त्वं वेत्थ परंतप । उत्तमः पुरुषस्त्वन्य ’ इत्यादिवचनानुमितप्रत्यक्षसिद्धत्वमेवेति चेन्नेत्याह—“ अन्यथासिद्धस्तु तद्ग्रह इति ” । उक्तानुभवस्यान्तःकरणाद्यवच्छिन्नचैतन्यस्य तदनवच्छिन्नचैतन्यप्रतियोगिकभेदावगाहितया शुद्धचैतन्यधर्मिकनिर्दुःखादिप्रतियोगिकभेदानवगाहि-

RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

अनवच्छिन्नचिद्धातोरभेदः श्रुतिसम्मतः ॥ ११ ॥
सौषुप्तिकानुभूतिस्त्वज्ञानावच्छिन्नभेदगा ।
न शुद्धेऽथ न जीवानां मिथो भेदे प्रमाऽक्षजा ॥ १२ ॥
नानुमानाद्भिदासिद्धि स्तयोर्निर्द्धर्मकत्वतः ।

---

त्वमित्यर्थः । द्वा सुपर्णेत्यादिश्रुतिस्त्ववच्छिन्नभेदानुवादिनी-त्याह—“ भेदेति ” । भेदनिषेधश्रुतिस्तु अनुमानादिप्रसक्तभे-दनिषेधपरेति भावः ॥ ११ ॥ ननु योऽहमस्वाप्सं यस्य ममाज्ञानसंसारादि सोऽहं निर्दुःखो नेति सुषुप्तिकालीनान्तः-करणानवच्छिन्नाभेदेनाज्ञानाद्याश्रयभेदेन च प्रत्यभिज्ञायमाने शुद्धे भेदप्रतीतिरित्याशङ्क्याह—“ सौषुप्तेति ” । एतावताऽप्यज्ञाना-वच्छिन्न एव भेदग्रहो न तु शुद्धे न हि सुषुप्तौ अन्तःकरणानव-च्छिन्नत्ववदज्ञानानवच्छिन्नत्वमप्यस्तीत्यर्थः । चैत्रमैत्रादिजीवानाम-प्रत्यक्षतया तत्र भेदग्रहोऽन्तःकरणाद्यवच्छिन्नमेवावगाहते न तु शु-द्धामित्यर्थः ॥ १२ ॥

॥ भेदपञ्चके प्रत्यक्षस्याप्रमाणत्वोपपत्तिः ॥

नाप्यनुमानं जीवेश्वरौ भिन्नौ विरुद्धधर्माधिकरणत्वात् दहन-तुहिनवदित्येवं रूपं भेदे प्रमाणमित्याह—“ नेति ” । दुःखा-द्यन्तःकरणादिधर्मत्वेन स्वरूपासिद्धेः एकत्रैव निर्दुःखत्वदुःखवत्त्व-योरवच्छेदभेदेन दृष्टतया धर्मिभेदासाधकत्वात् भेदमात्रे सिद्ध-साधनात् तात्त्विकभेदसाधने साध्यवैकल्यात् ब्रह्म तत्त्वतो जीवा-द्भिन्नं सर्वज्ञत्वात् व्यतिरेकेण जीववदित्यत्राप्रसिद्धविशेषणत्वात् ब्रह्म धर्मिसत्तासमानसत्ताकभेदवदिति साध्यकरणे असाधारण्यात् आत्मत्वं नानाव्यक्तिनिष्ठं जातित्वात् पृथिवीत्ववदित्यत्रात्मैक्यत्रा*

DR. RUPNATHJI (DR. RUPAK NATH)
www.astrology-tantra.com

स्वरूपासिद्धितः साध्यवैकल्यात्सिद्धसाधनात् ॥ १३ ॥
अप्रसिद्धविशेषत्वादसाधारण्यदूषणात् ।
अन्यथैवोपपत्त्या च सर्वस्मिन्सिद्धसाधनात् ॥ १४ ॥
अभ्रान्तत्वादयो धर्मा न तयोर्भेदसाधकाः ।
ज्ञानाज्ञानप्रयुक्तास्ते न स्वरूपनिबन्धनाः ॥ १५ ॥
शुद्धयोस्तत्वमोर्नैव धर्मित्वमवकल्पते ।
निर्विशेषतया तत्र भेदगन्धोऽपि दुर्लभः ॥ १६ ॥

---

दिनं प्रत्यसिद्धेः कल्पितव्यक्तिनिष्ठत्वेन सिद्धसाधनाच्च ईश्वरो जीवप्रतियोगिकतात्त्विकभेदवान् सर्वशक्तित्वात् सर्वज्ञत्वात् सर्वकार्यकर्तृत्वात्स्वतन्त्रत्वाद्वा व्यतिरेकेण जीववत् जीवो वा ब्रह्मप्रतियोगिकतात्विकभेदवान् अल्पशक्तित्वादल्पज्ञत्वादल्पकर्तृत्वात्संसारित्वाद्वा व्यतिरेकेण ब्रह्मवदित्यादिषु भेदस्य च स्वरूपत्वेन तद्वत्वसाधने बाधाभावे च विशेषमादाय तदुपपादनं तस्य स्वरूपानतिरेकेण तद्वत्त्वासम्पादकत्वात् अप्रसिद्धविशेषणतापत्तेश्च तात्विकभेदव्यतिरेकेऽपि उपाधिकल्पितभेदेन सर्वानिष्टपरिहारसम्भवादिति तयोस्तात्पर्यार्थः ॥ १३ ॥ १४ ॥ एतेनाभ्रान्तत्वादसंसारित्वात् दुःखाननुभवितृत्वादित्यादिहेतुकानुमानान्यपि निरस्तानीत्याह—"अभ्रान्तत्वादय इति" ॥ १५ ॥

उपहितस्य पक्षत्वे धर्मिसमसत्ताकत्वेऽपि तात्विकत्वासिद्धेः सिद्धसाधनात् शोधिततत्त्वम्पदार्थपक्षत्वे तयोर्धर्मित्वाभावेन बाधापत्तेरतोनानुमानेन भेदसिद्धिरित्याह—"शुद्धयोरिति" ॥ १६ ॥

RUPNATHJI(DR.RUPAK NATH)
www.astrology-tantra.com

अप्रमेयेऽनुमानस्य प्रवृत्तिर्न कथञ्चन ।
प्रमेयस्य त्वनात्मत्वात्तत्र भेदानुमेष्यते ॥ १७ ॥
शुद्धे शब्दैकगम्ये नानुमानप्रसरोऽञ्जसा ।
तात्विकत्वभ्रमध्वस्त्यै भेदे तस्य फलित्वतः ॥ १८ ॥
अप्रसिद्धविशेषत्वादन्यथैवोपपत्तितः ।
सर्वशक्त्यल्पशक्त्यादेर्न भेदे तन्नता ततः ॥ १९ ॥
जीवेश्वरभिदा सत्या खण्डिताऽस्माभिरादरात् ।
गीताभावप्रकाशेऽतो यत्यते नेह विस्तरे ॥ २० ॥
न जीवानां मिथो भेदे ऽनुमानं सिद्धसाधनात् ।

---

शुद्धचैतन्ये धर्मानधिकरणतया अनुमानाप्रसरः यत्र प्रसरस्तत्रेष्टापतिरित्यत्र वृद्धसम्मतिमाह—“ अप्रमेयइति ” । नन्वेवमैक्यानुमानमपि कथं भवतु यद्यस्य तदैक्यानुमिति. कथमिति पठितुं शक्यत्वादित्यत आह—“ शुद्धइति ” । शुद्धचैतन्यैक्यस्य शब्दैकगम्यत्वेन तत्राननुमेयत्वस्येष्टत्वात् न च तर्हि ऐक्यानुमानोपन्यासानर्थक्यं तस्य भेदे तात्विकत्वभ्रममात्रनिरासफलकत्वादिति तात्पर्यार्थः ॥ १८ ॥ फलितमाह—“ अप्रसिद्धेति ” ॥ १९ ॥ विस्तरेण जीवेश्वरभेदनिराकरणं तु गीतासु त्रयोदशाध्यायस्थद्वितीये श्लोके भावप्रकाशे द्रष्टव्यमिति नेह यत्यत इत्याह—“ जीवेश्वरभिदेति ” ॥ २० ॥

॥ जीवब्रह्मभेदानुमानभङ्गः ॥

DR.RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

अर्थान्तरादसिद्धेश्चांशस्योपाधित्वसम्भवात् ॥ २१ ॥

दुःखाद्यननुसन्धानमुपाधेर्न स्वरूपतः।

सुप्तौ लयेऽप्युपाधेर्नो भेदः संस्कारतः स्थितेः ॥२२॥

सुप्तप्रलीनमुक्तानामध्यासविरहाद्भवेत्।

---

जीवानां मिथो भेदाऽनुमानमौपाधिकभेदवादाय सिद्धसाध्यनादिदूषणग्रस्तत्वान्न साध्वित्याह—" नेति "। चैत्रो मैत्रप्रतियोगिकधर्मिज्ञानाबाध्यभेदवान् मैत्रप्रतियोगिकतात्त्विकाभेदवान्नेति वा मैत्रानुसंन्धितदुःखाननुसन्धातृत्वात् मैत्रस्मृतसर्वास्मर्तृत्वात् मैत्रानुभूतसर्वाननुभवितृत्वाच्च घटवदित्यत्र प्रथमसाध्ये धर्मिपदविकल्पेन द्वितीयसाध्ये तात्त्विकाभेदस्यातात्त्विकभेदेन च सिद्धसाधनात् उपहितस्य पक्षत्वे अर्थान्तरात् चैतन्यमात्रपक्षत्वे हेत्वासिद्धेः साधनैकदेशस्याननुसधातृत्वादेरुपाधित्वसम्भवाच्चेत्यर्थः।

॥ जीवाभेदानुमानभङ्गः ॥

ननु यद्यात्मैक्यं स्यात्तदा चैत्रेण सर्वदु खाद्यनुसन्धानं स्यादिति चेदौपाधिकभेदेनाननुसन्धानोपपत्तेर्मैवमित्याह—"दुःखादीति"। नन्वन्तःकरणस्य प्रत्यहं सुषुप्तौ विलयेन पूर्वदिनानुभूतस्याननुसन्धानापत्तिरित्यत आह—" सुप्ताविति "। सुप्तौ संस्कारात्मनाऽवस्थितस्यैव पुनरुद्बोधेन तत्रान्त करणभेदाभावादित्यर्थः ॥२२॥ नन्वेवं सुप्तप्रलीनमुक्तानामननुसन्धानप्रयोजकान्तःकरणभेदाभावात्संस्कारादिदुःखानुसन्धानापत्तिरित्यत आह—" सुप्तेति "। तेषामनुसन्धानप्रयोजकान्तःकरणैक्याध्यासरूपसामग्रीविरहात् नानुसन्धातृत्वं न हि प्रतिबन्धकमात्रेण कार्यविरह किन्तु सामग्रीविरहेणापि न चैवं मुक्तस्य स्वरूपसुखानुभवोऽपि न स्यादिति वाच्यं

RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

संसार्यननुसन्धानं स्वसुखानुभवः स्वतः ॥ २३ ॥
अविद्याध्वस्तिमोक्षस्य गतत्वेऽपि चिदद्वये ।
तत्रैवोपहिते बन्धो न तेनास्ति भिदा तयोः ॥ २४ ॥
उपाधेः कल्पितत्वेन निवृतावपि तात्त्विकम् ।
उपधेयस्वरूपं नो मुक्तौ जातु निवर्त्तते ॥ २५ ॥
नो वैयधिकरण्यं स्यादात्मनो बन्धमोक्षयोः ।
विशिष्टे भोक्तृता सिद्धा न शुद्धे सा सुखात्मनि ॥ २६ ॥

---

तस्याजन्यत्वेनान्त करणानपेक्षत्वादित्यर्थः ॥ २३ ॥

नन्वेवमनेकाविद्यासम्बन्धस्य दुःखानुसन्धानरूपस्यानर्थस्य च विशिष्टगतत्वे बन्धमोक्षयोर्वैयधिकरण्यापातेन शुद्धगतत्वे वाच्ये यच्छुद्धं चैत्रीयदुःखानुसन्धातृ तदेव मैत्रीयदुःखानुसन्धातृ इति कथमनुसन्धानव्यवस्थेत्याशङ्क्याह—" अविद्येति " । अविद्यात्मकबन्धनिवृत्त्यात्मकमोक्षस्य शुद्धगतत्वेऽपि दुःखाद्यनुसन्धातृत्वस्योपहितवर्तितया शुद्धभेदापादनायोगात् न च संसारस्य शुद्धगतत्वे ब्रह्मणोऽपि संसारित्वापत्तिः बिम्बप्रतिबिम्बयोरवदातत्वश्यामत्ववत् घटाकाशमहाकाशयोः परिच्छिन्नत्वापरिच्छिन्नत्ववत् एकस्यैव नभसस्तत्तत्कर्णपुटावच्छेदेन तत्तच्छ्रोत्रतावच्च औपाधिकभेदेन संसारित्वासंसारित्वव्यवस्थोपपत्तेरित्यर्थः ॥ २४ ॥ ननु दुःखाद्यनुसन्धानरूपस्यानर्थस्योपहितनिष्ठत्वेन तस्य कल्पितत्वेन बन्धस्य निवृत्तिरेव न तु मोक्ष इत्यापात इत्याशङ्क्य निरस्यति—" उपाधेरिति " ॥ २५ ॥ अत एव न बन्धमोक्षयोर्वैयधिकरण्यमित्याह—" नेति " । उपाधिसम्बन्धेन भोक्तृतोपलक्षितसंसारस्तद्विरहे स्वरूपावस्थानं मोक्षोऽपीत्यर्थः ॥ २६ ॥ पक्षान्तरेणापि,

RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

अविद्यात्मकबन्धस्य शुद्धवस्तुगतत्वतः ।
सामानाधिकरण्यं स्यादेवं वा बन्धमोक्षयोः ॥ २७ ॥
अनुसन्धातृतापीष्टा शुद्धेऽवस्थात्रयानुगे ।
सर्वदेहेषु शुद्धस्यानुप्रवेशश्रुतिर्यतः ॥ २८ ॥
बद्धमुक्तव्यवस्थाऽपि न स्वाभाविकभेदजा ।
उपाधिबाधाबाधाभ्यां साऽपि सम्यग्व्यवस्थिता ॥२९॥
येनैवोपाधिना यस्य परिच्छिन्नत्वमात्मनः ।
तदुपाधेर्लयात्तस्य मुक्तित्वे नास्त्यसम्भवः ॥ ३० ॥
एकजीवमते सर्वोपाधिनाशाद्धि मुक्तिता ।
इदानीं मुक्त्यभावस्य मानिष्टत्वं मते मम ॥ ३१ ॥
मिथ्याभूतस्य चोपाधेर्मिथ्याभेदैकहेतुता ।

---

बन्धमोक्षयो सामानाधिकरण्यमित्याह–“अविद्यात्मकेति” ॥२७॥

शुद्धस्यानुसन्धातृत्वमिष्टमित्याह—“ अनुसन्धातृतेति ” ॥२८॥

बद्धमुक्तव्यवस्थाप्यनवद्यैवेत्याह—“ बद्धेति ” त्रिभि. ॥२९॥ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ननूपाधेः कथं भेदकत्त्वं तथा हि उपाधिः किमेकदेशेन संबद्ध्यते कृत्स्नेन वा आद्ये त्वन्मते स्वाभाविकांशाभावेऽपि औपाधिकत्वं वाच्यं तथाचानवस्था अन्त्ये त्वभेदकता कृत्स्नस्यैकोपाधिग्रस्तत्वात् गगनादावपि स्वाभाविकांशाभावे घटाद्युपाधिसम्बन्धो न स्यात् तदुक्तं ‘भवेदुपाधिसम्बन्ध एकदेशेऽथ सर्वगः । एकदेशेऽनवस्था स्यात्सर्वगश्चेन्न भेदक’ इत्याशङ्क्य सर्वविकल्पासहत्वेन मिथ्याभूतस्यैवोपाधेर्मिथ्याभेदप्रयोजकत्त्वस्य प्रागेवोपपादि-

DR.RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

अस्ति तेन न जीवानां मिथो भेदो मनागपि ॥ ३२ ॥
एवं जडेशभेदेऽपि भेदे च जडजीवयोः ।
तात्विके न प्रमाणं स्यात्प्रोक्तदोषानतिक्रमात् ॥ ३३ ॥
परिच्छिन्नत्वजन्यत्त्वजडत्वोपाधिभावतः ।
स्यादप्रयोजकत्त्वाच्च हेतोरनुमितिर्वृथा ॥ ३४ ॥
स्वप्रकाशतया सर्वप्रत्यये विषयत्वतः ।
ब्रह्मसिद्धावपि श्रौती गीरज्ञाननिवर्त्तिका ॥ ३५ ॥

---

तत्वादित्याह—" मिथ्याभूततयेति " ॥ ३२ ॥

॥ जीवभेदानुकूलतर्कभङ्गः ॥

एवं जडेशभेदे जडजीवभेदे च तात्त्विके प्रमाणं नास्ति ब्रह्म जीवो वा अनात्मप्रतियोगिकधर्मिज्ञानाबाध्यभेदवान् पदार्थत्वाद्घटवत् ब्रह्म जीवो वा घटप्रतियोगिकधर्मिज्ञानाबाध्यभेदवान् घटासम्बद्धकालसम्बन्धित्वात् तदसम्बद्धदेशसम्बन्धित्त्वात् तज्जनकाजन्यत्वात् पटवत् ब्रह्म जीवो वा जडप्रतियोगिकधर्मिज्ञानाबाध्यभेदवान् जडानात्मकत्वात् यदेवं तदेवं यथा दूरस्थवनस्पत्योरेक इत्यादिषु पूर्वोक्तदोषानतिवृत्तेः परिच्छिन्नत्वस्य जडत्वस्य जन्यत्वस्य चोपाधित्वात् अप्रयोजकत्वाच्चेत्यभिप्रेत्याह—" एवमिति " ॥ ३३ ॥ ३४ ॥

यद्यपि सर्वजडाधिष्ठानत्वेन सर्वप्रत्ययगोचरत्वं ब्रह्मणस्तथापि पूर्णानन्दत्वादिरूपेण वेदैकगम्यत्वमित्याह—"स्वप्रकाशतयेति"। स्वप्रकाशत्वेन सर्वप्रत्ययवेद्यत्वेन च ब्रह्मसिद्धावपि सविलासाज्ञाननिवर्तकज्ञानाय वेदान्तसाफल्यस्य बहुधाऽभिधानादित्यर्थः ॥ ३५ ॥



RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

एवं जडानामन्योन्यभेदेनानुमितिः प्रमा ।
धर्म्यादिकविकल्पैकग्रासत्रासानपायतः ॥ ३६ ॥
मिथ्यात्वसाधकानां हि हेतूनां प्रबलत्वतः ।
तैर्बाधान्नानुमानं ते जडानां भेदसाधकम् ॥ ३७ ॥
द्वासुपर्णेति पूर्वार्धे न प्रमेयो भिदेक्ष्यते ।
अपदार्थतया तद्वदवाक्यार्थतयाऽस्य च ॥ ३८ ॥

---

एवं जडानां परस्परभेदे नानुमानमित्याह—" एवमिति "। घटस्तत्वतः शुक्त्यभिन्नो न शुक्तिसम्बद्धकालासम्बन्धित्वात् तज्ज्ञानकाजन्यत्वात् तत्रारोपितरूप्यवत् व्यावहारिकभेदस्य त्वयाऽप्यङ्गीकारेण न पक्षदृष्टान्ताद्यनुपपत्तिः अन्यथा भेदसिद्ध्यसिद्ध्योर्दोषतदभावयोश्चाभेदेन स्वप्रक्रियाविरोधः स्यादित्यत्र तात्त्विकशुक्त्यभिन्नत्वरूपप्रतियोग्यप्रसिद्ध्या साध्याप्रसिद्धेः तत्वत इत्यस्य नेत्यत्र विशेषणत्वे सुतरामप्रसिद्धेः घटादिसमसत्ताकभेदमात्रेण हेतोरुपपत्त्या अप्रयोजकत्वाच्च भेदस्य तात्त्विकत्वे बाधस्योक्तत्वेन बाधाच्चेत्यर्थः ॥ ३६ ॥ मिथ्यात्वसाधकानां प्राबल्यस्योक्तत्वेन तैर्बाधाच्च न भेदेऽनुमानोदय इत्याह—" मिथ्यात्वेति "। तस्माद्भेदपञ्चकं नानुमानविषय इति भावः ॥ ३७ ॥

॥ भेदपञ्चकेऽनुमानभङ्गः ॥

ननु भेदतात्त्विकत्वे 'द्वासुपर्णा' 'य आत्मनि तिष्ठन्' 'नित्यो नित्यानां चेतनश्चेतनानां' 'अजोह्येको जुषमाणोऽनुशेते जहात्येनां भुक्तभोगामजोन्य' इति श्रुतयो मानमित्याशङ्क्याह—" द्वेति " ॥ ३८ ॥ ननु द्वित्वस्य स्वाश्रयप्रतियोगिकभेदसमानाधिकरणत्वनि-

RUPNATHJI(DR.RUPAK NATH)
www.astrology-tantra.com

द्वौ चन्द्राविति वन्मिथ्या भेदेनाप्युपपत्तितः।
न वास्तवस्य भेदस्याक्षेपकत्वं भवेद्गिरः ॥ ३९ ॥
अतो नैवोत्तरार्द्धेपि तात्विकं भेदमाह सा।
बुद्धिजीवपरत्वेन व्याख्याता श्रुतिरन्यथा ॥ ४० ॥
चेतनश्चेतनानां य आत्मन्नित्यादिवेदगीः।
आधाराधेयभावादेस्तात्विकत्वे न तत्परा ॥ ४१ ॥
किन्तु काल्पनिकं भेदमादायैवोपपद्यते।
श्रुत्यन्तरविरोधाच्च न सा भेदपरा श्रुतिः ॥ ४२ ॥
त्रिकालाबाध्यताबोधिपदाभावादजाश्रुतिः।

---

यमात् श्रुतद्धित्वार्थापत्तिसमधिगतस्याऽपि भेदस्य श्रौतत्वमित्याशङ्क्य निरस्यति—"द्वाविति" ॥ ३९ ॥ अत एव नोत्तरार्द्धस्यापि तात्विकभेदपरत्वं। वस्तुतस्त्वस्याः श्रुतेः पैङ्गिरहस्यब्राह्मणे बुद्धिजीवपरतया व्याकृतत्वेन जीवेशभेदपरत्वस्य वक्तुमशक्यत्वादित्याह—"अतइति" ॥ ४० ॥ 'य आत्मनि तिष्ठ' न्नित्यादावाधाराधेयभावस्य 'चेतनश्चेतनानामिति' निर्द्धारणस्य 'अजोन्य' इत्यत्र भेदव्यपदेशस्य च काल्पनिकभेदमादायाप्युपपत्तेर्भेदतात्विकत्वापर्यवसायित्वात् श्रुत्यन्तरविरोधाच्च न भेदे कस्यापि श्रुतेस्तात्पर्यमित्याह—"चेतन" इति द्वाभ्यां ॥ ४१ ॥ ४२ ॥

नचैतच्छ्रुतिविरोधात्सैव श्रुतिरन्यपरा भेदश्रुतेः प्रत्यक्षसिद्धभेदानुवादित्वेन हीनबलत्वादित्याह—" त्रिकालेति ",।

DR.RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

प्रत्यक्षसिद्धभेदानुवादित्वेन न तत्परा ॥ ४३ ॥
व्यावहारिकभेदे वा तत्पराऽस्त्वर्थवादवत् ।
प्रामाण्यं वैपरीत्यं वा विरोधेनाभिदाश्रुतेः ॥ ४४ ॥
तात्पर्यलिङ्गवत्वात्स्यात्प्राबल्यमभिदाश्रुतेः ।
यत्र भेदश्रुतिर्मुक्तौ सा मुक्तिः स्यादवान्तरा ॥ ४५ ॥
परमुक्तौ न भेदोऽस्ति सर्वद्वैतनिषेधनात् ।
विस्तरेण प्रकारोऽयं ज्ञेयो भावप्रकाशतः ॥ ४६ ॥

---

अजोऽन्य इत्यादौ त्रिकालाबाध्यत्वबोधकपदाभावात् भेदनिषेधकश्रुतेर्भेदतात्त्विकत्वनिषेधपरत्वेन भेदस्वरूपप्रतिपादकवाक्यस्य तत्प्रतिप्रसवायोगात् प्रत्यक्षसिद्धभेदानुवादित्वमेवेत्यर्थः ॥ ४३ ॥

॥ भेदश्रुतेरनुवादकत्वोपपत्तिः ॥

अथवाऽनुवादत्वाभावेऽपि व्यावहारिकभेदपरत्वेनैव श्रुत्युपपत्तिरित्याह—" व्यावहारिकेति "। न चाप्रामाण्यापातः अर्थवादवाक्यवत्तदुपपत्तेः प्रतीयमानार्थे वा ऽभेदश्रुतिविरोधेनाप्रामाण्यस्येष्टत्वाच्चेत्यर्थः ॥ ४४ ॥ षड्विधतात्पर्यलिङ्गवत्त्वादैक्यश्रुतेः प्राबल्यमित्याह—" तात्पर्येति " । ननु नायं भेदो व्यावहारिको मुक्तावपि भेदस्य श्रुतिस्मृतिभ्यां सिद्धेरित्याशङ्क्याह—" यत्रेति " । तस्या मुक्तेरवान्तरत्वात् । नन्विदं 'ज्ञानमुपाश्रित्ये'त्यादिना सा परमा मुक्तिरित्यत आह—" परेति " । परममुक्तौ भेदस्याप्रसक्तेः व्यावहारिकत्वोपपत्त्या भेदश्रुतेर्व्यावहारिकभेदपरत्वमेवेति सिद्धम् अयं प्रकारो विस्तरेणास्मत्कृते गीताभावप्रकाशे द्रष्टव्यः इत्यर्थः ॥ ४६ ॥

॥ भेदश्रुतेर्व्यावहारिकभेदपरत्वोपपत्तिः ॥

DR. RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

न वा शब्दान्तरादीनां भेदकत्वेऽपि तात्त्विके ।
अभेदे स्याद्विरोधित्वं प्रत्यक्षसमकक्षतः ॥ ४७ ॥
मीमांसकोऽप्यपूर्वस्त्वमन्यभेदकमानतः ।
कल्पयस्यात्मनोभेदं नेक्षसेऽतिप्रसञ्जनम् ॥ ४८ ॥
भेदे षड्विधतात्पर्यलिङ्गं नास्ति श्रुतेर्मतं ।

---

ननु पूर्वतन्त्रे द्वितीयाध्याये यैरेव शब्दान्तरादिभिः कर्मभेद उक्तस्तैरेव जीवेशभेदोऽपि सिद्ध्यति तथाहि य एव जीवं प्रबोधयति-एतस्माज्जीव उत्तिष्ठतीति विरुद्धार्थधातुनिष्पन्नाख्यातरूपशब्दान्तरस्य नित्यः परो नित्यो जीव इत्यप्रत्यभिज्ञायमानपुनः श्रुतिरूपाऽभ्यासस्य द्वासुपर्णेत्यादिसंख्याया अशब्दं अश्नन् इत्यादेर्भेदकस्य गुणान्तरस्य 'यतो वाचो निवर्त्तन्त' इत्यादिप्रकरणान्तरस्य जीवेशाविति नामधेयभेदस्य सत्वाच्चेत्याशङ्क्य निरस्यति—" न वेति " । प्रत्यक्षादिसमकक्षतया शब्दान्तरादीनां भेदकत्वेऽपि तात्त्विकाभेदाविरोधात् न तथात्वमित्यर्थः ॥ ४७ ॥ शङ्कितु. शास्त्रतात्पर्यानभिज्ञतां दर्शयति— " मीमांसक इति " । अदृष्टचरस्त्वं मीमांसको यः कर्मभेदे शास्त्रभेदे वा प्रमाणत्वेन क्लृप्तानां शब्दान्तरादीनां चेतनभेदे प्रमाणत्वं कल्पयसि तर्ह्यन्यभेदप्रयोजकस्यान्यभेदप्रयोजकता विशिष्टभेदप्रयोजकस्यापि विशेषणभेदस्य विशेष्यभेदकत्वापत्तेः देवदत्त उत्तिष्ठति शिष्यं बोधयति यजति ददाति जुहोतीत्यादावपि भेदापत्तेर्न शब्दान्तरस्य कर्तृभेदकतेत्यर्थः ॥ ४८ ॥

॥ शब्दान्तरादेरात्मभेदकत्वाभावोपपत्तिः ॥

ननु षड्विधतात्पर्यलिङ्गोपेतश्रुतिगम्यभेदस्य कथमतात्त्विकत्वं तथा हि आथर्वणे 'द्वासुपर्णेत्युपक्रम ' परमं साम्यमुपैती'त्युपसंहारः तयोरन्यः अनश्नन्नन्यः अन्यमीशमित्यभ्यासः शास्त्रैकगम्येश्वरप्रतियोगिकस्य कालत्रयाबाध्यभेदस्य शास्त्रं विना अप्राप्तेरपूर्वता 'पूण्यपापे विधूये'ति' फलं ' अस्यमहिमान'मिति स्तुतिरूपोऽर्थवाद'

RUPNATHJI (DR. RUPAK NATH)
www.astrology-tantra.com

मुण्डकोपक्रमादीनामद्वैतैकपरत्वतः ॥ ४९ ॥
पौर्वापर्यापरिज्ञानात्प्राह भेदपरां श्रुतिम् ।
भ्रान्तस्तेन न वेदान्तप्रमाणं भेदगोचरं ॥ ५० ॥

---

अत्ति अनश्नन्नित्युपपत्तिः अत्र च मायामात्रमिदं द्वैतमित्यादाविव द्विशब्द एव भेदवाचक इत्याशङ्क्याह—“ भेद इति ”। आथर्वणे प्रथममुण्डके ‘ कस्मिन्नु भगवो विज्ञाते सर्वमिदं विज्ञातं भवतीति’ प्रश्नानन्तरं द्वे विद्ये वेदितव्ये इति विद्याद्वयमवतार्य ऋग्वेदादिलक्षणामपरामुक्त्वा ‘ अथ परा यया तदक्षरमधिगम्यते यत्तदद्रेश्यमग्राह्यमगोत्रमवर्ण’मित्यादिना पराविद्याविषय प्रतिपादयताऽभेदस्यैवोपक्रान्तत्वात् द्वितीयमुण्डके ‘पुरुष एवेदं विश्वं ब्रह्मैवेदं विश्वमिदं वरिष्ठमिति मध्ये परामर्शात् तृतीय मुण्डकान्ते च ‘ परेऽव्यये सर्व एकीभवन्ति स यो ह वैतत्परमं ब्रह्म वेद ब्रह्मैव भवतीत्यैक्यलक्षणफलोपसंहारात् मुण्डकत्रयात्मिकाया उपनिषद ऐक्यपरत्वे स्थिते ‘असंयुक्तं प्रकरणादिति’न्यायेनाभि(१)क्रमणादिवन्मध्यस्थितवाक्यस्याऽपि द्वा सुपर्णेत्यादेस्तदनुकूलत्वे सम्भवति महाप्रकरणविरोधेन विपरीततात्पर्यकल्पनया भेदोपक्रमत्वाभावात् परमं साम्यमुपैतीत्यस्य उक्तन्यायेनैक्यपरतया भेदोपसंहारत्वाभावात् अनश्नन्नन्य इत्यादिना न तात्त्विकभेदाभ्यास इत्यादिविचारेण श्रुतेरैक्यपरत्वं निश्चीयते इत्यर्थः ॥ ४९ ॥ ५० ॥

---

(१) ननु द्वा सुपर्णेत्यादावैक्यस्याऽस्पष्टत्वान्नोक्तन्यायस्यावकाशोऽत्र इह अभिक्रमणेति । दर्शपूर्णमासौ प्रकृत्य प्रयाजसमीपे श्रूयते अभिक्राम जुहोतीति तत्राभिक्राममित्यस्य णमुलन्तत्वे नाभिक्रमणे पृथक्त्वात् जुहोतिना प्राकरणिकसर्वहोमानुवादात्तदुद्देशेनाभिक्रमण विधीयते प्रयाजानां सन्निधिसत्त्वेऽपि तदपेक्षया प्रकरणस्य बलवत्त्वात् न चावान्तरप्रकरणेन प्रयाजाङ्गतेति वाच्यम् । अवान्तरप्रकरणस्यविनियोजकत्वे सर्वेषामङ्गानातत्सम्भवेन मिथोऽङ्गितापत्तेरिति प्राप्ते प्रयाजान्विधाय वीन्प्रयाजानिष्ट्वा समानयत उपभृत इत्यनेनोपभृतस्थाज्यस्यार्धं जुह्वा स्थाप्यमित्येव रूपसमानयन विधायाभिक्राम जुहोतीत्युक्तायोवै प्रयाजाना मिथुन वेद समिधीबह्वीरिवेत्यादिना प्रयाजानिष्ट्वाह्वीष्यभिधारयतीत्यन्तेन प्रयाजपरामर्शात्तत्सन्दर्भस्य प्रयाजप्रकरणत्त्वनिश्चयात् तेन तन्मध्ये यद्विहित तत्तत्प्रयाजाङ्गमितिनिश्चयात् इति तृतीयप्रथमे स्थितम् तथा च तन्न्यायेन पूर्वापरवाक्यार्थयोरैक्यबुद्ध्युपकारकत्वान्मध्यस्थद्वासुपर्णेत्याद्यर्थस्यापि तदित्यर्थः . .

DR.RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

ऐक्यमात्मस्वरूपं हि ज्ञानानन्दादिरूपवत् ।
निरपेक्षतयैक्यस्य निरपेक्षात्मरूपता ॥ ५१ ॥
तत्त्वमस्यादिमानं स्यादभेदे ब्रह्मजीवयोः ।
विरुद्धांशपरित्यागात्सोऽयमित्यादिवद्ध्रुवं ॥ ५२ ॥
त्यागो विरुद्धरूपस्याविवक्षामात्रतो मतः ।

---

॥ भेदश्रुतेः षड्विधतात्पर्यलिङ्गभङ्गः ॥

नन्वैक्यमात्मस्वरूपमुतान्यत् नाद्यः एकतरपरिशेषाद्यापत्तेः सापेक्षैक्यस्य निरपेक्षात्मत्वायोगाच्च नान्त्यः सत्यत्वे अद्वैतहानिः मिथ्यात्वे तत्त्वमसीत्यादेरतत्त्वावेदकत्वापत्तेरित्याशङ्क्याद्यमेवानवद्यमित्याह—“ ऐक्यमिति ” । ज्ञानानन्दयोरात्मैक्येऽपि यथा नैकतरपरिशेषपर्यायत्वादिकं कल्पितानन्दत्वादिधर्मात् तथा प्रकृतेऽपि सम्भवात् ऐक्ये प्रतिभिज्ञेयत्वस्य प्रागुक्तेः तस्याऽपि निरपेक्षतया निरपेक्षात्मरूपत्वाविरोधात् अज्ञानाद्यधिष्ठानतया भासमानात्मरूपत्वेऽपि ऐक्यस्य तद्गोचरवृत्तिविशेषस्याज्ञाननिवर्तकस्येदानीमसत्वात्संसारोपपत्तिरपीति तात्पर्यार्थः ॥ ५१ ॥ शून्यस्य निःस्वरूपत्वाच्च शून्यस्यात्मरूपताऽतो जीवब्रह्माभेदे ‘तत्त्वमस्ययमात्मा ब्रह्मे’त्यादिश्रुतिर्मानमित्याह— “ तत्त्वमिति ” ॥ ५२ ॥

॥ ऐक्यस्वरूपोपपत्तिः ॥

ननु सार्वज्ञ्यासार्वज्ञ्यादिविशिष्टयोरैक्यमयोग्यतापराहतं कथमुदाहृतश्रुत्या बोध्यमित्यत आह—“विरुद्धांशेति” । सोऽयमित्यादाविव विरुद्धाकारत्यागेन शुद्धयोरैक्यबोधनं युक्तमित्यर्थः । ननु विरुद्धाकारत्यागो किमविवक्षामात्रेण उतानित्यत्वेन उत मिथ्यात्वेन नाद्यः विरुद्धाकारस्याविवक्षायामप्यनपायात् न हि असद्वा इदमग्र आसीत् सर्वं ब्रह्मे त्यादिश्रुत्या सत्त्वशून्यत्वयोश्चित्त्वजडत्वयोर्वेहाविवक्षामा-

DR. RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

स च ब्रह्मानुभूत्यैकागोचरत्वं न चात्ययः ॥ ५३ ॥
जडानां बाध्यरूपत्वान्निःस्वरूपत्वतोऽसतः ।
न जीवब्रह्मवत्तत्रानुस्यूताकारसम्भवः ॥ ५४ ॥
नोपजीव्यविरोधोऽत्रोपजीव्यांशो न बाध्यते ।

---

त्रेण ब्रह्मणः शून्येन जडेन च ऐक्यं सुवचं न द्वितीयः तत्त्वं भविष्यसीति निर्देशापत्त्या असीति वर्त्तमाननिर्देशायोगात् दशाभेदेन भेदाभेदयोः सत्त्वापत्त्या त्वयाप्यनङ्गीकाराच्च जीवेशयोः स्वातन्त्र्यपारतन्त्र्यादेर्निश्चयत्वाच्च न तृतीयः विरोधिश्रुतिसाक्षिसिद्धयोर्विरुद्धधर्मयोर्मिथ्यात्त्वायोगादित्त्याशङ्क्याह—“ त्यागइति ”। विरुद्धाकारस्याविवक्षयैव त्यागात् त्यागेऽपि ब्रह्मानुभवाविषयत्वं न त्वपायः तस्य चरमसाक्षात्कारसाध्यत्वात् तथा च तत्तेदन्ते इवानपेते अपि सार्वज्ञ्यासार्वज्ञ्ये नाश्रयाभेदविरोधाय अविवक्षा च प्रधानप्रमेयनिर्वाहायेत्यर्थः ॥ ५३ ॥

असद्वेत्यादौ सर्वं खल्विदं ब्रह्मेत्यादौ च शून्यजडैक्यापत्ती इत्याह—“ जडानामिति ” । शून्यसतोः चिज्जडयोर्वा विरुद्धाकारपरित्यागेऽपि जीवब्रह्मणोरिवानुस्यूतस्याकारस्याभावात् असतो निःस्वरूपत्वाज्जडस्य बाध्यस्वरूपत्वाच्च तदैक्यापत्तिरित्यर्थः ॥ ५४ ॥

॥ जीवब्रह्माभेदेप्रमाणम् ॥

नन्वैक्यश्रुत्या प्रत्यक्षसिद्धं जीवमनूद्य ब्रह्मत्त्वं वा बोधनीयं श्रुतिसिद्धं ब्रह्मानूद्य तस्य जीवत्वं वा उभयानुवादेनाभेदो वा विधेयः सर्वथाऽप्युपजीव्यविरोधान्नैक्ये प्रामाण्यं प्रत्यक्षेण जीवस्य ब्रह्मभिन्नत्वेन श्रुत्या च सर्वज्ञत्वादिमद्ब्रह्मग्राहिण्या तद्धीनत्त्वेनानुभूयमानाज्जीवाद्भिन्नत्वेन ब्रह्मणो ज्ञायमानत्वात् न चानुमानेन ब्रह्मोपस्थितिः तेनापि सर्वज्ञत्वादिना ब्रह्मणो विषयीकरणेनोपजीव्यविरोधतादवस्थ्यादितिचेन्मैवमित्याह—“ नोपजीव्येति ” ।

DR. RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

यद्बाध्यते न तच्चेहोपजीव्यमिति वर्णितं ॥ ५५ ॥
सार्वज्ञ्यादिविशिष्टं यत्तत्रैक्यं नेष्यते मया ।
ऐक्यज्ञानं प्रमाणत्त्वे न तज्ज्ञानमपेक्षते ॥ ५६ ॥
तस्मादैक्यश्रुतेः सर्वशेषित्वेन बलिष्ठता ।
ब्रह्मात्मैक्यपरत्वं स्यात्सिद्धं भेदैकबाधनात् ॥ ५७ ॥
तात्पर्यनिश्चितेह्यैक्ये तन्निर्वाहकलक्षणा ।

---

शक्तिग्रहादौ तयोरुपजीव्यत्वेऽपि स्वरूपेऽनुपजीव्यत्वात् तथा च यदुपजीव्यं तन्न बाधते यद्बाधते तन्नोपजीव्यमिति मिश्रोक्त्या प्राग्वर्णितमित्यर्थः ॥ ५५ ॥

ननु यद्धि यदपेक्षं तस्य बाधे स्वस्य बाधापत्तिश्च तत्तस्योपजीव्यं प्रकृते च धर्म्यादिग्राहकस्यैव स्वप्रामाण्यग्राहकतया तद्बाधे स्वबाधापत्तिरिति चेत्सत्यमित्याह—" सार्वज्ञ्यादीति "। सार्वज्ञ्यादिविशिष्टं न तद्धर्मि किन्तु ब्रह्मस्वरूपमात्रं विशिष्टधर्मिज्ञानप्रामाण्यमैक्यज्ञानप्रामाण्ये नापेक्ष्यते किन्तु स्वरूपज्ञानप्रामाण्यमात्रमित्यर्थः ॥ ५६ ॥ तस्मादुपजीव्यविरोधाभावात् प्रत्युताभेदश्रुतेरेव सर्वशेषितया भेदश्रुतिं प्रत्यप्युपजीव्यत्वात् भेदश्रुतेरेव तद्विरोधेन तदानुकूल्यतया नेयत्वात् सर्वविरोधशून्यं तत्वमस्यादिवाक्यं तथाऽैक्यपरमिति सिद्धमित्याह—" तस्मादिति " ॥ ५७ ॥

॥ ऐक्यश्रुतेरुपजीव्यबाधाभावः ॥

नन्वेवं पदद्वयेऽपि लक्षणा स्यात् तथा च मन्मतमाश्रित्यैकपदलक्षणैव लक्षणीया तथा हि द्वासुपर्णा सयुजेत्यादौ जीवस्य ब्रह्मसाहचर्योक्तेस्तत्साहचर्यात्तादिति व्यपदेशः 'वसन्तादिभ्यष्ठगि'-

DR.RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

निर्दिष्टा न तु तात्पर्यत्यागस्तदनुरोधतः ॥ ५८ ॥
न हि मुख्यपरत्वे स्युरर्थान्तरविकल्पनाः ।

---

स्यत्र वसन्तसहचरिते(१)अध्ययने वसन्तपदप्रयोगस्य महाभाष्ये उक्तत्वा'त्सन्मूलाः प्रजाः सदायतना'इत्यादिवाक्यशेषात्प्रसिद्धतदाश्रितत्वाद्वा तदितिव्यपदेशः 'समर्थ पदविधि'रिति सूत्रे समर्थपदाश्रितत्वेन पदविधौ समर्थपदप्रयोगस्य महाभाष्योक्तेः 'सन्मूलाः सोम्येमाः सर्वाः प्रजा' इति वाक्यशेषात्प्रसिद्धतज्जत्वाद्वा तत्पदप्रयोगः 'ब्राह्मणोऽस्य मुखमासी'दित्यादिवत् 'इग् यण संप्रसारण'मित्यत्र(२)संप्रसारणाज्जातोवर्णः संप्रसारणमिति भाष्योक्ते 'प्राणबन्धनं हि सोम्य मन'इति वाक्यशेषेण जीवस्येशाधीनत्वोक्त्या तदधीनत्वाद्वा तच्छब्दप्रयोगः 'धान्यमसि धिनुही'त्यत्र मन्त्रे तण्डुले धान्यपदप्रयोगवत् 'तत्सादृश्याद्वा तच्छब्दप्रयोगः सारूप्या'दिति जैमिनिसूत्रे 'आदित्यो यूप'इत्यादिक सादृश्यादित्युक्तत्वात् 'तद्गुण(३)सारत्वात्तद्व्यपदेशः प्राज्ञव'दिति ब्रह्मसूत्रेण ब्रह्मगुणयोगाज्जीवे तद्व्यपदेश इत्युक्तेरिति चेन्मैवमित्याह—" तात्पर्यइति " ।
अभेदे तात्पर्येऽवधृते तन्निर्वाहकलक्षणाबाहुल्यस्यादोषत्वात् न हि लक्षणैक्यानुरोधेन तात्पर्यपरित्यागः तदुक्तं न्यायचिन्तामणौ तात्पर्यार्थं हि वृत्तिर्न वृत्त्यर्थं तात्पर्यमिति तात्पर्यार्थः ॥ ५८ ॥

---

(१) अध्ययनविषये वसन्तसहचरिते वसन्तादिभ्यष्ठगित्यनेन तदधीते तद्वेदेत्यार्थे ठक्प्रत्ययान्तवसन्तकालस्याध्ययनविषयत्वाद्वसन्तप्रतिपादको ग्रन्थोवसन्तशब्दार्थस्तस्य वसन्तसम्बन्धित्वसम्बन्धित्वेन वसन्तसाहचर्यादित्युक्तम् ।

(२) इग्यण संप्रसारणमिति सूत्रे यणः स्थाने य इग्वर्णः स सम्प्रसारण संज्ञ इति चेत्तर्हि व्यञ्सम्प्रसारणमित्यादौ दोषो न हि व्यञोयणस्थाने इक्सिद्धोऽस्य व्यः सम्प्रसारणमित्यनेन वर्णं संज्ञापय दूषयित्वा यण स्थाने इग्भवनरूपो वाक्यार्थ स सम्प्रसारणसंज्ञ इति पक्षान्तरमाशङ्क्य वाक्यार्थस्यासत्त्वरूपत्वेन स्थानित्वाद्यभावात्सम्प्रसारणस्येत्यादौ दोष इति तदपि दूषयित्वा काकाज्जाते काकादिपदस्येव सम्प्रसारणाज्जातस्य कारादिवर्णस्याऽपि सम्प्रसारणसंज्ञकत्वेन स्थानित्वाद्युपपत्तिरित्युक्तम् ।

(३) ब्र० २ । ३ । २९ ।

RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

न तथा श्रुतिसूत्राणां व्यवस्था त्वन्मतेऽञ्जसा ॥ ५९ ॥
विशेषणांशत्यागेऽपि न त्यागः स्याद्विशेष्यगः ।
भागलक्षणया त्वैक्यं निर्दिष्टं श्रुतिसम्मतं ॥ ६० ॥
स आत्मा तत्त्वमित्यत्रैतदात्म्यमिति शङ्कतः ।

---

जहदजहल्लक्षणया मुख्यपरत्वे सम्भवति तत्सहचरिताद्यर्थपरत्वकल्पनस्यानुचितत्वादित्याह—“ नहीति ” । ‘द्वा सुपर्णा सयुजा’ इत्यनेन न जीवस्य ब्रह्मणा सहचरितत्वोक्तिः किन्त्वन्तःकरणेनेति न तेन सहचरितत्वप्रसिद्धिरपि न वा ‘सन्मूलाः सर्वाः प्रजा’ इत्यादिना जीवस्य तदाश्रितत्वप्रसिद्धिः प्रजाशब्दस्य प्रजायमानवाचकत्वेन जीवस्य नित्यस्याप्रतिपादनात् अतएव न तज्जन्यत्वेन तच्छब्दप्रयोगः यत्तु ‘तद्गुणसारत्वा’दित्यादिना जीवे ब्रह्मगुणयोग इति तन्न । बाधकप्रमाणसूक्ष्मत्वयोगाज्जीवे ब्रह्मणीव सूक्ष्मत्वमित्येवंपरत्वात्सूत्रस्य सर्वत्रापि श्रुतिसूत्रार्थानभिज्ञत्वमेव स्वस्य प्रकटितमित्यर्थः । ननु जहदजहल्लक्षणायां वाच्यान्तर्गतत्वेन प्राग्धीस्थस्य बाधकात् त्यक्तस्य पुनः स्वीकारः जहल्लक्षणायां अधीस्थस्यात्यक्तस्यैव स्वीकारः त्यक्तस्वीकाराद्वरमधीस्थस्वीकार इतिचेन्मैवमित्याह—“ विशेषणांशेति ” । अनुपपत्त्या विशेषणत्यागेऽपि विशेष्यात्यागात् तथा च तेन त्वं तिष्ठसीति वा ततः सञ्जात इति वा तस्य त्वमिति वा तस्मिंस्त्वमिति वाऽर्थप्रकल्पनमतीवासङ्गतमेवोत्प्रेक्षितमिति नैक्ये काचिदप्यनुपपत्तिस्त्वत्सम्भाविता सम्भवतीति तात्पर्यार्थः ॥ ६० ॥

नन्वै'तदात्म्यमिदं सर्वं तत्सत्यं स आत्मा' तत्त्वमसी'त्यत्र तत्पदेन नात्मा परामृश्यते किन्त्वैतदात्म्यं नपुंसकत्वात् ऐतदात्म्यमित्यस्य एष चासावात्मा च एतदात्मा तस्येदं ऐतदात्म्यं एवं च प-

DR.RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

एतत्सदस्य सर्वस्यास्त्यात्माभावे ष्यञो विधेः ॥ ६१ ॥
सामानाधिकरण्यं तद्यो वै भूमेतिवत्सुखं ।
एकविज्ञानतः सर्वविज्ञानस्य प्रतिज्ञया ॥ ६२ ॥
न चैक्यं देहदेहित्वहेतुकं तत्वमोर्मतं ।

---

तदीयं वस्तु त्वमसीत्यर्थो नत्वात्माभेदः एतदात्मा यस्य तदैतदात्म्यमित्यर्थे भावप्रत्ययवैयर्थ्यापत्तेः ततो वरमर्थान्तराश्रयणं विचित्रा हि तद्धितगतिरिति वचनात् 'स स्रष्टा चैव संहर्ता नियन्ता रक्षिता हरिः । तेन व्याप्तमिदं सर्वमैतदात्म्यमतो विदु'रिति स्मृतेश्चेति चेन्नैवमित्याह—" स इति " द्वाभ्यां । अयमर्थः तस्येदमित्यर्थे ष्यञोऽविधानात् प्रयोगादर्शनाच्च स्वार्थे च सौख्यमित्यादिप्रयोगदर्शनात् तथा च एतत्सत् आत्मा यस्य सर्वस्य तदेतदात्म तस्य भाव ऐतदात्म्यं सामानाधिकरण्यं तत्स्वार्थिकत्वाद्वा भावभवित्रोरभेदोपचाराद्वा यो वै भूमा तत्सुखमितिवत् यत्तु स्मृतावेतद्व्यापकत्वेन ऐतदात्म्योक्तिः सा न युक्ता एकविज्ञानेन सर्वविज्ञानप्रतिज्ञाविरोधादिति ॥ ६१ ॥ ६२ ॥

नतु शरीरवाचिनां देवमनुष्यशब्दानां शरीरिपर्यन्तत्वदर्शनात् ब्रह्मशरीरभूतजीववाचित्वम्पदस्य ब्रह्मपर्यन्तत्वेन तत्त्वमिति व्यपदेशः शरीरशरीरिभावनिबन्धनः 'यस्यात्मा शरीर'मित्यादिश्रुतेरिति मतमेवास्मन्मते पदद्वयमिति चेन्नैवमित्याह—" नचेति " अयमर्थः शरीरिपर्यन्तत्वमिति तल्लक्षकत्वं वा तत्राऽपि शक्तत्वं वा शरीरविषयवृत्त्यैव तत्प्रतिपादकत्वं वा नाद्यः मुख्यत्त्वानुपपादनात् न द्वितीयः शरीरवाचिनामित्यसाधारण्येन निर्द्देशानुपपत्तेः प्रवृत्तिनिमित्तमनुष्यत्वादिजातेः शरीरिण्यवृत्तेरुक्तत्वाच्च, न तृतीयः अन्यविषयवृत्तेरन्यत्रानुपयोगेन शरीरशरीरिणोरनादिभ्रमसिद्धाभेदनिबन्धनोऽयं प्रयोगो वाच्यः तथा चात्राप्यभेदनिबन्धन एवायं प्र-

तात्त्विके बाधकाभावादभेदे ब्रह्मजीवयोः ॥ ६३ ॥
वेदे शकुनिदृष्टान्ते भेदः सन्नन्यथेष्यते ।
स्वमपीत इति श्रुत्या स्वरूपे स्वार्थ ईरितः ॥ ६४ ॥
प्राज्ञेन सम्परिष्वक्त इति विक्षेपहानितः ।

---

योगः अभेदस्तु भेदबोधकाभावादत्र तात्त्विक इत्येव विशेष इति ॥ ६३ ॥ ननु 'स आत्मा तत्त्वमसी'त्यत्र तत्त्वमसीति पदच्छेदः शब्दो नित्य इत्यत्रानित्य इति पदच्छेदो यथा घटदृष्टान्तानुसारेण तथाऽत्रापि शकुनिसूत्रादिदृष्टान्तानुसारादिति चेन्नेत्याह—" वेद इति " । 'स यथा शकुनिः सूत्रेण प्रबद्ध' इत्यादिदृष्टान्ते विद्यमानोऽपि भेदो नातदिति पदच्छेदप्रयोजकः तं विनैव तदुपपत्तेः तथा हि ज्वरादिरोगग्रस्तस्य तन्निर्मोके स्वास्थ्ये विश्रान्तिवत् जाग्रत्स्वप्नावस्थयोः करणव्यापारजनितश्रमापनुत्तये जीवस्य देवतात्मकस्वरूपावस्थानमित्यस्मिन्नर्थे शकुनिसूत्रदृष्टान्त इत्यन्यथैवोपपत्तेः 'स्वमपीतो भवती'त्यत्र स्वशब्दस्य स्वरूपे मुख्यस्यार्थान्तरपरत्वे गौणीलक्षणयोरन्यतरापत्तेः. अभेदे योगरूढ्योरभावेऽप्युपसर्गप्रकृतिप्रत्ययपर्यालोचनया लब्धस्वरूपप्राप्तिरूपार्थस्य अभेदे पर्यवसानादिति तात्पर्यार्थः ॥ ६४ ॥

ननु 'प्राज्ञेनात्मना सम्परिष्वक्त' इति सुषुप्तविषयभेदश्रुत्या त्वन्मतेऽपि भेदपरेण 'सु(१)षुप्त्युत्क्रान्त्योर्भेदेने'ति सूत्रेण त्वत्पक्षेऽपि जागरण इव सुषुप्तावप्याविद्यकजीवब्रह्मभेदस्वीकारेण च विरोध इति चेन्नेत्याह—" प्राज्ञेनेति " । सुप्तौ हि जाग्रत्स्वप्नावस्थयोरिव स्फुटतरविक्षेपो नास्तीत्यभिप्रायेण स्वरूपप्राप्त्युक्तिः. नत्वात्यन्तिकाभेदाभिप्रायेणान्यथा सुषुप्तिमुक्त्योरविशेषापत्तिः स्यादि-

(१) ब्र सू० १।३।४२।

DR. RUPAK NATH
RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

सुप्तौ स्वरूपलाभोक्तिर्नत्त्वात्यन्तिकतत्परा ॥ ६५ ॥

एवमन्यत्र वेदान्ते भेदगन्धोऽपि नेष्यते।

ऐक्ये षड्विधतात्पर्यलिङ्गसद्भावतः श्रुतेः ॥ ६६ ॥

ब्रह्म वा इदमित्याद्यारण्यकस्थगिरामपि।

ऐक्ये प्रमापकत्वं ता न भेदं लवतोऽप्युत ॥ ६७ ॥

स यश्चायं नरे यश्चासावादित्ये स एककः।

इति गीरैक्यमेवाहोपाधिभेदनिवारणात् ॥ ६८ ॥

स योह परमं ब्रह्म वेदेत्यादि नु मुण्डके।

ब्रह्मैक्यपरमेवेति वाक्यं भेदभ्रमापहं ॥ ६९ ॥

---

त्यर्थः ॥ ६५ ॥ उक्तन्यायमन्येषु श्रुतिवाक्येष्वतिदिशति—" एव मिति " ॥ ६६ ॥

॥ तत्त्वमसिवाक्यार्थनिरूपणम् ॥

बृहदारण्यकस्थितस्य तु 'ब्रह्म वा इदमग्र आसीत् तदात्मानमेवावेदहं ब्रह्मास्मीति' वाक्यस्यानुपासनाप्रकरणस्थतया अभेदप्रमापकत्वमेवेत्याह—" ब्रह्मेति " । ता गिरो लवतो लेशतो वा कटाक्षेणापि भेदं न वदन्तीत्यर्थ ॥६७॥ 'स(१) यश्चायं पुरुषे यश्चासावादित्ये। स एक' इति वाक्यस्यापि नान्तर्याम्यैक्यपरतं 'ब्रह्मविदाप्नोति पर' मित्यादिना शुद्धस्य ब्रह्मण प्रकृततया तस्मिन्नुपाधिकृतभेदस्य तात्विकत्वप्रसक्तौ तन्निराकरणार्थत्वेन ऐक्योपदेशोपपत्तेरित्यभिप्रेत्याह—" स इति " ॥ ६८ ॥ मुण्डकेऽपि तदैक्यपरं वाक्यमुदाहरति—" स य इति " ॥ ६९ ॥

---

(१) तै० उ० २।

RUPNATHJI( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

परात्परमुपैतीति ब्रह्मप्राप्तिपरं वचः ।
अविद्याभ्रान्तिबाधात्स्यादैक्यज्ञाने न सा गतिः ॥ ७० ॥
सर्व एकीभवन्तीत्येतदप्यैक्यप्रमापकम् ।
अज्ञानहेतुकानेकभावं ध्वस्त्वैकतां गतः ॥ ७१ ॥
अतोऽन्यदार्तं नेतीति जडवर्गनिषेधतः ।

---

'परात्परं पुरुषमुपैति दिव्य'मिति न देशान्तरस्थब्रह्मप्राप्त्युक्तिपरा तस्याः सगुणोपासनफलत्वेन ब्रह्मविद्याफलत्वासम्भवेन स्वरूपभूतब्रह्मप्राप्तिपरत्वादित्याह—"परात्परमिति"। नन्वद्वैतिमते नित्यं ब्रह्मभूतस्या पूर्वब्रह्मभावोक्तिरयुक्तेति तत्राह—"अविद्याभ्रान्तीति"। कण्ठगते चामीकरादौ भ्रान्तिनिवृत्तिमात्रेण प्राप्तप्राप्तिरूपतया फलत्वदर्शनात्तदुक्तिर्युक्तैवेत्यर्थः ॥ ७० ॥ 'परेऽव्यये सर्व एकीभवन्ती'त्येतदप्यभेदे मानमित्याह—"सर्व इति"। ननु गावः स्वयं गोष्ठे एकीभवन्ति' एकीभूता नृपाः सर्वे ववृषुः पाण्डवं शरैः । कीटो भ्रमरेणैकीभूत इतिस्थानैकमत्यैक्यसादृश्यनिबन्धनैकीभावस्य गोनृपकीटभ्रमरादौ दर्शनात् अत्रापि तैरेव निमित्तैर्गौण एकीभावः स्यादित्याशङ्क्य निराचष्टे—"अज्ञानेति"। मुख्यत्वे सम्भवति गौणत्वस्यायोगात् ब्रह्मैक्यमात्रपरत्वेन सकृदुच्चरितस्य नानेकार्थपरत्वशङ्कापीत्यर्थः ॥ ७१ ॥ अनेन ह्येतत्सर्वं वेदेति प्रतिज्ञातस्यैकविज्ञानेन सर्वविज्ञानस्योपपादनार्थं अन्यत्वेन प्रतीतेन जीवेनाभेदबोधनात् अचेतनवर्गस्यातो ऽन्यदार्तं नेति नेतीति निषेधाच्च जीवब्रह्माभेद एव वाक्यप्रमेयः दृष्टान्ते तु अभेदस्याविवक्षितत्वात् त्वदुक्तप्रकाराश्रयणे बाधकाभावान्नाद्वैतिमते क्षतिः का

DR. RUPAK NATHJI ( DR. RUPAK NATH
www.astrology-tantra.com

ब्रह्मात्मैक्यं प्रमेयोऽत्र सर्ववेदान्तसंग्रहे ॥ ७२ ॥
अन्तर्याम्यमृतो ह्येष त आत्मेत्यैक्यतत्परम् ।
अतोऽन्यदार्तमित्यत्र दृश्यमिथ्यात्वबोधनात् ॥ ७३ ॥
द्वितीयाद्भयमित्यत्र भेदस्याभयहेतुताम् ।
वहन्ती निन्दया त्वैक्यं प्रमेयं वदति श्रुतिः ॥ ७४ ॥
यन्मदन्यन्न चास्तीह तत्कस्मान्नु बिभेम्यहम् ।

---

चनास्तीत्यभिप्रेत्याह—" अतइति " ॥ ७२ ॥

नन्वत्राप्यन्तर्यामिवाक्ये 'य आत्मनो अन्तरो यमात्मा न वेद यस्यात्मा शरीरं य आत्मानमन्तरो यमयतीति पूर्ववाक्येन 'एष त आत्मा अन्तर्याम्यमृत अतोऽन्यदार्त'मित्युत्तरवाक्येन च विरोधः तत्र परमात्मनोऽन्यं चेतनमङ्गीकृत्य तस्यार्तियुक्तत्वेनाख्यातत्वस्यैवोक्तेरित्याशङ्क्य पूर्ववाक्यस्यौपाधिकभेदमात्रेणोपपत्तेः उत्तरवाक्येन न चेतनान्तरस्यार्तियोगो विधीयते किन्त्वेषोऽन्तर्यामी ते आत्मेति जीवस्वरूपभूतादन्तर्यामिणोऽव्यतिरिक्तं सर्वं आर्तं विनश्वरमिति वा मिथ्येति वा बोधना न्न विरोधशङ्काऽस्तीत्यभिप्रेत्याह— " अन्तर्यामीति " ॥ ७३ ॥ 'द्वितीयाद्वै भयं भवतीति' भेदस्य भयहेतुत्वेन निन्दितत्वादप्यभेद एवोपनिषद्गम्य इत्याह—" द्वितीयादिति " ॥ ७४ ॥ नन्वस्य विरोधिनः समानाद्भयं भवतीत्येवार्थः लोके तादृशादेव भयदर्शनेन लोकसिद्धानुवादित्वात् पूर्वत्र 'तस्मादेकाकी बिभेति' उत्तरत्र 'तस्मादेकाकी न रमते' इति श्रवणादिति शङ्कां श्रुत्यन्तरनिदर्शनेन निरस्यति— " यदिति " । 'यन्मदन्यन्नास्ति कस्मान्नु बिभेमीति' 'तत एवास्य भयं वीयाये-

RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

द्वैतस्य भयहेतुत्वं स्पष्टमाह श्रुतिः स्वयम् ॥ ७५ ॥
अल्पमप्यन्तरं कुर्वन्भयं यातीति वेदगीः ।
भेदस्य निन्दनादैक्ये प्रामाण्यं भजते स्फुटं ॥ ७६ ॥
सर्वभूतेषु गूढोऽयं देव एक इति श्रुतिः ।
केवले निर्गुणे शुद्धे मानमद्वैतवस्तुनि ॥ ७७ ॥
एक एव हि भूतात्मा भूते भूते व्यवस्थितः ।
एकधा बहुधा चैव दृश्यते जलचन्द्रवत् ॥ ७८ ॥
यावन्मोहं तु भेदः स्याज्जीवस्य च परस्य च ।

---

ति' श्रुतेः सामान्यतो द्वितीयमात्रदर्शनस्यैव भयहेतुत्वात् विशेषकल्पनायोगात् 'एकाकी बिभेतीति' पूर्ववाक्ये परमार्थदर्शनरहितस्य तन्निमित्तभयसम्भवात् एकाकी बिभेतीत्युक्तं उत्तरवाक्ये तस्मादेकाकी न रमते इत्यत्र इष्टसंयोगजन्यरतेरेकाकिन्यभावात् एकाकिनो रतिर्नास्तीत्युक्तं ततश्चातत्त्वज्ञविषयोक्तवाक्यानुसारेण तत्त्वज्ञविषयस्य वाक्यस्य स्वार्थसमर्पणेनाप्युपयुक्तत्वात् तद्विरोध्यर्थपरत्वायोगात् 'य एतस्मिन्नुदरमन्तरं कुरुत अथ तस्य भयं भवतीति भेदनिन्दयाऽप्यभेदसिद्धिरिति द्वयोस्तात्पर्यार्थः ॥ ७५ ॥ ७६ ॥

'एको देवः सर्वभूतेषु गूढ' इत्यादिश्रुतिरप्यैक्ये प्रमाणमित्याह— "सर्वेति" ॥ ७७ ॥ श्रुत्यन्तरमप्यत्रप्रमाणमित्याह—" एकएवेति " ॥ ७८ ॥ भेदस्याविद्यकत्वे ऐक्यस्य तात्विकत्वे स्मृतिप्रमाणमाह— " यावदिति " त्रिभिः । एवं श्रुतिस्मृतिवाक्यानि

ततः परं न भेदोऽस्ति भेदहेतोरभावतः ॥ ७९ ॥
विभेदजनकेऽज्ञाने नाशमात्यन्तिकं गते ।
आत्मनो ब्रह्मणो भेदमसन्तं कः करिष्यति ॥ ८० ॥
क्षेत्रज्ञं चापि मां विद्धि सर्वक्षेत्रेषु भारत ।
एवं श्रुतिस्मृतीनां स्युर्गिरोमानं सहस्रशः ॥ ८१ ॥
तत्त्वतो नैव भिद्यन्ते जीवास्ते परमात्मनः ।
परमात्मवदेवैते आत्मत्वादिति माऽनुमा ॥ ८२ ॥
यद्वा स्वव्यवहारे स्वभिन्नज्ञानानपेक्षता ।
हेतुरस्त्वथवा तत्राबाध्यत्वं ज्ञातृताऽथवा ॥ ८३ ॥
पारमार्थिकभेदस्य सर्वथाऽसम्भवादपि ।
जडे न व्यभिचारोऽस्ति तात्त्विकाभेदसाधने ॥ ८४ ॥

---

सहस्रश ऐक्ये प्रमाणानीति सिद्धमिति भावः ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥

॥ अहं ब्रह्मास्मीत्याद्यनेकश्रुतिस्मृत्यर्थकथनम् ॥

एवमनुमानमपि तत्र मानमित्याह—“ तत्त्वत इति ” । अनुमा अनुमानरूपा प्रमाणमित्यर्थः । ननु आत्मत्वजातिरत्र हेतुस्तथाप्यत्र हतूच्छित्तिरेव प्रतिकूलस्तर्क इति चेन्न तत्त्वतोभेदेपि व्यावहारिकभेदेनैव व्यावहारिकजातेरनुच्छेदोपपत्तेरिति भावः ॥ ८२ ॥

स्वव्यवहारे स्वभिन्नज्ञानानपेक्षत्वं वा हेतुः, तत्रापि जीवस्य स्वाभिन्ननित्यज्ञानस्याबाध्यव्यवहारविषयत्वात् अबाध्यत्वं हेतुः ज्ञातृत्वादिरूपश्च हेतुः जीवे उपधेयान्तःकरणोपहितवृत्तेस्तस्यासिद्धेरभावादित्यभिप्रेत्याह—“ यद्वेति ” द्वाभ्यां ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ भेदो

www.astrology-tantra.com
DR.RUPAK NATH
RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )

भेदो मिथ्याऽस्ति भेदत्वादेकस्यां दृशि कल्पितः ।
दृश्यत्वादिति हेतोर्वा चन्द्रभेदवदेव सः ॥ ८५ ॥
मिथ्याऽस्ति भेदधीर्भेदधीत्वाच्चन्द्रभिदेव धीः ।
इत्यादीन्यनुमानानि भेदमिथ्यात्वसाधने ॥ ८६ ॥
पादोऽस्येति श्रुतौ तद्वन्ममैवांश इति स्मृतौ ।

---

मिथ्या एकस्यां दृशि कल्पितो वा भेदत्वात् दृश्यत्वाद्वा चन्द्रभेद-वदित्यनुमानान्तरमाह—“ भेदइति ” । एकस्यां दृशि क्षणि-कत्वादिकल्पितभेदवद्वा मिथ्या अकल्पितभेदो न कुत्रापीत्यर्थः ॥ ८५ ॥ एवं विमता भेदधीर्मिथ्या भेदधीत्वाच्चन्द्रभेदधीवदित्यनु-मानान्तरमाह—“ मिथ्येति। चन्द्रभिदेव धीरिति ” । चन्द्र-भिदा प्रमेयत्वेन विषयो यस्याः सा धीस्तथेत्यर्थः ॥ ८६ ॥

॥ जीवब्रह्माभेदानुमानोपपत्तिः ॥

‘पादोऽस्य विश्वाभूतानीति’श्रुतौ ‘ममैवांशो जीवलोके जीव-भूत सनातनः इति स्मृतौ चांशत्वव्यपदेशादपि जीवब्रह्माभेदसि-द्धिरित्याह—“ पादइति ” । यद्यपि ब्रह्म प्रति जीवस्यांशत्वं न. तदारम्भकत्वं ब्रह्मणोऽनादित्वात् नापि खण्डत्वं अछेद्यत्वात् नापि समुदायित्वं समुदायस्य समुदाय्यनन्यत्वेन व्यवहारदशा-यामपि संसार्यन्यशुद्धब्रह्माभावापातात् नापि भिन्नाभिन्नद्रव्यन्त-रानङ्गीकारात् नापि घटं प्रति खण्डपटस्येव प्रदेशत्वं निष्प्रदेशब्रह्म-प्रति कल्पनां विना तदयोगात् तथाऽपि घटाकाशस्य महाकाशं प्रतीव कल्पितत्वं जीवस्यावच्छेदपक्षे सम्भवति स्वतो निरंशोऽपि

RUPNATHJI(DR.RUPAK NATH)
www.astrology-tantra.com

अंशत्वोक्त्याऽनयोरैक्यं घटाकाशादिसाम्यतः ॥ ८७ ॥
निरंशेऽप्यंशतारोपो भवेदौपाधिकस्ततः ।
महत्त्वं कुम्भखं यद्वदन्यथा नांशतेष्यते ॥ ८८ ॥
तथा ब्रह्मात्मनोरैक्यं स्याद्बिम्बप्रतिबिम्बवत् ।
आपाताद्भेदभानेऽपि सयुक्त्यध्यक्षतोऽभिदा ॥ ८९ ॥
यत्स्वलक्षणकं वक्त्रं दृष्टं ग्रीवास्थमुज्ज्वलं ।
दर्पणस्थं तथेदं तदेवेति मुखमस्ति मे ॥ ९० ॥

---

औपाधिकांशो यथा युज्यते तथोक्तं पुरस्तादिति द्वयोस्तात्पर्यार्थ. ॥ ८७ ॥ ८८ ॥

॥ अंशत्वैक्यसिद्धिः ॥

तथा जीवब्रह्मणोर्मुखप्रतिमुखवद् बिम्बप्रतिबिम्बरूपत्त्वादप्यभेदोऽवगन्तव्य इत्याह—"तथेति"। ननु दृष्टान्ते नाभेदः सम्प्रतिपन्नः चैत्रछाये भिन्ने इतिवच्चैत्रतत्प्रतिबिम्बे भिन्ने इत्येव पार्श्वस्थितेन ग्रहणात् स्वना[illegible]स्वकरतत्प्रतिविम्बे भिन्ने इति ग्रहणादित्याशङ्क्याह—"आपातादिति" । आपाततो भेदप्रतीतावपि सयुक्तिकप्रत्यक्षेण-बिम्बप्रतिबिम्बयोरभिदैवेत्यैक्यसिद्ध्या दृष्टान्तत्वोपपत्तिरस्त्येवेत्यर्थः ॥८९॥ तदेवानुभवेन द्रढयति—"यत्स्वलक्षणकमिति" । लक्षणापरिज्ञाने भेदभ्रमवतोऽपि बहिस्थितश्चैत्रोयत्स्वलक्षणकत्वेन प्रतिपन्न. ततो गृहस्थे तथा भाति तस्मिंश्चैत्र एवायमिति धीः तथा ग्रीवास्थं मुखं यत्स्वलक्षणकं प्रतिपन्नं दर्पणस्थमपि तथेत्यवधार्य्य तदेवेदं मुखमिति स एवाय कर इति च स्वपरसाधारणप्रतीतिरप्यनुभवसिद्धेति तात्पर्यार्थ. ॥ ९० ॥

DR. RUPAK NATH
www.astrology-tantra.com

तद्दृष्टान्तेन तत्वैक्यं लक्षणैक्यात्प्रतीयते ।
प्रतिबिम्बत्वसद्भावे निर्णीता युक्तयो बुधैः ॥ ९१ ॥
अनाद्युपाधिनाऽनादिजीवस्यानादिसंसृतिः ।
तत्वज्ञानेन तद्बाधाज्जीवो ब्रह्मैव सिध्यति ॥ ९२ ॥
तदेवं प्रतिबिम्बस्य बिम्बेनैक्ये व्यवस्थिते ।
ब्रह्मैक्यं जीवजातस्य सिद्धं तत्प्रतिबिम्बनात् ॥९३॥
नित्यः सर्वगतो ह्येष महानज इति श्रुतः ।

---

दार्ष्टान्तिके फलितमाह—“ तद्दृष्टान्तेनेति ” । जीवस्य ब्रह्मप्रतिबिम्बभावसाधकयुक्तीनां सूरिभिः सामञ्जस्यप्रदर्शनं बहुधा कृतं न तत्प्रयासो ऽत्रास्तीत्याह—“ प्रतिबिम्बत्वेति ” ॥९१॥ नन्वनादेर्जीवस्य नोपाध्यधीनं प्रतिबिम्बत्त्वं किं तु तदनधीनत्वेसति तत्सदृशत्वं तच्च भेदव्याप्यमिति विरुद्धो हेतुः उक्तं हि सूत्रकृता ‘ अत(१)एव चोपमा सूर्यकादिति तत्राह—“ अनादीति ” । उपाध्यधीनत्वं हि उपाधौ सत्येव सत्वं तच्च नानादित्वविरोधि अनाद्युपाधिना अनादिजीवस्यापि तत्सम्भवात् अत एव प्रतिबिम्बपदस्य भेदसादृश्यव्यापकत्वमादाय विरुद्धत्वोक्तिर्हेतावयुक्तेति तात्पर्यार्थः ॥ ९२ ॥ फलितमुपसंहरति—“ तदेवमिति ” ॥ ९३ ॥

॥ बिम्बप्रतिबिम्बन्यायेनैक्यसिद्धिः ॥

नन्वणुत्वाज्जीवस्य कथं व्यापकादीशादभेद इति चेन्मैव मित्याह—“ नित्य इति ” । जीवो नाणु प्रत्यक्षगुणाश्रयत्वात्प्रत्यक्षत्वाच्च घटवत् आत्मत्वादभूतत्त्वाच्चेशवदित्याद्यनुमानैश्च जीवानणुत्वसिद्धेः

(१) ब्र० सू० ३ । २ । १८ ।

RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

व्यापकत्वप्रसिद्धश्च नाणुर्जीव इति स्थितं ॥ ९४ ॥
एषोऽणुरिति वेदान्तो दुर्विज्ञेयात्मतत्परः ।

---

विपक्षे च देहव्यापिसुखज्ञानाद्यनुपलम्भापत्तिर्बाधिका ततो नाणुर्जीव इत्यर्थः ॥ ९४ ॥

नन्व 'णुर्ह्येष आत्मा यं वा एते सिनीतः पुण्यं च पापं च' 'बालाग्रशतभागस्य शतधा कल्पितस्य च। भागो जीवः स विज्ञेयः स चानन्त्याय कल्पते' इति श्रुत्या जीवोऽणुरिति चेन्मैवमित्याह— " एष " इति । व्यापकत्वप्रतिपादकबहुश्रुतिविरोधेन दुर्विज्ञेयत्वपरत्वात् देशव्यापिगुणोपलम्भस्यान्यथयितुमशक्यत्वात् । ननु जीवो न व्याप्तः उत्क्रान्तिमत्वात् क्रियावत्त्वाच्च खगशरीरवत् विपक्षे हेतूच्छित्त्यापत्तिरेव बाधिकेत्याशङ्क्याह—" उत्क्रान्त्यादिरिति "। हेतोरसिद्धेर्नानुमानं तत्र मानं । ननु सोऽस्माच्छरीरादुत्क्रम्यामुं लोकमधिगच्छति अमुष्मादिमं लोकमागच्छतीत्यादिश्रुतिभिः 'तत्र चान्द्रमसं ज्योतिर्योगी प्राप्य निवर्त्तते' इत्यादिस्मृतिभिश्च हेतुसिद्धिरित्याशङ्क्याह—" धिय " इति । उत्क्रमणादीनां बुद्धिगतानां तदुपहिते श्रुत्या प्रतिपादनात् न तु शुद्धे गत्यादिकमिति भावः । आत्मनि सुखदुःखाद्यनुभवस्याऽपि बुद्ध्युपाधिकत्वेन तत्सामानाधिकरण्यस्य गतौ स्वाभाविकत्वासाधकत्वान्न तेषामात्मगतत्वमित्याह— " आत्मनीति " । ननु 'स एतान्ब्रह्म गमयती'त्यादिश्रुतौ 'तत्र प्रयाता गच्छन्ति ब्रह्म ब्रह्मविदो जना' इत्यादिस्मृतौ च गतेर्मुक्तिसामानाधिकरण्योक्तेः कथं नात्मगतत्वमिति चेन्मैवमित्याह—" यावदिति " । अव्यापकस्यैवाव्यापकं प्रत्येव गमनं ब्रह्म च व्यापकं तत्प्रतिगमनासम्भवेन गमनपदस्योपाधिकृतभेदराहित्यपरतया गतिमुक्तिसामानाधिकरण्याप्रतिपादकत्वाद्याव-

DR.RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

उत्क्रान्त्यादिर्धियो धर्मस्तत्सत्त्वे तस्य सम्भवः ॥९५॥
आत्मन्यारोपिता बुद्धिस्तद्धर्मा न तु शुद्धगाः ।
उत्क्रान्त्याद्याः सुखाद्याश्च यावन्मोहं भवन्ति ते ॥९६॥
तत्वसाक्षात्कृतौ बुद्ध्याद्युपाधिविलये सति ।
उत्क्रान्त्याद्याः सुखाद्याश्च शुद्धे सन्ति न कर्हिचित् ॥९७॥
येनाऽऽत्मनापि यद्बुध्यवच्छिन्नेन न कर्म यत् ।
कृतं तेनैव तद्बुद्ध्यवच्छिन्नेनैव भोजनं ॥ ९८ ॥

---

दृष्टान्तं यथा यथं सर्वस्यापि व्यवस्था समर्थनीयेति भावः ॥९५॥९६॥

ननु 'तेन प्रद्योतेनैष आत्मा निष्क्रामति' इत्यात्मनिष्ठत्वश्रुतेर्नासिद्धिः अन्यथा मोक्षादिकमपि बुद्धेरेव स्यात् नाऽपि श्रुत्या बुद्ध्युपाधिकगत्यादिविषयत्वं सम्भवति 'तद्यथाऽनः सुसमाहितमुत्सर्जद्यायादेवमेवायं शारीर आत्मा प्राज्ञेनाऽऽत्मनाऽन्वारूढ उत्सर्जन्यातीति' स्वाभाविकगत्यभावशकटदृष्टान्तोक्तेरित्याशङ्क्यैष इति बुद्ध्युपहितस्यैव परामर्शात् शुद्धात्मनिष्ठत्वस्य गतावनुक्तेः मोक्षे च बुद्ध्युपरमेन तन्निष्ठत्वस्यासम्भाविततया वैषम्यादित्यभिप्रेत्याह—"तत्वसाक्षात्कृताविति" ॥ ९७ ॥ नन्वात्मनो व्यापकत्वे सर्वाणि शरीराणि सर्वस्यैव भोगायतनानि स्युः तथा हि सर्वशरीरेन्द्रियादीनां सर्वदा सर्वात्मसंयुक्तत्वात्कर्मणामपि साधारणदेहादिकृतत्वेन असाधारण्यायोगात् अहन्त्वारोपादेरपि नियामकमूलसम्बन्धादेरप्येवं नैयत्यायोगादित्याशङ्क्य तवापीश्वरस्य व्यापकत्वेन सर्वशरीराणां तद्भोगजनकत्वापत्तेः समानत्वान्न च तददृष्टाजन्यत्वात्तत्संयुक्तत्वेऽपि न तत्र भोगजननं तर्हीहापि सममित्यभिप्रेत्याह—"येनेति" । यद्बुद्ध्यवच्छिन्नेन येनैवाऽऽत्मना यत्कृतं तदवच्छिन्नेन तेनैव भोजनात् नह्यात्मनो व्यापकस्यापि निरवयवस्य प्रदेशोऽस्ति न च कर्मणामेव कथमसाधारण्यं पूर्वतत्कर्मजन्यत्वात् एवमनादित्वैव शरणं अन्यथा ईशात्मनि तवाप्यगतेरिति तात्पर्यार्थः ॥ ९८ ॥

DR. RUPNATHJI (DR. RUPAK NATH)
www.astrology-tantra.com

एवं न कृतहान्याद्यापत्तिरस्ति मनागपि ।
जीवोऽस्तु प्रतिबिम्बो वाऽवच्छिन्नो वा तदेव वा ॥ ९९ ॥
बुद्ध्याद्युपाधिसम्बन्धादेव संसृतिभागयं ।
तत्वज्ञानेन तद्बाधे विशुद्धो नित्यमोक्षभाक् ॥ ३०० ॥
नाणुर्न मध्यमो जीवो न विभुस्तार्किकैर्मतः ।
जीवो ब्रह्मैव वेदान्तसिद्धान्त इति निर्णयात् ॥ १ ॥
अद्वैतसिद्धिपरिशीलनतो मयाऽऽत्म-
तत्वे धियः परिचयाय परिश्रमो यः ।
सम्यक् कृतो यदि भवेदथ वा ऽन्यथाऽसौ
श्रीकृष्णपादकमले ऽर्पित एव भूयात् ॥ २ ॥

अद्वैतसिद्धिसिद्धान्तसारसङ्ग्रहे द्वितीयः परिच्छेदः ।

---

नन्ववच्छिन्नस्य कर्तुर्भोक्तुर्भेदात्कृतहान्यादिदोषापत्तिः स्यादित्यत आह—" एव " मिति । अवच्छेद्यात्मनोऽवच्छेदकबुद्धेश्चैक्येऽवच्छिन्नभेदस्य वक्तुमशक्यत्वमिति भावः ॥ ९९ ॥ सिद्धान्तरहस्यमाह—" जीव " इति सार्द्धद्वाभ्यां ॥ ३०१ ॥ स्वकृतपरिश्रमं स्वेष्टदैवतकृष्णपदारविन्दे समर्पयति—" अद्वैतसिद्धीति " ॥ ३०२ ॥

इति श्रीमन्मुकुन्दपदारविन्दमकरन्दरसाभिलाषिश्रीसदानन्दविदा कृते अद्वैतसिद्धिसिद्धान्तसारसङ्ग्रहे आत्मनिरूपणं नाम द्वितीयपरिच्छेदः समाप्तः ।

DR. RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

॥ श्रीः ॥

सव्याख्याद्वैतसिद्धिसिद्धान्तसारसङ्ग्रहे

तृतीयः परिच्छेदः प्रारभ्यते ।

श्रवणादिपरा नित्यं यं चिदानन्दमद्वयम् ।
साक्षात्कृत्य कृतार्थाः स्युस्तं सदा नौमि केशवम् ॥ १ ॥
एवं व्यवस्थिते ब्रह्मतत्त्वैकात्म्ये प्रमाणतः ।

---

यस्यानन्दसमुद्रस्य ब्रह्मानन्दादयो लवाः ।
तं प्रणौमि चिदानन्दं मुकुन्दं स्वेष्टदैवतम् ॥ १ ॥
शान्तिदान्त्यादिसम्पन्नाः श्रवणादिपरायणाः ।
चिन्तयन्ति यमानन्दमाश्रये तं परं हरिम् ॥ २ ॥

तदेवं ब्रह्मात्मैक्यरूपे वेदान्तप्रमेये व्यवस्थिते तत्साक्षात्काराय मुमुक्षुभिरनुष्ठेयं श्रवणादिसाधनमङ्गाङ्गिभावेन विवेक्तुं स्वेष्टदेवतानुसन्धानात्मकं मङ्गलमाचरन् उपक्रमते—“ श्रवणादीति ”। तत्राङ्गित्वेन श्रवणं विधीयते इत्याह—“ एवमिति ” द्वाभ्यां । ‘ आत्मा वा अरे द्रष्टव्यः श्रोतव्य ’ इत्यत्र प्रमेयावगमं प्रति साक्षादवधानेन श्रवणस्यैव विधानात् ‘मन्तव्यो निदिध्यासितव्य’ इत्यत्र दर्शनं प्रति श्रवणमपेक्ष्य मनननिदिध्यासनयोर्व्यवधानादङ्गत्वं आश्रीयते इत्याह—“ प्राधान्या ” दिति । तत्वसाक्षात्कारा-



DR.RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

तत्साक्षात्कारसिद्ध्यर्थं श्रवणादि विविच्यते ॥ २ ॥
श्रवणं मननं ध्यानमनुष्ठेयतया श्रुतम् ।
त्रितयं श्रवणं तत्र प्राधान्यादङ्गितां व्रजेत् ॥ ३ ॥
तदङ्गित्वं प्रमाणस्य प्रमेयावगमं प्रति ।
सिद्ध्यत्यव्यवधानेन तदङ्गत्वं तयोर्द्वयोः ॥ ४ ॥
चित्तस्यैकाग्रताद्वारा संशयादिनिरासतः ।
प्रत्यक्प्रावण्यहेतुत्वं भजेतां ध्यानचिन्तने ॥ ५ ॥
विचारः शब्दशक्त्यैकतात्पर्यस्यावधारणम् ।

---

त्मकं फलं श्रवणैकसाध्यमित्यर्थः ॥ २ ॥ ३ ॥ एतदेव विवरणोक्तरीत्या द्रढयति—"तदङ्गित्व"मिति । तदयं निष्कर्षः श्रवणमङ्गि प्रमाणस्य प्रमेयावगमं प्रत्यव्यवधानात् मनननिदिध्यासने तु चित्तस्य प्रत्यगात्मप्रवणसंस्कारनिष्पन्नतदेकाग्रवृत्तिकार्यद्वारेण ब्रह्मानुभवहेतुतां प्रतिपद्येते इति फलोपकार्यङ्ग इति ॥ ४ ॥ ५ ॥

ननु श्रवणं तावद्विचाररूपं शाब्दज्ञाने न करणं वेदेन धर्मे इव ब्रह्मणि प्रमीयमाणे विचारस्यानुमानादौ तर्कस्येव शब्दरूपे तज्ज्ञानरूपे वा करणे इतिकर्तव्यतामात्रत्वादिति चेत्तत्राह—"विचार" इति । शब्दशक्तितात्पर्यावधारणं तावद्विचारः अवधृतशक्तितात्पर्यश्च शब्दः करणमिति विचारस्य करणकोटिप्रवेशेन इतिकर्तव्यतात्वाभावादङ्गित्वनिर्णयात् तथा च तात्पर्यावधारणरूपस्य विचारस्याङ्गित्वं । नन्वाकाङ्क्षादिसहितशब्दज्ञानस्यैव करणत्वसम्भवे तात्पर्यभ्रमनिरासोपक्षीणतयोक्ततात्पर्यज्ञानस्य करणकोटिप्रवेशे मननादेरपि तत्कोटिप्रवेशः स्यादिति शङ्कां निरस्यति—"तावन्नगुणादीति" । एवमुक्तं भवति एवं साकाङ्क्षादिधियो

DR.RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH
www.astrology-tantra.com

निर्णीतशक्तितात्पर्यवांश्छब्दः करणं मतः ॥ ६ ॥
विचारस्याऽपि करणे प्रवेशेनाङ्गिता मता ।
नाकाङ्क्षादिप्रविष्टं स्यादन्यथा करणे ध्रुवम् ॥ ७ ॥
तस्माद्द्रष्टव्य इत्यत्र दर्शने सन्निधानतः ।
श्रोतव्य इति साक्षात्स्यादङ्गित्वं श्रवणेऽस्य यत् ॥ ८ ॥
शब्दातिशयहेतुत्वाच्छ्रवणस्याङ्गितेष्यते ।
चित्तातिशयहेतुत्वात्तयोरङ्गत्वमीरितम् ॥ ९ ॥
फलाद्युक्त्यनुसन्धानं चित्तस्यैकाग्र्यकारणम् ।

---

निराकाङ्क्षत्वादिभ्रमनिरासकत्वमात्रेणोपयोगापत्तावाकाङ्क्षादिकमपि करणकोटिप्रविष्टं न स्यान्न चान्योन्याश्रयः सामान्यतोऽर्थावगमनेन तात्पर्यग्रहसम्भवात् अन्यथा नानार्थादौ विनिगमनादिकं च न स्यात् तथा च सर्वत्र तात्पर्यज्ञानस्याजनकत्वेऽपि यत्र तात्पर्यसंशयविपर्ययोत्तरशाब्दधीः तत्र तात्पर्यज्ञानस्य हेतुता ग्राह्या संशयविपर्ययोत्तरप्रत्यक्षे विशेषदर्शनस्येवेति ॥ ६ ॥ ७ ॥ फलितमुपसंहरति—" तस्मादिति " ॥ ८ ॥

अत्रैव वितुखाचार्याभिमतिं दर्शयति—" शब्देति " । करणीभूतशब्दगतातिशयहेतुत्वात् श्रवणस्य करणत्वेनाङ्गित्वं मननिदिध्यासनयोस्तु सहकारिभूतचित्तगतातिशयहेतुत्वात्फलोपकाराङ्गतेत्यर्थः ॥ ९ ॥ ननु यद्यपि चित्तैकाग्र्यस्य सूक्ष्मवस्तुज्ञानहेतुत्वं दृष्टमस्ति तथाऽपि मननं न चित्तैकाग्र्यहेतुः युक्त्यनुसन्धानरूपमननस्यायुक्तत्वशङ्कानिवर्तकताया एव दृष्टत्वेन चित्तैकाग्र्यहेतुत्वकल्पने सति दृष्टहान्यापतेः मननविधेरपूर्वत्वापाताच्च मतिर्यावद्युक्तेति स्मृतेर्विरोधाच्चेति तत्राह—" फलादिति " । ताद-

RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

विपरीतनिवृत्त्या स्याद्ध्यानमैकाग्र्यकारणम् ॥ १० ॥
नियमः श्रवणे ज्ञानसाधने विधिरिष्यते ।
नापूर्वादिविधिस्तत्र सिद्धोपायोऽन्वयादिना ॥ ११ ॥
गान्धर्वशास्त्रे षड्जादिसाक्षात्कारैकहेतुता ।
विचारस्य यतो दृष्टा ततो नापूर्व इष्यते ॥ १२ ॥
अपरोक्षेऽपि षड्जादौ विचार्यत्वं यथेक्ष्यते ।
तथैवाऽऽत्माऽपरोक्षोऽपि विचार्यत्वं व्रजेच्छ्रुतौ ॥ १३ ॥

---

क्शङ्कायां सत्यां नानाकोटौ चित्तविक्षेपस्य तस्याश्च निवृत्तौ युक्तत्वेनावधारणविषयकोटौ चित्तप्रवणतायास्तावत्पर्यन्तत्वस्य दृष्टत्वेन दृष्टहान्यपूर्वविधिस्मृतिविरोधाभावात् । निदिध्यासनस्य तु विपरीतसंस्काररूपविपरीतभावनानिवर्त्तकता सकलसिद्धेति तात्पर्यार्थः ॥ १० ॥

॥ मनननिदिध्यासनयोः श्रवणाङ्गतोपपत्तिः ॥

तच्च श्रवणादिकं विषयावगमं प्रत्यन्वयव्यतिरेकाभ्यां सिद्धोपाय इति तद्विधेर्नापूर्वादिविधित्वं किं तु नियमविधित्वमेवेत्याह— " नियमइति " ॥ ११ ॥

नन्वस्य श्रवणस्यापरोक्षफलं प्रति साधनत्वं तच्चान्यतो नावगतमित्यपूर्वविधित्वमेवेतिचेत्तत्राह—" गान्धर्वेति " ॥ १२ ॥ नन्वेतावता शास्त्रविचारः सर्वत्रार्थसाक्षात्कारहेतुरिति न सिद्धं धर्मशास्त्रविचारे व्यभिचारादित्याशङ्क्यापरोक्षार्थकशास्त्रविचारत्वेन साक्षात्कारजनकतायास्तद्दर्शनबलेन सिद्धेर्मैवमित्याह—"अपरोक्षइति " । आत्मा च षड्जादिवदपरोक्षो न धर्मादिरिति न तत्र व्यभिचार इत्यर्थः ॥ १३ ॥ नन्वपरोक्षे विचारवैयर्थ्यं न हि यद्यद्-

RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

सर्वत्रापि विचार्यत्वसन्दिग्धत्वफलित्वयोः ।
प्रयोजकत्वं तत्सत्वं ब्रह्मात्मैक्यविचारणे ॥ १४ ॥
निर्विशेषेऽन्यतोऽप्राप्तावपि मानान्तराद्विभौ ।
सामान्यतस्तथाप्यस्ति प्राप्तिरात्मनि चिद्घने ॥ १५ ॥
व्रीहीनित्यत्र शास्त्रैकगम्यापूर्वीययोगिषु ।
अन्यतो दलनादेश्चाप्राप्तावप्युच्यते तथा ॥ १६ ॥
व्रीहिमात्रसमाकारस्तत्र यद्वत्तथाऽत्र वद् ।

---

परोक्षं तत्तद्विचार्यते इति नियम इत्याशङ्क्याह—" सर्वत्रेति " । अपरोक्षे विचार्यत्वनियमाभाववदविचार्यत्वनियमोऽपि नास्ति षड्जादावपरोक्षेऽपि विचार्यत्वदर्शनात् तद्वदेव साफल्यसम्भवाच्च सन्दिग्धत्वसप्रयोजनत्वयोरेव सर्वत्र विचार्यत्वे प्रयोजकत्वादित्यर्थः ॥ १४ ॥ ननु पाक्षिकप्राप्तौ नियमः सा च साधनान्तरप्राप्तौ न च रूपादिरहितात्मज्ञाने तत्प्राप्तिरस्तीत्याशङ्क्य निर्विशेषात्मनि मानान्तराप्राप्तावपि आत्मनि सामान्यतस्तत्प्राप्तिरस्तीति नियमसम्भवादित्यभिप्रेत्याह—" निर्विशेष " इति ॥ १५ ॥

नैतददृष्टचरमित्याह—" व्रीहीनिति " । यथाऽपूर्वीयेषु व्रीहिविशेषेषु नखविदलनादेरप्राप्तावपि व्रीहिसामान्ये तत्प्राप्त्या व्रीहीनवहन्तीति नियमविधिरित्यर्थः ॥ १६ ॥ ननु व्रीहीनवहन्तीत्यत्र व्रीहिपदमपूर्वीयद्रव्यपरं न तु व्रीहिमात्रपरं अन्यथा यवेष्ववघात औपदेशिको न स्यात् नीवारेषु व्रीहित्वरूपद्वाराभावेनानिर्दिष्टोऽपि बाध्यतेति नवमे स्थापितत्वेनापूर्वीयद्रव्य एव दलनादिप्राप्तेर्

विषयज्ञानमात्रैकसमानाकारसम्भवः ॥ १७ ॥
यद्वा स्मृतिपुराणादिप्राप्त्या पक्षेऽस्त्यसम्भवः ।

---

कव्यत्वात् अन्यथा वैतुष्यमात्रे अवघातनियमे द्रव्यार्जने(१)याजना-द्युपायनियमवत्तस्य पुरुषार्थत्वप्रसङ्गेन लौकिकेऽपि व्रीहिषु दल-ने प्रत्यवेयादित्याशङ्क्य नियम्यमानावघातस्यापूर्वीयद्रव्यमात्रविषय-त्वेऽपि सामान्यविषयप्राप्त्यैव नियमोपपत्तौ विशेषविषयप्राप्तेरनपे-क्षितत्वान्मैवमित्याह—" व्रीहिमात्रेति " । ननु निर्विशेषसवि-शेषरूपविशिष्टद्वयानुगते विशेषाकारादिद्वारा वेदान्तवेद्ये चिन्मात्रे न मानान्तरप्राप्तिरिति चेत्तत्राह—" तथास्त्विति " । उभया-नुगते सविशेषतया प्रमेयतायां मानान्तरप्राप्तेः सत्त्वात्सजातीये प्रा-प्त्याऽपि यत्र सजातीयान्तरनिवृत्त्यसम्भवः तदा किमु वाच्यमेकस्मि-न्नेवात्मनि अवस्थाविशेषेण मानान्तरप्राप्त्या विशेषान्तरे नियम इत्यर्थः ॥ १७ ॥

पक्षान्तरेण नियममाह—" यद्वेति " । यथा मन्त्रार्थज्ञा-नस्य कल्पसूत्रस्मार्यग्रहणकवाक्यादिनापि प्राप्तत्वेन पक्षे अप्राप्तं मन्त्रसाध्यत्वं नियम्यते मन्त्रैरेव स्मृतिः साध्येति तथा वेदान्तमू-लकसाधारणस्मृतिपुराणादिप्राप्त्या पक्षे अप्राप्तवेदान्तश्रव-णार्थिपूरणार्थो नियमः 'तस्माद्ब्राह्मणो नावैदिकमधीयीतेति' श्रुतेः 'श्रोतव्यः श्रुतिवाक्येभ्य' इत्यादिस्मृतेश्च 'इतिहासपुरा-णाभ्यां वेदं समुपबृंहये'दिति तु वेदान्ते तात्पर्यनिर्णयाय तद्विचा-रापेक्षामात्रपरं नियमे तु तदपेक्षायामपि ब्रह्मज्ञाने तद्विचारापेक्षा-विरहादिति श्रुतेरेव निरपेक्षप्रामाण्यं तत्रेति त्रयाणां तात्पर्यार्थः

---

(१) याजनादिनैव द्रव्यमर्जनीयमिति नियमजन्यादृष्टस्य सार्थक्याय याजनाद्युपायेन द्रव्योपार्जने यथा प्रत्यवाय कल्प्यते तथा अवघातेन वैतुष्य साध्यमित्यत्र तत्पुरुषार्थक्याय दलनादिना वैतुष्यसम्पादने तत्कल्पना स्यादिति भाव ।

RUPNATHJI ( DR RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

वेदान्तश्रवणादीनां पूर्त्यै नियम इष्यते ॥ १८ ॥
अस्ति वेदान्ततात्पर्यनिर्णयाय स्मृतेरपि ।
अपेक्षा तद्विचारस्य पुंदोषक्षयकारिता ॥ १९ ॥
तथापि ब्रह्मतत्त्वैक्यज्ञानवेदान्तमानते ।
नापेक्षाऽस्ति पुराणादेः श्रुतेः स्वातन्त्र्यमत्र हि ॥२०॥
नियमाद्दृष्टसाध्यस्य व्यावर्त्यस्यापि सम्भवात् ।
श्रवणादेर्नियमनं सर्वथैवोपपद्यते ॥ २१ ॥
श्रवणं शक्तितात्पर्यावधारणमिहेष्यते ।

---

॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ फलितमुपसंहरति—" नियमेति " ॥२१॥

॥ विवरणोक्तश्रवणनियमोपपत्तिः ॥

ननु किमिदं श्रवणं नाम शक्ति तात्पर्यावधारणं वा, तद्विशिष्टशब्दावधारणं वा, तात्पर्यप्रमापकलिङ्गावधारणं वा, आगमाचार्योपदेशजन्यज्ञानं वा. नाद्यः अवाच्ये ब्रह्मणि शक्त्यसम्भवात् तात्पर्यमपि न तावदापातधीजन्यस्य विचारनिवर्त्यस्य संशयस्य धर्मिणि तस्य प्रागेव निश्चितत्वेन तन्निश्चयार्थं तात्पर्यनिश्चयसाधनस्य विचारस्य वैयर्थ्यात् अन्यथा विचारानन्तरमपि संशयादिप्रसङ्गात् नापि संशयधर्मिगतप्रकारविशेषे तद्विशिष्टे तदुपलक्षिते वा, अखण्डार्थताहानेः अवधारणस्य ज्ञानत्वेन विधेयत्वस्य त्वयाऽनङ्गीकाराच्च अत एव न द्वितीयादि, नापि गुरुमुखाद्वेदान्तानां ब्रह्मणि संयोजनं श्रवणं तस्याऽऽद्यपक्षानतिरेकात् नापि वाक्यविशेषप्रयोगरूपवादकथा श्रवणं तत्र श्रवणपदाप्रयोगात् अत एव मनननिदिध्यासनयोरपि न विधिस्तयोरपि ज्ञानानतिरेकादिति चेन्मैवमाद्यपक्षस्यैव क्षोदसहत्वादित्याह—" श्रवणमिति " । न च तत्र शक्त्यसम्भवो दोषः शुद्धे शक्त्यसम्भवेऽपि विशिष्टशक्तेस्तद्बोधोपयोगिन्या अवधारणीयाया. स-

DR.RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

शुद्धे यद्यपि तत्त्वैक्ये शक्त्यसम्भव आत्मनि ॥२२॥
विशिष्टशक्तेस्तद्बोधोपयोगिन्यास्तु सम्भवात् ।
अवधारणयोग्यायाः नैवातः शक्त्यसम्भवः ॥ २३ ॥
तात्पर्यस्यापि सन्देहधर्मिणो निश्चितत्वतः ।
तत्रासम्भवसत्त्वेऽपि विचारो न निरर्थकः ॥ २४ ॥
निर्विशेषेपि सन्देहसम्भवेन विचारणा ।
साफल्यं प्राप्नुयात्तत्वज्ञानसिद्ध्युपकारिका ॥ २५ ॥
नचावधारणस्यापि ज्ञानत्वं तर्करूपतः ।
यतो ज्ञानविजातीयचेतोवृत्त्यन्तरं हि तत् ॥ २६ ॥
श्रवणादिक्रिया तावत्कर्तव्येह प्रयत्नतः ।
श्रवणादौ क्रियाशब्दो वार्त्तिके दृश्यते ततः ॥ २७ ॥
तथैव मननध्याने विधेयत्वेन दृश्यतां ।
मनोव्यापाररूपाणां त्रयाणां स्याद्विधेयता ॥ २८ ॥

---

म्भवात् तात्पर्यस्यापि संशयधर्मिणो निश्चितत्वेन तत्रासम्भवेपि संशयकोट्युपलक्षिते निर्विशेषे सम्भवेन विचारावैयर्थ्यात् न चाखण्डार्थताहानिः स्वरूपमात्रोपलक्षकतया ऽखण्डार्थताया उपपादितत्वात् न चावधारणस्य ज्ञानरूपतया अविधेयता तस्य तर्कत्वेन ज्ञानविजातीयचेतोवृत्त्यन्तरत्वात्सुरेश्वराचार्यैः श्रवणादिक्रियेत्यत्र श्रवणादौ क्रियापदप्रयोगात् एवमेव मनननिदिध्यासनयोरपि विधेयत्वमुन्नेयं तस्माच्छ्रवणादेरधीरूपतया मनोव्यापारत्वेन विधेयत्वोपपत्तिः. यच्चानुवादित्वादिवर्णनं वाचस्पत्ये तत्प्रस्थान्तरत्वान्न विधित्वोक्तिविरोधीति सप्तानां योजना ॥२२॥२३॥२४॥२५॥२६॥२७॥२८॥

॥ श्रवणादेर्विधेयत्वोपपत्तिः ॥

DR.RUPNATH JI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

जिज्ञासासूत्रमूलं स्याद्वेदान्तश्रवणे.विधिः ।
अधीतवेदपुंसोऽस्ति ज्ञानमापाततो यतः ॥ २९ ॥
नात्रान्योन्याश्रयापातोप्यधिकारिविशेषणे ।
समानविषयत्वेऽपि तयोः स्यान्मूलमूलिता ॥ ३० ॥
श्रवणाक्षिप्ततात्पर्यग्राहकं लिङ्गमागमे ।
तदादाय तयोस्तुल्यविषयत्वस्य सम्भवः ॥ ३१ ॥

---

एवं विचारविधायकश्रवणविधिरेव जिज्ञासासूत्रमूलमित्याह— “ जिज्ञासेति ” सार्द्धेन । ननु विचारविधौ श्रवणसाध्यपरोक्षज्ञानाधीनाया अपरोक्षज्ञानकामनाया अधिकारिविशेषणत्वाङ्गीकारेणान्योन्याश्रयापात इत्याशङ्क्याधीतवेदस्य विदितपदपदार्थसङ्गतिकस्यापाततो जायमानपरोक्षज्ञानाधीनापरोक्षज्ञानकामनाया अधिकारिविशेषणत्वेनोक्तान्योन्याश्रयानवतारादित्यभिप्रेत्याह— “ अधीतेति ” ।ननु जिज्ञासासूत्रोक्तो विचारस्तत्त्वनिर्णायकन्यायानुसन्धानरूपः अन्यथा न्यायग्रथनात्मकशास्त्रारम्भासिद्धये तत्कर्तव्यतोक्त्ययुक्तेः इतरस्य वेदेतिकर्त्तव्यतानुपपत्तेश्च श्रवणं च नोक्तन्यायानुसन्धानरूपं मननाभेदप्रसङ्गात् अतो न श्रवणविधिजिज्ञासासूत्रयोर्मूलमूलिभाव इत्याशङ्क्याह—“ समानेति ” । जिज्ञासासूत्रस्य श्रवणविधिसमानविषयतया मूलमूलिभावाभावेऽपि श्रवणविधिविषयशक्तितात्पर्यावधारणात्मकश्रवणाक्षिप्तोपक्रमोपसंहारादितात्पर्यलिङ्गविचारमादाय समानविषयत्वसम्भवेन तदुपपत्तेरिति सार्द्धयोजना ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥

RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

मननं तु श्रुतार्थस्य युक्तिभिश्चिन्तनं मतं।
अङ्गित्वं श्रवणस्यैव तात्पर्यस्यावधारणात् ॥ ३२ ॥
समन्वयाविरोधोक्तयुक्तिचिन्तनमेव वा ।
श्रवणं मननं चैव क्रमेणास्तु श्रुतीप्सितं ॥ ३३ ॥
समन्वयविचारस्याभ्यर्हितत्वात्तदिष्यते ।
विचारविधिमूलत्वं मननस्य तु नैव तत् ॥ ३४ ॥
तदेवं श्रवणं लिङ्गं विचाराधीनमात्मनाम ।
जिज्ञासासूत्रमूलत्वात्स्यात्तात्पर्यावधारणं ॥ ३५ ॥
भामत्यां तु विचारैकाक्षेपकत्वं विधेरपि ।

---

मननाभेदोपि नास्तीत्याह—" मननमिति " । अर्थाक्षिप्तविचारस्येतिकर्त्तव्यतात्वेपि तात्पर्यावधारणरूपे श्रवणे उक्तस्याङ्गित्वस्यानपायादित्यर्थः ॥ ३२ ॥ यद्वा समन्वयाध्यायोक्ततात्पर्यनिश्चायकोपक्रमादियुक्त्यनुसन्धानं श्रवणं द्वितीयाध्यायोक्तार्थासत्त्वशङ्कानिवर्त्तकयुक्त्यनुसन्धानं मननमित्याह—" समन्वयेति " ॥ ३३ ॥ ननु जिज्ञासासूत्रस्यांशे मननविधिमूलत्वापात इत्याशङ्क्य समन्वयोक्तविचारस्याभ्यर्हिततया श्रवणविधिमूलत्वस्यैव वक्तव्यत्वोक्तेर्नेतरस्येत्याह—" समन्वयेति " ॥ ३४ ॥ फलितमुपसंहरति—" तदेवमिति " ॥ ३५ ॥

॥ जिज्ञासासूत्रस्य श्रवणविधिमात्रमूलत्वोपपादनम् ॥

वाचस्पतिमतमाह—"भामत्यामिति" । अध्ययनविधेरेवार्थावगमपर्यन्तत्वात् काण्डद्वयविचाराक्षेपकत्वं श्रवणादिषु च न को-

DR. RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

अर्थावगमपर्यन्ततया स्वाध्याय इष्यते ॥ ३६ ॥
काण्डद्वये ततः कोपि न विधिः श्रवणादिषु ।
अन्वयव्यतिरेकाभ्यां तेषां ज्ञानेऽस्ति हेतुता ॥ ३७ ॥
अर्थज्ञानार्थकत्वेप्यध्ययने फलतो जगुः ।
नित्यत्त्वं के चिदन्ये तु दृष्टादृष्टफलं जगुः ॥ ३८ ॥
आपातदर्शनं तत्र श्रवणेन विनेष्यते ।

---

ऽपिविधिः तेषामन्वयव्यतिरेकसिद्धसाक्षात्कारसाधनताकत्वादिति द्वयोर्योजना ॥३६ ॥ ३७ ॥

नन्वध्ययनाभावे प्रत्यवायश्रवणादध्ययनस्य नित्यताया अभ्युपगमात् कथं तस्यार्थावगमपर्यन्तत्वमित्याशङ्क्याह–"अर्थेत्यादिना" । अर्थज्ञानार्थत्वेप्यध्ययनविधेरवैयर्थ्यायाधीतेनैव वेदेन कर्तव्यतां ज्ञात्वा अनुष्ठितं कर्म फलवालमित्यादिनियमाश्रयणादसत्यध्ययने यथोक्तनित्यादिकर्मानुष्ठानासिद्ध्या प्रत्यवायश्रवणोपपत्तिः तथाचार्थज्ञानार्थस्याप्यध्ययनस्य फलतो नित्यत्वमिति केचित् । अपरे तु अनध्ययने सन्ध्यानुपासनेनेव साक्षात्प्रत्यवायस्मरणेनाध्ययनस्यादृष्टार्थत्वेऽपि अर्थज्ञानस्यापि दृष्टत्वादपेक्षितत्वाच्च तादर्थ्यमपीत्युभयार्थता पशुपुरोडाशादिवदित्याहुरित्यर्थः ॥ ३८ ॥

॥ वाचस्पत्युक्तस्वाध्यायविधिविचाराक्षेपकत्वोपपत्ति ॥

ननु शब्दजज्ञानस्वरूपमेव श्रवणं विधेयमिति नेत्याह—" आपातदर्शनमिति " । आपातदर्शनस्य तद्विना जायमानत्वात् न. न वेदान्तविचारत्वोपहिते ब्रह्मज्ञाने हेतुताया अप्राप्तेरपूर्वविधितेति वाच्यं । सामान्यतः प्राप्तसाध्यसाधनभावमनादृत्य विशेषोपाधिना अप्राप्तसाधनप्राप्तये अपूर्वविध्यङ्गीकारे ज्योतिष्टोमादिवाक्य-

DR. RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

विशेषात्तदनादृत्याप्राप्तसाधनसिद्धये ॥ ३९ ॥
विधिः स्यान्निर्गुणैकात्म्यज्ञाने नास्ति कथं चन ।
सूक्ष्मार्थगोचरं ध्यानं तत्साक्षात्कारकारणं ॥ ४० ॥
दृष्टं तत्राप्यपूर्वत्वाभावान्न विधिरिष्यते ।
तत्र स श्रूयमाणोऽपि कुण्ठीभावं भजेद्विधिः ॥ ४१ ॥
कृतिसाध्यत्वरूपस्य स्वर्गादाविव तद्विधेः ।
प्रयोजकस्य तज्ज्ञानेऽभावादेव न तद्विधिः ॥ ४२ ॥

---

विचारेपि तेन रूपेण तद्वाक्यार्थज्ञानं प्रत्यप्राप्तसाधनतासिद्धये अपूर्वविध्यन्तरकल्पनापत्तेरतः श्रवणादीनां निर्गुणविषयतया सगुण विषयत्वाभावान्नापूर्वविधित्वं सूक्ष्मार्थगोचरनिदिध्यासनस्य तादृशार्थविषयकसाक्षात्कारहेतुताया दृष्टत्वेनापूर्वत्वाभावाच्च न तत्रापि विधि स्तत्र श्रूयमाणलिङादेः शिलातलप्रयुक्तक्षुरतैक्ष्ण्यवत् कुण्ठीभावादिति त्रयाणां तात्पर्यार्थः ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥

नन्वाज्यावेक्षणवत् 'तस्मात्पश्येन नित्यश' इत्यादिना ज्ञानस्यापि विधानं दृष्टमिति तत्राह—“ कृतीति ” । तत्र तद्धेत्विन्द्रियसंप्रयोगाधेयत्वान्न ज्ञाने विधिः । ननु साक्षात्कृतिसाध्यत्वस्येन्द्रियसम्प्रयोगेऽप्यभावादिन्द्रियनिष्ठक्रियाद्वारा परम्परया कृतिसाध्यत्वस्य ज्ञानेऽपि सम्भवादनिच्छतो दुर्गन्धादिज्ञानवत् अनिष्टसम्प्रयोगस्यापि दर्शनाच्च ज्ञानसाम्यं सम्प्रयोगस्येत्याशङ्क्य स्वर्गादाविव स्वेच्छाधीनकृतिसाध्यत्वस्य विधेयताप्रयोजकस्य ज्ञानेऽभावात्सम्प्रयोगस्य तु तद्वैपरीत्येन विशेषान्न ज्ञानसाम्यमित्याह—“ कृतिसाध्यत्वेति ” । तथा चानभिमतविषयवैमुख्यस्यैव बुभुत्साप्रयत्नसाध्यतया ज्ञानं प्रति तयोरजनकत्वमिति भावः ॥ ४२ ॥ एतदेव

DR.RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

न बुभुत्साप्रयत्नाभ्यां ज्ञानं साध्यतया मतं ।
ताभ्यां विषयवैमुख्यमेव साध्यतया मतं ॥ ४३ ॥
ज्ञानसाधनमात्रे तदन्वयादेरुपक्षयात् ।
न ज्ञाने कृतिसाध्यत्वं वक्तुं शक्यं कथं चन ॥ ४४ ॥
ज्ञानं वस्तुप्रमायत्तं पुन्तन्त्रं ज्ञानसाधनम् ।
ज्ञाने दृष्टो विधिर्ज्ञानसाधने स नियम्यते ॥ ४५ ॥
तदेवं श्रवणस्याऽपि ज्ञानत्वेन विधेयता ।

---

विशदयति—" न बुभुत्सेति " ॥ ४३ ॥ ननु यथा दुर्गन्धादिज्ञानस्येच्छाविषयत्वाभावेऽपि ब्रह्मज्ञानस्य तद्विषयत्वं यथा वा पर्वतादिज्ञानस्य नयनोन्मीलने सति प्रयत्नान्तरनिरपेक्षत्वेऽपि ध्रुवारुन्धत्यादिज्ञाने तत्सापेक्षत्व तथाऽतिसूक्ष्मब्रह्मज्ञानस्येच्छाप्रयत्नसाध्यत्वसम्भवोऽस्त्वित्याशङ्क्याह—" ज्ञानेति " । प्रामाणिकदृष्टविजातीयकोविद्धर्मदर्शनेनाप्रामाणिकवैजात्यस्य कल्पयितुमशक्यत्वात् प्रयत्नान्वयव्यतिरेकयोश्च ज्ञानसाधनजनने उपक्षीणतया ध्रुवारुन्धत्यादिनिदर्शनस्याऽन्यथासिद्धतया तन्न्यायेन ब्रह्मज्ञाने कृतिसाध्यत्वस्य वक्तुमशक्यत्वान्न ज्ञाने तथात्वमित्यर्थ. ॥ ४४ ॥

ननुशास्त्रार्थज्ञानस्य नियमेन पुन्तन्त्रत्वदर्शनाद्ब्रह्मणश्च शास्त्रार्थत्वात्तज्ज्ञानस्य पुंतन्त्रत्वं स्यादित्याशङ्क्य तत्रापि ज्ञानसाधनस्यैव पुंतन्त्रत्वान्नैवमित्याह— " ज्ञानमिति " ॥ ४५ ॥ फलितमुप-

RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

तस्माज्ज्ञानविजातीयं श्रवणं ज्ञानसाधनम् ॥ ४६ ॥
अपरोक्षधियो हेताविति कर्तव्यतात्मकम् ।
विचाररूपं तत्रैव विधिर्निर्दोष इष्यते ॥ ४७ ॥
तदङ्गत्वेन मननध्याने तत्वावबोधने ।
विधीयेते ततस्तत्वसाक्षात्कारफलावधी ॥ ४८ ॥
प्रमाणमिह तद्वास्य विजज्ञौ तमसः परम् ।
पारं दर्शयतीत्यादिः शब्दात्साक्षात्कृतौ श्रुतिः ॥ ४९ ॥
सफलं तत्त्वविज्ञानमुपदेशेन सिद्ध्यति ।
इत्युक्तं श्रुतिवाक्येऽस्मिंस्तथाऽन्यत्रापि तच्छ्रुतम् ॥ ५० ॥
वाक्यं वेदान्तविज्ञानसुनिश्चितार्था इति श्रुतौ ।
सुशब्देनापरोक्षोक्तिः विशब्दाद्दार्ढ्यमीरितम् ॥ ५१ ॥
शब्दादेवापरोक्षत्वे सिद्धे सति न बाधकम् ।
उपदेशातिरिक्तस्य न हेतुत्वं श्रुतौ श्रुतम् ॥ ५२ ॥

---

संहरति—“ तदेवमिति ” त्रिभिः ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥

॥ ज्ञानस्य पुरुषतन्त्रताभङ्गः ॥

ननु कथमपरोक्षज्ञानजनकत्वं शब्दस्य मानाभावादिति तत्राह—“प्रमाणमिति”।‘तद्वास्य विजज्ञौ तमसः पारं दर्शयती’त्यादे ‘वेदान्तविज्ञानसुनिश्चितार्था’इत्यादेश्च मानत्वात् पूर्ववाक्ये फलजनकापरोक्षज्ञानस्योपदेशमात्रसाध्यत्वोक्तं द्वितीयश्रुतौ शाब्दज्ञानस्य त्रि[illegible] विशेषविषयत्वस्य लाभात् सुपदेनापरोक्षत्वोक्तेः न च विजज्ञावित्यादे परोक्षज्ञानेनापि चरितार्थता ‘तमसः पारं दर्शयती’त्युत्तरवाक्यस्वरसेनापरोक्षज्ञानपरत्वसिद्धेः न च ग्राममार्गोपदेष्टरि ग्रामं दर्शयतीतिवत्परम्परया प्रयोजकतयोपचारः साक्षात्साधनत्वे बाधकाभावेन तस्याद्वान्याय्यत्वात् उपदेशातिरिक्तकारणस्य नारदसनत्कुमाराख्यायिकायामप्रतीतेश्चेति चतुर्णां समुदितोर्थः ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥

DR. RUPAK NATH
www.astrology-tantra.com

मनसैवानुद्रष्टव्यमित्यैकाग्र्यपरं धियः ।
साक्षात्कारैकहेतुत्वं सिद्धं शब्दस्य वेदतः ॥ ५३ ॥
तत्वमस्यादिगीर्जन्यज्ञानवृत्त्यपरोक्षता ।
अपरोक्षगतात्यन्ताभावस्याप्रतियोगिनी ॥ ५४ ॥
ज्ञानत्ववदितिप्रोक्तं मानमत्रानुमानकं ।
तत्वमस्यादिवाक्यस्यापरोक्षज्ञानहेतुता ॥ ५५ ॥
न स्याच्चेदपरोक्षस्य निवृत्तिर्न भ्रमस्य च ।
न प्रमाकरणत्वेन मनः क्लृप्तं हि कुत्र चित् ॥५६॥
दशमस्त्वमसीत्यादौ शब्दाद्दृष्टाऽपरोक्षधीः ।

---

ननु तर्हि 'मनसैवानुद्रष्टव्य'मित्यादिश्रुतिविरोध इति तत्राह—"मनसेति" ॥ ५३ ॥ एवमनुमानमप्यत्रप्रमाणमित्याह—"तत्त्वमिति"। अपरोक्षतां तत्वमस्यादिवाक्यजन्यज्ञानवृत्ति अपरोक्षज्ञाननिष्ठात्यन्ताभावाप्रतियोगित्वात् ज्ञानत्ववत् न च कर्मकाण्डजन्यवृत्तिरेवमपि साध्येतेति वाच्यम् विपक्षबाधकसत्त्वासत्त्वाभ्यां विशेषात् तथा हि तत्वमस्यादिवाक्यस्यापरोक्षज्ञानाजनकत्वे अपरोक्षभ्रमनिवृत्तिर्न स्यात् न च मनसैवापरोक्षज्ञानं मनसः कुत्राप्यसाधारण्येन प्रमाकरणत्वाभावात् आत्मनः स्वप्रकाशत्वात् सुखादीनां साक्षिवेद्यत्वात् मनसः कुत्रापि न प्रमाकरणत्वमिति त्रयाणां तात्पर्यार्थः ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥

ननु शब्दे अपरोक्षज्ञानजनकत्ववदन्यत्राक्लृप्तमेव मनसि तत्कल्पनीयमित्याशङ्क्यैवं हि सर्वांशस्यैव मनसि कल्प्यत्वेन विशेषात् न च विमतः शब्दो नापरोक्षधीहेतुः शब्दत्वादिति प्रतिसाधनं दशमस्त्वमसीत्यादावेव व्यभिचारादित्यभिप्रेत्य समाधत्ते—"दशम"

DR. RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

दशमोऽस्मीति विज्ञानं स्यादन्धस्य तमस्यपि ॥५७॥
यं शाब्दं बोधमादाय यस्य बोद्धृत्वमीक्ष्यते ।
तत्साक्षात्त्वमभिन्नार्थावगाहित्वनिमित्तकं ॥ ५८ ॥
बोद्धभिन्नार्थकाच्छब्दाद्भिन्नत्वे सति तन्त्रता ।
प्रत्यक्षैकान्तर्भावस्याध्यक्षधीकरणत्वगा ॥ ५९ ॥
तन्त्वौपनिषदश्रुत्या प्रमाणं तद्धितश्रुतिः ।

---

इति । ननु तत्रापीन्द्रियमेव करणं शब्दस्तु तत्सहकारीत्याशङ्क्याह— “ दशमोऽस्मीति ” । कश्चिद्बहुलतमे तमसि लोचनहीनस्यापि तद्वाक्याद्परोक्षभ्रमनिवर्तकस्य दशमोऽस्मीत्यपरोक्षज्ञानस्य दर्शनात् यत्रापीन्द्रियसद्भावस्तत्रापि तदप्रयोजकमेवेति तात्पर्यम् ॥ ५७ ॥ नन्वेवमपि शब्दस्यापरोक्षज्ञानजनकत्वं किं स्वाभाविकमुतापरोक्षविषयनिमित्तकं नाद्योऽतिप्रसङ्गात् न द्वितीयः जीवाः परमात्मनो न भिद्यन्ते आत्मत्वादित्यादिना जायमानानुमितेः श्रवणात् प्रागापाततो वेदान्तजन्यायाः भाषाप्रबन्धजन्याया अनधीतवेदान्तजन्यायाश्च प्रतीतेरापरोक्ष्यापातात् श्रवणनियमादेरनियमादित्याशङ्क्य यं शाब्दं बोधमादाय यस्य बोद्धृत्वं तत्साक्षात्त्वं तदभिन्नार्थावगाहित्वनिमित्तकमित्युक्तदोषानवकाशादित्यभिप्रेत्याह—“ यमिति ” ॥ ५८ ॥ नन्वेवं प्रत्यक्षान्तर्भावः शब्दस्य स्यादिति तत्राह— “ बोद्धुरिति ” । बोद्धुभिन्नार्थकशब्दातिरिक्तत्वे सति प्रत्यक्षप्रमाकरणत्वस्य प्रत्यक्षान्तर्भावतन्त्रत्वादिति योजना ॥ ५९ ॥

ननु ‘ मनसैवानुद्रष्टव्यमित्यादेरिव मन करणताप्रतिपादकस्य प्रकृते अभावादनौपदेशिकं शब्दस्य साक्षात्कारकरणत्वमित्याशङ्क्याह—“ तमिति ” । ‘ तन्त्वौपनिषदं पुरुषं पृच्छामी’त्यादौ

DR. RUPAK NATH
www.astrology-tantra.com

भवेत्तदन्यासाध्यत्वे सति तत्साध्यभावतः ॥ ६० ॥
यन्मनसा न मनुते इति श्रुत्या निषिध्यते ।
मनसः करणत्वं तच्छ्रुतिरन्यपरा ततः ॥ ६१ ॥
यतो वाचो निवर्त्तन्ते इति शक्त्या न बोध्यते ।
शब्देन ब्रह्म तन्त्वौपनिषदश्रुतिमानतः ॥ ६२ ॥
तस्मात्तत्वमसीत्यस्यापरोक्षज्ञानहेतुता ।
सिद्धा युक्त्यन्वितश्रुत्या शब्दस्य करणत्वतः ॥ ६३ ॥
अविद्यादिनिवृत्त्यात्ममोक्षहेतुरखण्डधीः ।
तत्सिद्ध्यै मननाद्यङ्गसंयुतं श्रवणं श्रुतेः ॥ ६४ ॥

---

तत्र साधुरिति तदन्यासाध्यत्वे सति तत्साध्यत्वरूपसाध्वर्थविहिततद्धितश्रुत्या एव मानत्वादित्यर्थः ॥ ६० ॥ ननु मनसः करणत्वेऽप्यौपनिषदत्वस्य निदिध्यासनापेक्षिततया ऽन्यथासिद्धिरिति तत्राह— "यन्मनसेति" ॥ ६१ ॥ ननु 'यतो वाचो निवर्तन्त' इति शब्दस्यापि करणत्वानुपपत्तिरिति तत्राह—"यत इति"। औपनिषदत्वश्रुत्यनुसारेण तस्याः शक्त्या अबोधकत्वपरत्वादित्यर्थः ॥ ६२ ॥ तस्मात्तत्त्वमस्यादिवाक्यस्यापरोक्षज्ञानजनकत्वादविद्यानिवृत्त्यात्मकमोक्षसाधनब्रह्मसाक्षात्काराय मननाद्यङ्गकं श्रवणमात्रं नियमविधिविषय इति सिद्धमित्याह— "तस्मादिति"

॥ शब्दस्यापरोक्षज्ञानजनकत्वोपपत्तिः ॥

॥ ६३ ॥ फलितमुपसंहरति—"अविद्येति" सार्द्धेन ॥ ६४ ॥

DR. RUPAK NATH (DR. RUPNATHJI)
www.astrology-tantra.com

अङ्गि स्यात्तत्रनिर्णीतो नियमो विधिरादरात् ।
तत्त्वमस्यादिजज्ञानमविद्याध्वस्तिकारणम् ।
जायते यत्कृपालेशात्तं नमामि रमापतिम् ॥ ६५ ॥
इतिसिद्धान्तसारे श्रीसदानन्दविदा कृते ।
श्रवणादिविचारोऽयं तृतीयः पूर्णतां गतः ॥ ६६ ॥

अद्वैतसिद्धिसिद्धान्तसारङ्ग्रहे तृतीयः परिच्छेदः ।

---

प्रकरणान्ते मङ्गलमाचरति—" तत्त्वमिति " ॥ ६५ ॥ ६६ ॥

इतिश्रीमन्मुकुन्दपदारविन्दमकरन्दरसाभिलाषिश्रीसदानन्दविद्वत्कृते अद्वैतसिद्धिसिद्धान्तसारसङ्ग्रहे श्रवणादिविचाराख्यानपरिच्छेदस्तृतीयः पूर्णतामगमत् ॥ ३ ॥

RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

॥ श्रीः ॥

# सव्याख्याद्वैतसिद्धिसिद्धान्तसारसङ्ग्रहे

## चतुर्थः परिच्छेदः प्रारभ्यते ।

यमाराध्यपरं तत्त्वमविद्याबन्धतो जनः ।
अनायासेन मुक्तः स्यात्तं नमामि रमापतिं ॥ १ ॥
वाक्यजा चरमा वृत्तिस्तया वृत्त्योपलक्षितः ।

---

यं चिरानन्दमद्वैतं स्वात्मन्येव विपश्चितः ।
विनिश्चित्य विमुक्ताः स्युस्तं मुकुन्दमहं भजे ॥ १ ॥
अविद्याध्वस्तिरानन्दरूपा मुक्तिः स्वयं सती ।
लभ्यते यत्कृपालेशात्तं हरिं सर्वदा श्रये ॥ २ ॥

प्रमेयमर्थतो वदन्मङ्गलमाचरति—“ यमिति ” ॥ १ ॥ ननु मुक्तिस्तावदविद्यानिवृत्तिर्न सम्भवति तथाहि सा किमात्मरूपा भिन्ना वा नाद्यः असाध्यत्वापतेः द्वितीयेऽपि किं सती मिथ्या वा आद्ये अद्वैतहानिः द्वितीयेऽविद्यातत्कार्यान्यतरत्वापत्तिरित्याशङ्क्याह-

DR.RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

आत्मैवाज्ञानहानिः स्याद्विकल्पस्तत्र नेष्यते ॥ २ ॥
तत्रोपलक्षणस्यैव साध्यत्वेनास्ति साध्यता ।
नचोपलक्षणध्वस्त्या ध्वस्तिर्मुक्तेरपीष्यते ॥ ३ ॥
पाके निवृत्ते नो दृष्टा निवृत्तिः पाचकस्य वा ।
तदुक्तं शास्त्रसिद्धान्तरहस्यतत्त्ववेदिभिः ॥ ४ ॥
निवृत्तिरात्मा मोहस्य ज्ञातत्त्वेनोपलक्षितः ।
उपलक्षणनाशेपि स्यान्मुक्तिः पाचकादिवत् ॥ ५ ॥
ज्ञानात्पूर्वमसिद्धस्याप्युपलक्षणता न हि ।
पाकसम्बन्धतः पूर्वं पाचकोऽस्तीति नोच्यते ॥ ६ ॥
उपलक्ष्यस्वरूपस्यासाध्यत्वेऽप्युपलक्षणे ।

---

" वाक्यजेति " चतुर्भि. ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥

ननु वस्तुपलक्षितस्य पश्चादिव पूर्वमपि सत्वेन मोहकालेपि तद्धान्यापत्तिरिति तत्राह—" ज्ञानादिति " ॥ ६ ॥ ननु यदि पाककर्तृत्वमेव पाचकत्वं तदा अपचति तत्प्रयोगो भूतपूर्वन्यायेनौपचारिक. यदि तु पाककर्तृतावच्छेदकावच्छिन्नत्वं तत्कर्तृत्वात्यन्ताभावानधिकरणत्वं वा तद्द्वयमपि पश्चादस्ति नचैवं मुक्तौ आत्मातिरिक्तं योग्यत्वादिकमस्ति चिन्मात्रं तु प्रागप्यस्तीत्यसाध्यतापत्तिः पाकोपलक्षितत्ववद्वृत्त्युपलक्षितत्वस्याधिकत्वे सविशेषतापत्तिरित्याशङ्क्याह—" उपलक्ष्येति " । उपलक्ष्यस्वरूपस्य चिन्मात्रस्यासाध्यत्वेपि चरमवृत्तिरूपोपलक्षणगतसाध्यत्वेनोपलक्षितसा-

www.astrology-tantra.com
RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )

साध्यत्वेनैव साध्यत्वमुपलक्षितवस्तुनः ॥ ७ ॥
यद्वाऽविद्यानिवृत्तिः स्याद् वृतिरेतद्विरोधिनी ।
यावत्कार्यजनेर्वैरिकार्यं ध्वंस इतीष्यते ॥ ८ ॥
पाश्चात्यवृत्तिपर्यन्तविरोध्यात्मकमेव यत् ।
कार्यं तद्रूपभावेऽपि ध्वंसस्याधाररूपता ॥ ९ ॥
नेति नेतीति वेदान्तस्वारस्यादात्मनः पृथक् ।

---

ध्यत्वोपपत्तेः घटाकाशे उत्पत्तिवदित्यर्थः ॥ ७ ॥ " यद्वेति " । अविद्यानिवृत्तिस्तद्विरोधिवृत्तिरेव यावत्कार्योत्पत्तिविरोधिकार्यमेव ध्वंस इत्यङ्गीकारादित्यर्थः ॥ ८ ॥ ननु वृत्तौ नष्टायां विरोधिनः कार्यान्तरस्यानुदयात्तदापि ध्वंसत्वेन स न ध्वंस इत्याशङ्क्याह— " पाश्चात्येति " । यावद्विभागं तस्य ध्वंसरूपत्वेऽपि विभागध्वंसस्याधिकरणरूपतावच्चरमवृत्तिपर्यन्तं विरोधिकार्यरूपत्वेपि ध्वंसस्य चरमवृत्तिध्वंसस्याधिकरणरूपतैवेत्यर्थः ॥ ९ ॥ नन्वियं प्रक्रिया किमन्यत्र इहैव वा आद्यः बिम्बप्रतिबिम्बैक्याज्ञाननिवृत्तिरपि ज्ञाततदैक्यरूपेति तद्व्यधीकाले सोपाधिकतद्भेदभ्रमोपादानाज्ञानानुवृत्त्ययोगात् न द्वितीयः नियामकाभावात् नचेह निवृत्तेर्ज्ञानाधिष्ठानातिरेके विश्वमिथ्यात्वश्रुतिपर्यालोचनया निवृत्तेरपि निवृत्त्यापत्तिर्नियामिका तस्या ज्ञानाद्विश्वनिवृत्तिपरत्वेन स्वतात्पर्यविषयनिवृत्तीतरमिथ्यात्वपरत्वादित्याशङ्क्य न तावदाद्ये दोषः सोपाधिकभ्रमे उपाधिविरहकालीनस्यैव तस्य तथात्वादिति प्रथमं दोषं बहिरेव निराकृत्य द्वितीयं निरस्यति—" नेतीति " । नेति नेतीति श्रुतिस्वारस्येनात्मातिरिक्तसत्यनिवृत्तावततात्पर्यात् नच जीवन्मुक्तावपि वृत्त्युपलक्षित आत्माऽस्तीति तदाऽपि मोक्षापत्तिः मुक्तिमात्रापादक-

RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

निवृत्तिस्तात्त्विकी का चिन्नास्तीत्येव विदां मतं ॥१०॥

मोक्षानुस्यूतरूपस्य सुखज्ञप्त्येकरूपिणः।
आत्मनः पुरुषार्थत्वेप्यसाध्यत्वमपीति चेत् ॥ ११ ॥

प्राप्तप्राप्तैकरूपत्वात्फलस्यानन्दभानतः।
असाध्यत्वेपि साध्यत्त्वं कण्ठस्थस्येव सद्गणेः ॥१२॥

तस्मादज्ञानहानिः स्यादात्मरूपं तदाकृतिः।

---

स्येष्टत्वात् परममुक्तं चरमसाक्षात्कारोपलक्षितात्मरूपत्वेन तदापादकाभावादिति भाव.(१) ॥ १० ॥

॥ अविद्यानिवृत्तिनिरूपणम् ॥

ननु वेदान्तश्रवणादिसाध्य. पुमर्थो वाच्यः न च स त्वन्मते वक्तुं शक्य मुक्त्यनुस्यूतसुखज्ञप्तिरूपस्यात्मनः पुरुषार्थत्वेप्यसाध्यत्वात् वृत्ते साध्यत्वेपि स्वतोऽपुमर्थत्वात् तस्मादात्मव्यतिरिक्त एव साध्य आवरणनिवृत्तरूप आनन्दप्रकाश' पुमर्थोवाच्यः तथाच कथमात्मैव निवृत्तिरितिशङ्कते—" मोक्षेति " ॥ ११ ॥ समाधत्ते " प्राप्तेति " । आनन्दभानतः आनन्दप्रकाशस्य प्राप्तप्राप्तिरूपतया फलस्य स्वरूपतोऽसाध्यत्वेपि तत्तिरोधायकाज्ञाननिवर्तकवृत्तेः साध्यत्वमात्रेण साध्यत्वोपपत्ते. कण्ठगतचामीकरादौ तथा द-

---

(१) न च चरमसाक्षात्कारनिवृत्तेरात्मत्वे ऽसाध्यत्वापत्ति अविद्यानिवृत्तरसाध्यत्वेऽप्रवृत्त्यापत्तिश्च तदभावात । न च जीवन्मुक्तिप्रयोजकवृत्त्यपेक्षया परममुक्तिप्रयोजकवृत्तावानन्दाभिव्यक्तिगतविशेषाभावे चरमक्षणेन चरमश्वासेन वोपलक्षित आत्म' मुक्तिरिति किं न स्यादिति वाच्यम् । प्रारब्धकर्मप्रयुक्तविक्षेपाविक्षेपाभ्यामभिव्यक्तिविशेषस्याङ्गीकारात् इति भाव

RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

वृत्तिर्वा नात्र दोषोपि शङ्क्यः सिद्धमिति स्फुटं ॥१३॥
व्युत्पत्त्यै मन्दबुद्धीनां पक्षाः संदर्शिता बुधैः ।
ये पञ्चमप्रकाराद्या न यते तत्समर्थने ॥ १४ ॥
स्वज्योतिषाऽप्यबाध्यत्वेऽविद्याया बाधकं मतं ।
वेदान्तजन्यपाश्चात्यवृत्त्यारुढं चिदद्वयं ॥ १५ ॥
वृत्त्युपारूढचैतन्यं वृत्तिर्वा चित्फलान्विता ।
निवर्तिकास्त्वविद्याया दोषोनास्ति मतद्वये ॥ १६ ॥

———

र्शनादित्यर्थः ॥ १२ ॥ फलितमुपसंहरति— " तस्मादिति " ॥ १३ ॥ ननु भवन्मते सन्ति पञ्चमप्रकारादयः पक्षास्तानादाय कथं न समाधीयत इत्यत आह—"व्युत्पत्त्यै(१)इति" ॥ १४ ॥ ननु किमविद्यानिवर्तकं स्वप्रकाशचैतन्यं तदाकाराऽपरोक्षवृत्तिर्वा नाद्यस्तस्येदानीमपि सत्त्वान्न द्वितीयः असत्त्वात्सत्यसिद्धेरयोगादित्याशङ्क्याविद्यानिवर्तकं चरमवृत्त्यारूढं चैतन्यमेवेत्याह—" स्वज्योतिषेति " । वृत्त्युपारुढचितो वा चित्प्रतिविम्बधारिण्या वृत्तेर्वा निवर्तकत्वमस्तु नोभयत्र दोषशङ्कावसर इत्याह—"वृत्तीति" ॥१६॥

(१) भात्मान्यत्वे दृश्यत्वस्यावस्थकत्वेन दृग्दृश्यसम्बन्धानुपपत्त्यादियुक्तिभिर्मिथ्यात्वावश्यकत्वेन न पञ्चमप्रकारत्वं सव्यव्यसरूपत्वेऽद्वैतश्रुतिविरोध नहि तस्या भावाद्वैत मुख्यार्थे मिथ्याभूतात्मान्याविनाशित्वं सरूपत्वे ऽप्यतो ऽन्यदार्तमित्यादिश्रुति विरोधं विनाशित्वं तस्या भावात्वे तु गौरव व्यर्थता च अन्त्यमनोवृत्तेर्मुक्तित्वसम्भवात् अत उक्तं व्युत्पत्त्यै इति ।

असत्या अपि धीवृत्तेः सत्योत्पादकतेष्यते ।
अभावस्य यथा भावोत्पादकत्वं भवन्मते ॥ १७ ॥

प्रातिभासिकवस्त्वेव व्यावहारिकसौख्यकृत् ।
दृष्टं तद्वदिहाप्यस्तु न हि दृष्टे ऽस्त्यसम्भवः ॥ १८॥

मायोपादानकस्यापि तत्त्वज्ञानस्य वस्तुतः ।
तन्निवर्तकता श्रौती महत्प्रामाण्यमश्नुते ॥ १९ ॥

धीवृत्तिस्थचितो मायाविनिवर्तकता यदि ।
तदा शङ्का न काऽप्यस्ति तदुक्तं ब्रह्मविद्वरैः ॥२०॥

तृणादेर्भासिकाप्येषा सूर्यदीप्तिस्तृणं दहेत् ।

---

न चासत्यायाः सत्योत्पादकत्वविरोधः अभावस्य भावजनकत्ववदसम्भवाभावादित्याह—"असत्याइति" ॥ १७ ॥ मायास्वाप्नमन्त्रादेरपि व्यावहारिककार्यकरत्वान्न तददृष्टचरमित्याह—" प्रातिभासिकेति " ॥ १८ ॥ नन्वविद्योपादानकस्य तत्त्वज्ञानस्य कथं स्वोपादानाज्ञाननिवर्तकत्वमदृष्टचरं कल्प्यते इत्याशङ्क्यान्यत्रादृष्टस्यापि प्रमाणादत्रैव कल्पनादित्याह—" मायेति " । 'मायां तु प्रकृतिं विद्या'दित्यवगतमायोपादानकस्याप्यात्मतत्त्वसाक्षात्कारस्य 'तरति शोकमात्मवि'"त्सोविद्याग्रन्थिं विकिरतीह सोम्ये' त्यादिना तन्निवर्तकत्वस्य प्रमितत्वान्नादृष्टचरत्वमित्यर्थः ॥ १९ ॥ वृत्तिप्रतिबिम्बितचितो निवर्त्तकत्वे तु नोक्तवचस. शङ्कापीत्याह—" धीवृत्तीति " । तत्र सम्मतिमाह—" तदुक्तमिति "॥२०॥

RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

सूर्यकान्तमुपारुह्य तं न्यायं चिति योजयेत् ॥ २१ ॥
जडत्वाच्छुद्धधीवृत्तेर्भासकत्वाच्चितस्तथा ।
मायाऽनिवर्तकत्वेपि विशिष्टेऽतोस्य सम्भवः ॥ २२ ॥
शुद्धस्याऽविषयत्वेऽप्युपहितो विषयो भवेत् ।
उपाधेर्विषयत्वस्याभावान्न भ्रमता धियः ॥ २३ ॥
अन्त्यज्ञानस्य नाशोऽपि स्वोपादानाध्वनाशतः ।
पटनाशो यथा तन्तुनाशान्नान्यदपेक्षते ॥ २४ ॥

---

तद्वचनं दर्शयति—"तृणादेरिति" ॥ २१ ॥ नन्वपरोक्षवृत्तौ सत्यां चिद्प्रतिबिम्बनिबन्धनवृत्तिविलम्बादर्शनान्न विशिष्टे निवर्तकतेति अत्राह—"जडत्वादिति"। शुद्धजडस्य शुद्धचितश्च जडतया तद्भासकतया चाज्ञानानिवर्तकतया विशिष्टे निवर्तकताया आवश्यकत्वादित्यर्थः ॥ २२ ॥

ननु निवर्तकं ज्ञानमपि न शुद्धविषयकं तस्यादृश्यत्वात् नापि विशिष्टविषयकं तस्याध्यस्तत्वेन भ्रमत्वापत्तेरिति तत्राह—"शुद्धस्येति" उपहितस्य विषयत्वेऽपि उपाधेरविषयत्वेनाभ्रमत्वादित्यर्थः ॥ २३ ॥ नन्वन्त्यज्ञानस्य किं निवर्तकं स्वयमन्यद्वा नाद्यः अन्यानपेक्षप्रतियोगिनो ध्वंसजनकत्वे क्षणिकत्वापतेः दग्धदारुदहनस्यापीश्वरेच्छादिनैव नाशात्कतकरजस्तु न पङ्कं नाशयति नापि स्व विश्लेषमात्रदर्शनात् नान्त्य. शुद्धात्मनः किंचिदपि प्रत्यहेतुत्वात् तदन्यस्य च निवर्त्यत्वादित्याशङ्क्य तन्तुनाशस्य पटनाशप्रयोजकत्वदर्शनेन स्वोपादानाविद्यानाशस्यैव तन्नाशकत्वान्मैवमित्याह—"अन्त्यज्ञानस्येति" ॥ २४ ॥ वस्तुतस्तु सिद्धान्ते न निवर्तक-

DR.RUPAK NATH
www.astrology-tantra.com

वृत्तित्वान्मोहविध्वस्तेर्न निवर्तकखण्डनम् ।
तन्निवृत्तेश्चिदात्मत्वान्न तज्जनकखण्डनम् ॥ २५ ॥

---

खण्डनावकाश इत्याह—"वृत्तित्वादिति" । (१)वस्तुतस्तु अविद्यानिवृत्तेर्वृत्तिरूपतया न निवर्तकखण्डनावकाशः वृत्तिनिवृत्तेरात्मरूपतया न तज्जनकखण्डनावकाशोऽपीत्यर्थः ॥ २५ ॥

॥ अविद्यानिवर्तकनिरूपणम् ॥

---

(१) स्वेतरसर्वद्वैतविरोधिनी वृत्तिरन्त्या तदुत्तरं न किञ्चिज्जायते तस्याश्चायकालस्यैवाभावेन सुतरां न तत्र तदसुवृत्त्यापादनम् नच तस्या नाशानुत्पादे सा क्व गतेत्यादिप्रश्नावकाशः नाशोत्पादेऽपि तदसम्भवात् तथा च तस्य नाशोऽपि न जायते अयकालस्यैवालीकत्वात । नचैवमात्मैव तन्नाश अङ्गीकारो व्यर्थं इतिवाच्यम् । अन्त्यवृत्ति क्षणमात्र स्थित्वा नश्यतीति संसारदशायामात्मनि नाशत्वकल्पनया तथाऽङ्गीकारात् प्रारब्धभोगकालीनवृत्तेस्तु अविद्यादिमात्रविरोधित्व न तु सर्वद्वैतविरोधित्वमित्यप्यनुभवबलात्कल्प्यते इदमेव च प्रारब्धभोगस्य देहादिपातप्रतिबन्धकत्वमित्यादिशब्दैर्व्यवह्रियते न तु देहादिनाशे कर्म प्रतिबन्धकं कल्प्यते । नचैव चरमवृत्तिरूपो देहादिनाश पूर्वमपि जायतामित्यापत्तिरिति वाच्यम् चरमवृत्त्यव्यवहितपूर्वक्षणस्य चरमवृत्तिहेतुत्वात् । अवेद बोध्यम् चरमवृत्त सर्वद्वैतविरोधित्व न सर्वद्वैतनाशजनकत्व तज्जन्यनाशानभ्युपगमादन्यथोक्तनाशस्यापि नाश्यत्वे नाशान्तराणामपि स्वीकार्यत्वेनानवस्थापत्तेरनाश्यत्व सत्यत्वापत्तेरद्वैतश्रुतिविरोधित्वापत्तेर्नापि द्वैताधिकरणकालपूर्वत्वानधिकरणक्षणवृत्तित्व तस्यास्तत्त्वे नियामकाभावेन मानाभावादेवञ्च तत्त्वज्ञानस्य वैयर्थ्यापत्तिरेतावत्कालमनुवृत्तद्वैत क्व गतमिति पर्यनुयोगश्च स्यात् । अत्रोच्यते । एव सति कपालादिदेशावच्छेदेन दण्डादिकारणकूटात् य क्षणस्तदव्यवहितोत्तरक्षणस्य घटादिकार्यत्वे नियामकाभावाद्दण्डादेर्घटादिहेतुत्वस्वीकारो व्यर्थः स्यादेतावत्कालमसतो घटादेः कथमुत्तरक्षणे सत्त्वमिति पर्यनुयोगश्च, अथ न स व्यर्थ उत्तरक्षणत्वे घटादिसत्त्वव्याप्यत्वस्य प्रामाणिकत्वाद् तद्व्याप्यतारूपतन्नियामकतावत्त्वात्पूर्वमसतोऽपि घटादेरुत्तरक्षणे सत्त्वसम्भव इति नोक्तपर्यनुयोग इति ब्रूषे तर्हि या यद्विषयका प्रमा सा स्वसमानविषयकाज्ञानवद्द्वैताधिकरणकालपूर्वत्वानधिकरणक्षणवर्तिनीति व्याप्ते शुक्त्यादिप्रमास्थले दृष्टत्वाद्द्वैतप्रमाऽपि तथेति प्रमात्वस्यैवोक्तव्याप्यतारूपनियामकतावत्त्वात्तत्त्वज्ञानस्योक्तविरोधित्वसिद्ध्या नोक्तपर्यनुयोग । अथैवमपि मुमुक्षुप्रवृत्त्यनुपपत्तिः फलाभावाद्यथाहि न तावन्मुक्तिः फलं तस्य नित्यात्मस्वरूपत्वान्नाऽपि वेदान्तवाक्यजवृत्तिज्ञानं तस्यासुखरूपत्वेन स्वतः पुरुषार्थत्वाभावात् नापि वृत्तिविषयत्वोपहित आत्मा तस्य लोके स्वतः पुरुषार्थ-

DR. RUPAK NATH RUPNATHJI
www.astrology-tantra.com

पुमर्थत्वं सुखे साक्षात्क्रियमाणतया मतम्।
गौरवान्न स्वकीयत्त्वप्रयुक्तं मोक्षशब्दितम् ॥ २६ ॥

---

ननु त्वन्मते मुक्तौ न दुःखोच्छेदमात्रं किन्तु निरतिशयानन्दस्फुरणमपि तत्र न सुखात्मता तावत्पुमर्थं सुखीस्यामिति तत्सुखं स्यामितीच्छाया अदर्शनात् पुमर्थताया इच्छानियम्यत्वात् यथा बौद्धमतसिद्धात्मनाशादेरपि पुमर्थः स्यात् अत एव नापरकीयं सुखं पुमर्थः तथेच्छाविरहात् गौरवाच्चेत्याशङ्क्य सुखादौ पुमर्थता नापरकीयत्वप्रयुक्ता नापि स्वकीयत्वप्रयुक्ता गौरवात् किन्तु साक्षात्क्रियमाणतया सम्बन्धस्य चानित्यत्वसाधनपारतन्त्र्यादेरिवावर्जनीयसन्निधिकत्वादित्यभिप्रेत्याह—"पुमर्थत्वमिति"। तथा मुक्तसुखसाक्षात्कारस्य साक्षात्क्रियमाणत्वेनैव हि पुमर्थत्वमित्याशयः। मुक्तिस्वरूपनिर्णये विदां सम्मतिमाह—"अविद्येति"।

॥ २६ ॥ ॥ मुक्तेरानन्दरूपत्वेन पुरुषार्थत्वोपपत्तिः ॥

---

त्वेनाक्षमत्वात् वृत्तेरस्थिरत्वे नत्विषयत्वोपहितात्मनो ऽप्यस्थिरत्वादितिचेन्न। स्वाज्ञानविरोध्युपहितस्यात्मरूपस्य सुखस्यैव फलत्वात् लोकेऽपि हि सुखमात्मैव चन्दनादियोगजमनोवृत्तेस्तव व्यञ्जकमात्रत्वात् सुखमेव भूयासमित्याकारिकाया अन्ये च्छानधीनेच्छाया एव एव परम आनन्दत्वादिद्युतेश्चान्यथानुपपत्तेश्च, स्वाज्ञानविरोधित्वं च स्वाज्ञानाधिकरणकालपूर्वत्वान्यत्वविशिष्टत्वं एतावांस्तु विशेषो यच्चन्दनादियोगजमनोवृत्तेर्यत्किञ्चिदज्ञानविरोधित्वं तन्मात्रेतरसमज्ञानान्तरेणात्मसुखस्यावरणात वेदान्तजन्यवृत्तेस्त्वज्ञानसामान्यविरोधित्वं तन्मात्रेतरसमज्ञानान्तरेणानावरणात स्वाव्यवहितपूर्वक्षणे सुखावरकयत्किञ्चिदज्ञानविरोधित्वं तु द्वयोरपि तुल्यं। नचैकदैकमेवाज्ञानमावृणोतीति सिद्धान्तात् स्वाव्यवहितपूर्वक्षणे सुखावरकाज्ञानसामान्यविरोधित्वमपि द्वयोस्तुल्यमिति यत्किञ्चिदुक्तप्रायमिति वाच्यम्। चन्दनादियोगजवृत्ते पूर्णानन्दावरकसुखाज्ञानाविरोधित्वात् सात्त्विकानन्दावरकपक्षवाज्ञान प्रतेरव तस्या विरोधित्वात् नच वृत्तेरेव सुखत्वसम्भवेन नात्मा सुखरूप इति वाच्यम्। सुषुप्तौ निष्कामत्वकाले जागरे च भासमानसुखस्य वृत्तित्वे कल्पना सदाऽनन्तवृत्तिकल्पने गौरवात् एकरूपेऽपि सात्त्विकानन्दे ऽनुभूयमाने तारतम्यस्य व्यञ्जकवृत्तितारतम्यगतत्वान्नानुपपत्ति स्तथाच यत्किञ्चिदज्ञानविरोध्युपहितात्मन स्वत पुरुषार्थत्वभावसत्त्वे ऽप्यज्ञानसामान्यविरोध्युपहितात्मन, परमपुरुषार्थत्वादस्थिरत्वमकिञ्चित्कर तदुत्तर सुखानावरणादिति धेयम्।

RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

अविद्यास्तमयो मोक्षो नित्यानन्दप्रतीतितः ।
निःशेषदुःखोच्छेदाच्च पुरुषार्थः परो मतः ॥ २७ ॥
अहमर्थगतस्यैव चिदंशस्यात्मनो विभोः ।
मोक्षकालान्वयित्वेन पुमर्थो मोक्ष इष्यते ॥ २८ ॥
दुःखाभावातिरेकेपि सुखस्यात्मैकरूपता ।
सुखप्रकाशयोरेकाद्वयब्रह्मस्वरूपता ॥ २९ ॥
जाड्यदुःखात्मतारूपव्यावर्त्यभिदया तयोः ।
सुखप्रकाशयोः सिद्ध्येत्प्रयोगो युगपत्सह ॥ २९ ॥

---

ननु कस्यायं मोक्षः पुमर्थः. किमहमर्थस्य आहो चिन्मात्रस्य नाद्यः त्वन्मते अहमर्थस्य मुक्त्यनन्वयात् नान्त्य अहं मुक्तः स्यामितिवत् चिन्मात्रं मुक्तं स्यादितीच्छाया अननुभवादिति चेन्मैवमित्याह—"अहमिति" । अहमर्थगतचिदंशं मुक्तिकालान्वयिनं प्रति पुमर्थत्वस्य मोक्षे सम्भव इत्युक्तप्रायत्वादित्यर्थः ॥ २७ ॥ ननु सुखस्य दुःखाभावमात्रत्वे वैशेषिकमोक्षवदपुमर्थता अतिरेके सद्वितीयत्वमित्याशङ्क्य दुःखाभावातिरेकेप्यात्मानतिरेकान्मैवमित्याह—"दुःखाभावेति" । नन्वात्मनः सुखमात्रत्वे सुखप्रकाशाभावे नापुमर्थत्वं उभयात्मकत्वे चाखण्डार्थत्वहानिरित्यतआह—"सुखप्रकाशयोरिति" ॥ २८ ॥

नन्वर्थभेदाभावे सुखप्रकाश इति सहप्रयोगायोग इत्यत आह—"जाड्येति" । अविद्याकल्पितजडात्मकत्वरूपव्यावर्त्यभेदेन तदुपपत्तिरित्यर्थः ॥ २९ ॥ ननु दुःखाभावस्य सुखस्य च तत्त्वतो

DR. RUPAK NATH JI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

दुःखस्य कल्पितत्वेन तद्भेदः किं न कल्पितः ।
तत्तुल्ययोगक्षेमत्वादवस्तुत्वान्न मे क्षतिः ॥ ३० ॥
दुःखाभावस्य चिद्रूपानतिरेकेण वस्तुनः ।
आत्माभिन्नसुखस्फूर्त्यै वाऽस्यापि स्फुरणं भवेत् ॥ ३१ ॥
तस्माच्चित्स्वप्रकाशात्माभिन्नं सुखमखण्डितम् ।
पुमर्थोऽस्त्यहमर्थात्मचिदंशस्यैव सम्मतः ॥ ३२ ॥
तच्चापि जीवन्मुक्तानां सिद्धं स्वानुभवेन हि ।
तत्वज्ञानेन विध्वस्ताविद्यो जीवन्मुक्तिभाक् ॥ ३३ ॥
अविद्यायां विनष्टायामपि प्रारब्धकर्मणा ।
देहादिप्रतिभासोऽनुवृत्त्या स्याद्बाधितस्य च ॥ ३४ ॥
निवृत्तसर्पविभ्रान्तेर्भयकम्पानुवृत्तिवत् ।
दण्डसंयोगनाशेऽपि चक्रस्य भ्रमणं यथा ॥ ३५ ॥

---

दुःखाद्भेदे अपरिच्छिन्नेऽभेदे त्वपुमर्थतेत्याशङ्क्याह—" दुःखस्येति " ॥ ३० ॥ ननु स्वप्रकाशस्य सुखस्य स्वतः स्फुरणेऽपि दुःखाभावस्यास्फुरणादपुमर्थतेत्याशङ्क्याह—" दुःखाभावस्येति " ॥ ३१ ॥ फलितमुपसंहरति—" तस्मादिति " ॥ ३२ ॥

॥ चिन्मात्रस्य मोक्षभागित्वोपपत्तिः ॥

तत्सुखं जीवन्मुक्तानामनुभवसिद्धमित्याह—"तच्चेति"। जीवन्मुक्तं लक्षयति—"तत्त्वज्ञानेनेति" ॥ ३३ ॥ ननु तत्त्वज्ञानादविद्यानाशे सद्यः शरीरपातापत्तिरित्याशङ्क्याह—"अविद्यायामिति" । ॥ ३४ ॥ उक्तमर्थं दृष्टान्ताभ्यां द्रढयति—" निवृत्तेति " ॥ ३५ ॥

DR.RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

विनिःसारितपुष्पेपि सम्पुटे पुष्पवासना।
दृश्यते नियमो नातः क्रियाज्ञानैकसंस्कृतेः ॥ ३६ ॥
नाशः संस्कारसंव्याप्तो नाशत्वाज्ज्ञाननाशवत्।
संस्कारनाशान्यत्वे सत्येवं स्यादनुमा प्रमा ॥ ३७ ॥
संस्कारः कार्यरूपोपि निरुपादानको मतः।
ध्वंसवत्सोऽप्यविद्येव शुद्धात्माश्रित एव हि ॥ ३८ ॥
प्रविनश्यदवस्थस्य समवायिनमन्तरा।
दृष्टा स्थिति र्न तत्सिद्धौ स्यादज्ञानानुवर्त्तनम् ॥ ३९ ॥
बहुकालाल्पकालादिगणनाया न हेतुता।

---

ननु क्रियाज्ञानयोरेव संस्कारोनान्यस्येत्याशङ्क्य दृष्टान्तेन तन्नियमं व्यभिचारयति—“ विनिःसारितेति ” ॥ ३६ ॥

नाशमात्रस्य संस्कारव्याप्तत्वमनुमानेन दर्शयति— “ नाश- इति ” ॥ ३७ ॥ संस्कार. कार्योपि ध्वंस इव निरुपादानक. अविद्येव च शुद्धात्माश्रित इति नाविद्यासापेक्ष इत्याह—“ संस्कार इति ” ॥ ३८ ॥ ननु भावकार्यस्याध्यस्तस्य संस्कारदेहादितद्धेतुप्रारब्धकर्मादे स्थित्यर्थं तदुपानाज्ञानानुवृत्त्यापात इत्याशङ्क्याह— “ प्रविनश्यदिति ” ॥ ३९ ॥ ननु क्षणमात्रस्थितावपि कथं बहुक्षणस्थितिरिति तत्राह—“ बह्विति ” । सत्युपपादके लक्षणगणनाया अप्रयोजकत्वात् तत्र क्षणमात्रस्थिति ममममयस्याजनकत्वात् अत्र तु प्रतिबन्धकाभावसहकृतहेतोस्तावत्कालमभावान्न

RUPNATHJI ( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

यत्र यद्यद्यथा दृष्टं तत्तथेत्यवगम्यताम् ॥ ४० ॥
जीवन्मुक्तिदशायां स्वानन्दस्फूर्तिरभीष्टभाक् ।
तत्त्वे ज्ञातेऽनुवृत्तेस्तु बाधितस्यापि सम्भवात् ॥ ४१ ॥
द्विचन्द्रादिभ्रमे यद्वद्दोषादेवानुवर्तनम् ।
प्रतिबन्धकसत्वेन तथाऽत्राप्यनुवर्तनम् ॥ ४२ ॥
ज्ञानानिवर्त्यदोषस्य प्रारब्धाख्यस्य कर्मणः ।
अत्रापि सम्भवाज्जीवन्मुक्तिः सिद्ध्यति तादृशः ॥ ४३ ॥
यद्वाऽस्त्वविद्यालेशानुवृत्त्या देहादिकस्थितिः ।
आकारस्यैव वेदान्ते लेशशब्दार्थता मता ॥ ४४ ॥

---

तथात्वमित्यर्थः ॥ ४० ॥ आनन्दस्फूर्त्योपादानं जीवन्मुक्तिदशाया-मिष्टमेवेत्याह—" जीवन्मुक्तीति " ॥ ४१ ॥ बाधितानुवृत्तिस-म्भवं दृष्टान्तेन सम्भावयति—" द्विचन्द्रेति " । तत्वे ज्ञाते द्विचन्द्रादिवद्दोषाद्बाधितानुवृत्तिसम्भवोऽस्तीत्यर्थः ॥ ४२ ॥ ननु त-त्रैवात्र ज्ञानानिवर्त्यदोषाभावेन वैषम्यमित्याशङ्क्याह—"ज्ञानेति"। यावत्प्रतिबन्धकसत्वं ज्ञानानिवर्त्यस्य दोषस्यात्रापि सम्भवात् स-र्वज्ञानानिवर्त्यस्य तस्य कुत्राप्यसंप्रतिपत्तेः तदुक्तं 'न हि जात्यैव क-श्चिद्दोषोऽस्तीति' तात्पर्यार्थः ॥ ४३ ॥

पक्षान्तरमाह—" यद्वेति " । ननु लेशो नावयवः अज्ञानस्य निरवयवत्वाद्तएवाविद्या दग्धपटन्यायेन तावत्तिष्ठतीत्यपि निरस्तं निरवयवे तन्न्यायासम्भवादितिचेन्नाकारस्यैव लेशशब्दार्थत्वादि-त्याह—"आकारस्यैवेति" ॥ ४४ ॥ अनेकाकारता अज्ञानस्यश्रु-

DR.RUPAK NATH
www.astrology-tantra.com

इन्द्रो मायाभिरीयेत पुरुरूप इति श्रुतेः ।
अनेकाकारता बुद्धाऽविद्यायास्तत्तथेष्यते ॥ ४५ ॥

स्यादाकारिनिवृत्तावप्याकारस्यानुवर्तनम् ।
यथा व्यक्तिनिवृत्तौ स्याज्जातेरप्यनुवर्त्तनम् ॥ ४६ ॥

अनेकशक्तिकाविद्या तात्विकत्वभ्रमावहा ।
प्रपञ्चे तत्त्वबोधेन सा निवृत्ता यदा भवेत् ॥ ४७ ॥

अर्थक्रियासमर्थित्वसम्पादनकरीह या ।
प्रारब्धसमकालेन तत्वज्ञानेन नाशिता ॥ ४८ ॥

अपरोक्षभ्रमाभासयोग्यार्थाभासदायिनी ।
साऽनुवृत्ताऽस्ति तच्छक्त्या नोक्तदोषोऽवकाशभाक् ॥ ४९ ॥

---

त्याऽवगतेत्याह—"इन्द्र इति" ॥ ४५ ॥ ननु कथमाकारिनिवृत्तावाकारानुवृत्तिरिति तत्राह—"स्यादिति" ॥ ४६ ॥ ननु कोयमाकारो नाम जातिर्वा शक्त्यादिरूपो धर्मो वा सुवर्णकुण्डलादिवदवस्थाविशेषो वा नाद्यौ तयोर्देहादिभ्रमोपादानत्वे अविद्यात्वापाताद् अनुपादानत्वे च उपादानान्तराभावेन देहादिभ्रमोत्पत्त्ययोगात् आत्मान्यत्वेन ज्ञाननिवर्त्यत्वेन चाविद्यातत्कार्यान्यतरत्वावश्यम्भावेनाज्ञाननिवृत्ते स्थित्ययोगाच्च अवस्थावन्तं विना अवस्थायाः स्थित्ययोगादित्याशङ्क्यानेकशक्तिमदविद्यायाः प्रपञ्चे पारमार्थिकत्वादिभ्रमहेतुशक्तेः प्रपञ्चे अर्थक्रियासमर्थत्वसम्पादकशक्तेश्च प्रारब्धकर्मसमकालीनेन तत्त्वसाक्षात्कारेण निवृत्तावप्यपरोक्षप्रतिभासयोग्यार्थाभासजनिकायाः शक्तेरनुवृत्तेः तद्वती अविद्यापि तिष्ठत्येवेति नोक्तदोषावकाश इत्यभिप्रेत्याह—"अनेकशक्तिकेति" त्रिभिः ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥

DR. RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

तच्छक्तिनाशमात्रेण मुक्तोऽयं व्यपदिश्यते ।
अतोऽन्ते सर्वशक्त्याढ्या सर्वाविद्या निवर्तते ॥ ५० ॥
भूयश्चान्ते विश्वमायानिवृत्तिरिति च श्रुतेः ।
अतो लेशानुवृत्तेः स्याज्जीवन्मुक्तिप्रसाधनं ॥ ५१ ॥
यद्वाऽज्ञानस्य या सूक्ष्मावस्था सा लेशशब्दिता ।
तन्नाशेपि न सा नष्टा ततो देहादिकस्थितिः ॥ ५२ ॥
यागे गतेपि यागस्य सूक्ष्मापूर्वं यथेष्यते ।
तथाऽज्ञाने गते सूक्ष्मा देहाद्याभाससाधिका ॥ ५३ ॥
तस्मात्फले प्रवृत्तस्य यागादेः शक्तिमात्रकं ।

---

नन्वविद्यायां सत्यां कथं मुक्त इति व्यपदेश इतिचेत्तत्राह—“ तदिति ” ॥ ५० ॥ ननु लेशस्थितौ कर्मानुवृत्तिः तदनुवृत्तौ च ज्ञानप्रतिबन्धेन लेशस्थितिरित्यन्योन्याश्रय इत्याशङ्क्याह—“ भूय-इति ” । एतदुक्तं भवति न तावज्ज्ञप्तावन्योन्याश्रयः भूयश्चान्ते-इत्यादिश्रुतेरेव लेशानुवृत्तेरवगतत्वात् नापि स्थितौ एककालीनत्वेन दोषाभावादिति तथाच लेशानुवृत्तिपक्षोऽपि साधीयानिति भावः ॥ ५१ ॥ पक्षान्तरेण समाधत्ते—“ यद्वेति ” ॥ ५२ ॥ नियमपूर्वकल्पनापूर्वतन्त्रसिद्धत्वादित्याह—“ यागइति ” ॥ ५३ ॥ तत्र वार्त्तिकवचनमाह—“ तस्मादिति ” ॥ ५४ ॥ तथाच यागे गतेपि यागसूक्ष्मावस्थारूपमपूर्वं यागसाफल्यतानिर्वाहकमङ्गीक्रियते तथा अज्ञाने गतेपि तत्सूक्ष्मावस्थारूपो लेशो देहादिप्रतीत्यनुकूलः



DR. RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

उत्पत्तौ वापि पश्वादेरपूर्वं न ततः पृथक् ॥ ५४ ॥
भाट्टवार्त्तिकरीत्येत्थं निर्वाहसमतोभयोः ।
स्वर्गश्रुतेरिवात्रापि जीवन्मुक्तिश्रुतेर्गतिः ॥५५॥
तावदेव चिरं ह्यस्येत्येवं श्रुत्याऽऽत्मवेदिनः ।
प्रारब्धक्षयतो नान्यत्किञ्चिन्मुक्त्या अपेक्ष्यते ॥ ५६ ॥
भक्तिजेशप्रसादस्य तत्त्वज्ञानोपयोगिता ।
यमेवैष इति श्रौतवाक्यानुसरणं स्मृतेः ॥ ५७ ॥

---

स्वीक्रियते इति भावः ॥ ५४ ॥ स्वर्गजनकताग्राहकश्रुतेरिवात्रापि जीवन्मुक्तिश्रुतेस्तादृगर्थस्वीकारादित्याह— " भाट्टेति " । तथा-चाविद्यालेशानुवृत्त्या जीवन्मुक्तिरुपपन्नतरेति भावः ॥ ५५ ॥

॥ जीवन्मुक्त्युपपत्तिः ॥

नन्वपरोक्षज्ञानिनोऽपि स्वयोग्यपरमानन्दहेतुपरमकाष्ठापन्नभ-क्त्यभावेन तत्साध्यस्य याचकस्येश्वरप्रसादस्याभावेन प्रारब्धकर्मणा संसारानुवृत्तौ जीवन्मुक्ति तद्भावे तु प्रसादस्यापि भावेन निःशेष-दुःखनिवृत्तिविशिष्टस्वतोनीचोच्चभावापन्नस्वरूपानन्दाविर्भावस्वरूपा मुक्तिरित्याशङ्क्याह—" तावदिति " । अस्योत्पन्नात्मतत्वसाक्षा-त्कारस्य प्रारब्धकर्मक्षयमात्रमपेक्षणीयं कैवल्यसम्पत्त्यर्थमिति प्रति-पादनेन ईश्वरप्रसादापेक्षाया वक्तुमशक्यत्वात्स्मृतिपुराणादीनां श्रुत्यविरोधेन स्तुतिपरत्वादिति तात्पर्यार्थः ॥ ५६ ॥ 'यमेवैष वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैष आत्मा विवृणुते तनुं स्वा'मिति भक्तिजन्येश्वर-प्रसादस्यापि तत्साक्षात्कारस्वरूप एवो पयोगस्य बोधितत्वेन स्मृत्या-दीनामपि तदनुसारित्वाद्वैपरीत्येन साध्यसाधनभावे मानाभावा-दित्याशयेनाह—" भक्तिजेति " ॥ ५७ ॥ नापि मुक्तौ उच्चनी-

DR.RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

न मुक्तेस्तारतम्यं वा सर्वत्रैक्यस्वरूपतः ।
उपैति परमं साम्य मित्यैक्ये परसाम्यभाक् ॥ ५८॥
तारतम्यविनिर्मुक्तं पदं कैवल्यमिष्यते ।

---

घभावः तस्य द्वितीयसापेक्षत्वेन तदा ऽसम्भवादित्याह— “ नेति ” । ननु मुक्तावतारतम्यं किं भेदाभावात् उत सत्यपि भेदे तत्साम्यात् नाद्यः श्रुत्या भेदसिद्धेः नान्त्यः साम्यं किं जीवेश्वरयो रुतजीवानामेव नाद्यः तयोर्विभुत्वाणुत्वशेषशेषिभावस्वातन्त्र्यपारतन्त्र्यादिना तारतम्यात् अनेकेश्वरापत्त्या जगत्प्रवृत्त्ययोगात् तद्द्वयतारतम्यप्रतिपादकस्मृतिभिः ‘ज(१)गद्व्यापारवर्जमित्यादि’सूत्रैरुत्कृष्टत्वनिकृष्टत्वग्राहकानुमानैर्विरोधाच्च नान्त्यः जीवान्प्रति शेषिणो लक्षितत्वादित्याशङ्क्य निरस्यति—“ उपैतीति ” । ‘परमं साम्यमुपैतीति’ साम्यश्रुतत्र सातिशयत्वे मुक्तेः स्वर्गादिवदनित्यत्वं स्यात् अधिकदर्शने तु तद्द्वेष्येर्ष्यादिकं च स्यादत ऐक्ये एव सामञ्जस्यमित्यर्थः ॥ ५८॥

ननु कथमैक्यं मुक्तावभिमतं यतो जीवान्प्रति नियामकाद्विष्वक्सेनादितश्च जीवानां निकृष्टत्वं श्रुतं ‘सैषानन्दस्ये’त्यादितैत्तिरीयादिश्रुतिभिः ‘मुक्तानामपि सिद्धानां नारायणपरायण. । सुदुर्लभः प्रशान्तात्मा कोटिष्वपि महामुने’ इत्यादिस्मृतिभिः ‘वृद्धिह्रास(२)भाक्त्वमन्तर्भावादुभयसामञ्जस्यादेव’मित्यादिसूत्रैरुक्तश्रुतितर्कानुगृहीतैरनुमानैर्विरोधाच्च मुक्तौ तारतम्यमेव युक्तमित्याशङ्क्याह—“ तारतम्येति ” । एतदुक्तं भवति भेदाभावेन तारतम्यासिद्धिः यथा च श्रुत्यादेर्न भेदपरत्वं तथा प्रागेव गतं भेदसत्वे अभेदात्मकपरमसाम्याभावात् तत्सत्वे भेदस्यैवाभावात् किञ्च तारतम्याभिधानं परम-

DR. RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

यत्र स्यात्तारतम्यं साऽवान्तरा मुक्तिरीरिता ॥ ५९ ॥
मुक्तस्य ब्रह्मरूपत्वान्न जीवत्वमुपाधिना ।
तत्वज्ञानेन चाज्ञाने नष्टे नासावुपाधिभाक् ॥ ६० ॥
मानुषानन्दमारभ्य ब्रह्मानन्दान्तवर्णने ।

---

मुक्तौ उत ब्रह्मलोकादिवासरूपापरमुक्तौ नाद्यः 'एवं(१)मुक्तिफलानियमस्तदवस्थावधृतेस्तदवस्थावधृते'रिति तृतीयस्येत्याधिकरणे 'ऐहि(२)कमप्यप्रस्तुतप्रतिबन्धे तद्दर्शना'दित्येतत्सूत्रोक्तज्ञानगतैहिकत्वामुष्मिकत्वरूपविशेषवन्मुक्तावपि तारतम्याशङ्का निषेधात् द्वितीयेत्विष्टापत्तिरित्याह—"साऽवान्तरेति" ॥५९॥ ननु मुक्तजीवभोग ईश्वरभोगान्निकृष्टः जीवभोगत्वात् संसारिभोगवत् एवं जीवज्ञानादिकमपि पक्षीकृत्य प्रयोग उहनीय. ईश्वरानन्दो जीवानन्दादुत्कृष्टः तन्नियामकानन्दत्वात् यदेवं तदेवं यथा सेवकानन्दात्सेव्यानन्द. ईश्वरोजीवस्वभावानन्दादिव उत्कृष्टस्वभावानन्दादिमान् तत्प्रप्सुत्वे सति तत्रशक्तत्वात् सोऽप्रप्सुत्वे सति यत्र शक्तः स तत्रान्यथासंमत इत्यादीनि तारतम्यसाधकान्यनुमानानि सन्तीत्याशङ्क्याह—"मुक्तस्येति" । आद्येऽनुमाने मुक्तस्य ब्रह्मरूपतया उपाधिकृतजीवत्वाभावेनाश्रयासिद्धिः स्वरूपासिद्धिश्च द्वितीयाद्यनुमाने जीवेश्वरविभागकाले तारतम्यसाधनं चेत् सिद्धसाधनं तद्भिन्नकाले चेद्वेदोपनीतव्यावृत्तिरिति तात्पर्यार्थः ॥ ६० ॥

'स एको मानुष आनन्दः' इत्यादिश्रुतिभिर्मानुषानन्दमारभ्य ब्रह्मानन्दपर्यन्ते पूर्वपूर्वोत्तरशतगुणत्वरूपतारतम्यमुपाधितारतम्येन वदन्तीभिर्निरुपाधिके स्वरूपानन्दे तारतम्यस्य वक्तुमशक्यत्वान्न मुक्तौ तारतम्यमित्याह—"मानुषानन्दमिति" । एतेन प्रकृता बन्धनिवृत्तिः

---

(१) ब्र० सू० ३।४।५२। (२) ब्र० सू० ३।४।५१।

www.astrology-tantra.com

तारतम्यस्य विश्रान्तिः स्वरूपानंन्द एव हि ॥ ६१ ॥
अविद्याध्वस्तिरप्येका तारतम्यविवर्जिता ।
आनन्दस्य स्वरूपत्वान्न गुणत्वादिकल्पना ॥ ६२ ॥
सुखे वैषयिके यद्धि साधनैस्तारतम्यतः ।
तारतम्यं न तद्ब्रह्मस्वरूपानन्द इष्यते ॥ ६३ ॥
ब्रह्मवित्परमाप्नोतीत्यवाप्तेर्ब्रह्मरूपता ।

---

स्वसजातीयबन्धनिवृत्त्याश्रयप्रतियोगिकतारतम्यवन्निष्ठा बन्धनिवृत्तित्वात् निगडबन्धननिवृत्तिवदिति निरस्तं तारतम्यस्य गुणगतजातित्वेन बन्धनिवृत्त्याश्रयात्मनि वक्तुमशक्यत्वादिति भावः ॥ ६१ ॥ अतएव निवृत्तिगततारतम्यसाधनमपास्तं निवृत्तेर्निरतिशयत्वादित्याह—"अविद्याध्वस्तिरिति"। आनन्दस्य स्वरूपतया उभयवादिसिद्धेन गुणत्वाभावेन तत्रापि तस्य वक्तुमशक्यत्वादित्यर्थः ॥ ६२ ॥ वैषयिकसुखे साधनतारतम्यप्रयुक्ततारतम्ये सत्यपि स्वरूपानन्दे तदभावात् तारतम्यमित्याह—" सुखे " इति ॥६३॥

सायुज्यादिगतमुक्तौ उत्कृष्टत्वव्यपदेशोऽपकृष्टत्वाभावमात्रेण न तु स्वरूपेणेत्याह—" ब्रह्मविदिति "। ननु सायुज्यं नैक्यं 'चन्द्रमसः सायुज्यं सलोकतामाप्नोती'त्यादिश्रुतौ सत्यपि भेदे सायुज्योक्तेः 'सयुजः परमात्मानं प्रविश्य च बहिर्गता'इत्यादौ सयुजां प्रवेशमात्रोक्तेश्च, सयुजोभाव सायुज्यमिति युजशब्देन सम्बन्धमात्रोक्तेः 'सालोक्यमथ सामीप्यं सारूप्यं योग एव चे'ति स्मृतौ सायुज्ये सम्बन्धकवाचकयोगशब्दप्रयोगाच्च तस्मात्सायुज्यं नाम क्षीरनीरवत् अन्यदेहाविष्टग्रहदेवतादिवच्च संश्लेषमात्रं नत्वैक्यमित्याशङ्क्य व्यापकेनेश्वरेण संश्लेषस्य नित्यसिद्धत्वेनापुमर्थत्वात् नचैतल्लोकस्थितस्य जीवस्य लोकान्तरस्थितालौकिकशरीरावच्छिन्नेनेश्वरेण संश्लेष साध्य. 'अत्र ब्रह्म समश्नुत'इतिश्रुतेः उत्क्रमणागमनादिसाध्यब्रह्मलोकावाप्तिवदुपाध्यवच्छिन्नजीवस्यानवच्छिन्नब्रह्म-

DR. RUPNATHJI ( DR. RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com

यथा तथैव ताद्रूप्यं सायुज्यस्यापि सम्मतं ॥ ६४ ॥
सायुज्यस्य विभक्तत्वाभाव एव गिरोदितः ।
नवा सम्बन्धमात्रार्थः सायुज्यमिति शब्दतः ॥ ६५ ॥
श्रोत्रियस्येति वाक्येषु सर्वेष्वानन्दवर्णने ।
अकामहतमुक्तस्यैकत्वेपि सुखमद्वयं ॥ ६६ ॥
अन्तर्भावात्तदानन्दे सर्वानन्दस्य तद्धिया ।
अतो मुक्तिसुखं सर्वतारतम्यविवर्जितं ॥ ६७ ॥

---

भेदरूपपरममुक्तेः पारलौकिकफलत्वाभावात् 'ब्रह्मविदाप्नोति प-र'मित्यादाववाप्तेर्ब्रह्मरूपत्ववत् सायुज्यस्यापि तद्रूपताया अङ्गीकरणीयत्वात् चन्द्रमसः सायुज्यमित्यादौ एकोपाध्यवच्छिन्नस्योपाध्यन्तरावच्छिन्नेनैक्यानुपपत्तिवदत्रानुपपत्तेरभावाच्च तथात्वमित्याह—" अवाप्तेरिति " ॥ ६४ ॥

प्रसिद्धार्थस्वीकारे बाधकस्योक्तत्वात्सायुज्यशब्दस्तावद्विभक्तत्वाभावाभिप्रायक इत्याह—" सायुज्यस्येति " ॥ ६५ ॥ यच्चोत्तरोत्तर शतगुणानन्दप्रकाशकवाक्येषु प्रतिवाक्यं मुक्तावकामहतशब्दप्रयोगात्मानुषानन्दवदकामहतमुक्तानन्देऽपि तारतम्यं तन्नेत्याह—" श्रोत्रियस्येति " । 'एतस्यैवानन्दस्यान्यानि भूतानि मात्रामुपजीवन्तीति' सर्वेषां लौकिकानन्दानां परमानन्दान्तर्भावाभिधानोपपत्तेर्नतु तस्य तस्याकामहतस्य तावानेवानन्द इति येन तत्रापि तारतम्य कल्प्येत तथाच सर्वेषु वाक्येषु अकामहतस्य मुक्तस्यैक्येऽपि तदानन्दे सर्वानन्दानामन्तर्भावात् स एव तस्मिन् तस्मिन् आनन्दे वक्तव्ये परामृश्यते तत्तदिन्द्रादिसाम्येन तस्य सर्वत्राभिधानोपपत्तेर्न तेन तारतम्यशङ्का स्वरूपानन्देऽवकाशं लभते इति श्लोकद्वयतात्पर्यार्थः ॥ ६६ ॥ ६७ ॥

॥ स्वरूपानन्दतारतम्यभङ्गः ॥

DR. RUPAK NATH
www.astrology-tantra.com

न मुक्तिः कर्मणा साध्या न ज्ञानादिसमुच्चयात् ।
मुक्तेरनित्यतापत्तेस्तत्त्वज्ञानेन सा स्वयं ॥ ६८ ॥
ज्ञानादेव भवेन्मुक्तिर्नान्यः पन्था इति श्रुतेः ।
अज्ञानकृतसंसारबन्धो ज्ञानेन बाध्यते ॥ ६९ ॥
मुक्तेर्भक्तिगरीयस्त्वं साधनातिशयस्तुतेः ।

---

ननु मुक्तिः प्रयागमरणादिकर्मसाध्येति मते ज्ञानकर्मसमुच्चयसाध्येति मते च प्रयागमरणादीनां वर्णाश्रमकर्मणां च विषमत्वात् मुक्तसुखं परस्परतारतम्यवर्त्ति न वेत्याशङ्क्याह—"न मुक्ति"रिति । केवलकर्मपक्षे समुच्चयपक्षे च कर्मसाध्यत्वेन मुक्तेरनित्यत्वापत्तेः 'नान्यः पन्था'इति श्रुतिविरोधाच्च ब्रह्मसाक्षात्कारस्य निर्गुणविषयतया गुणविषयत्वस्यैवाभावाच्च तत्र वैषम्यमिति द्वयोस्तात्पर्यार्थः ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ननु 'मुमुक्षोरमुमुक्षुस्तु परश्चैकान्तभक्तिमानित्यादि'स्मृत्या मुमुक्षुभक्तापेक्षया अमुमुक्षोरनन्यभक्तस्याधिक्योक्तेः तदाधिक्यस्य लोकरीतिसिद्धत्वाच्च 'भक्तिः सिद्धेर्गरीयसीति'स्मृत्या कर्मभक्तिसाध्यमुक्त्यपेक्षया अधिकमुक्तिहेतुभक्तेरप्याधिक्योक्तेश्चेत्याशङ्क्याह—" मुक्तेरिति " । तत्रायं भावः फलमनिच्छतो या भक्तिस्तस्यास्तु गरीयस्त्व यत्प्रतिपादितं तत्तत्त्वसाक्षात्कारे त्वरासम्पादकं न तु मुक्तितारतम्याक्षेपकं किं पुनर्ब्राह्मणाः पुण्या इत्यत्र कैमुत्येन च साधनतारतम्येन नसाध्यतारतम्यं विवक्षितं किं तु विलम्बिततरणरूपफलसम्बन्धमात्रपर्यवसानं कैमुत्यस्यापि त्वराफलालाभमात्रेणोपपत्तेः साधनमात्रतारतम्यस्य फलतारतम्याप्रयोजकत्वाच्च न हि दण्डतारतम्येन घटतारतम्यं कचिदपि दृश्यते । ननु 'साधनस्योत्तमत्वेन साध्यमुत्तममाप्नुयुः । ब्रह्मादयः कर्मणैव यथानन्दश्रुतौ श्रुता'इति ब्रह्मानन्दे 'अधिकं तव विज्ञानमधिका च गतिस्तवेति'साक्षान्मोक्षधर्मे च साधनतारतम्येन

DR. RUPNATHJI (DR. RUPAK NATH)
www.astrology-tantra.com

किं पुनर्ब्राह्मणा इत्थं कैमुत्येन तथेष्यते ॥ ७० ॥
ददामि बुद्धियोगं तमित्यत्राऽपि स्वयं हरिः ।
फलं भक्तेः परं ज्ञानं प्राहाज्ञाननिवृत्तये ॥ ७१ ॥
तस्मात्स्वरूपानन्दस्य स्वप्रकाशात्मरूपिणः ।
प्राप्तिर्मुक्तिर्न तत्राऽस्ति तारतम्यं कथञ्चन ॥ ७२ ॥
अद्वैतसिद्धिसिद्धान्तसारोऽयं हरिपादयोः ।
सेवार्थै कृतआनन्दप्रदोऽस्तु सुविचारिणाम् ॥ ७३ ॥
सदानन्दविदा कृष्णपादपद्मरसाशिषा ।
कृतोऽयं सुहृदां भूयात्सदानन्दपदप्रदः ॥ ७४ ॥

इति अद्वैतसिद्धिसिद्धान्तसारसङ्ग्रहे चतुर्थपरिच्छेदः समाप्तः ।

---

साध्ये तदुक्तिरिति चेन्न साधनोत्तमत्वेन साध्योत्तमत्वस्यापरमुक्तिविषयत्वात् विज्ञानात्याधिक्योक्तेरपि साक्षात्कारप्रयोजकसगुणविषयज्ञानपरत्वाच्चेति न कश्चिद्दोष इति ॥ ७० ॥ ७१ ॥

फलितमुपसंहरति— " तस्मादिति " ॥ ७२ ॥

॥ साधनतारतम्येन साध्यतारतम्यभङ्गः ॥

स्वकृतं कर्म भगवत्पदारविन्दे समर्पयति— " अद्वैति " द्वाभ्यां ॥ ७३ ॥ ७४ ॥

यत्कृपालवतोऽप्यज्ञः सारं वेत्ति विचारणात् ।
वेदान्ततज्ज्ञवाक्यानां तं मुकुन्दमहं भजे ॥ १ ॥

इति श्रीश्रीमन्मुकुन्दपदारविन्दमकरन्दरसाभिलाषिश्रीसदानन्दविद्वत्कृते अद्वैतसिद्धिसिद्धान्तसारे मुक्तिनिरूपणं नाम चतुर्थः परिच्छेदः ।

परिसमाप्तश्चायं ग्रन्थः ॥

॥ ॐ तत्सत् ॥

DR.RUPNATHJI( DR.RUPAK NATH )
www.astrology-tantra.com